Peer Reviewed Refereed Journal

अंक : 01 वर्ष : 01 जनवरी-मार्च 2021

साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

www.epradeep.com

ई - प्रदीप

सम्पादक

डॉ. राहुल उठवाल

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

हे मेरे पुत्र, पिता की शिक्षा सुन, और समझ प्राप्त करने में मन लगा। बुद्धि को प्राप्त कर, समझ को भी प्राप्त कर; उन को भूल न जाना, न मेरी बातों को छोड़ना। बुद्धि को न छोड़, वह तेरी रक्षा करेगी; उस से प्रीति रख, वह तेरा पहरा देगी।

नीतिवचन 4:1,5-6, (पवित्र बाइबल)

आगामी अंक अप्रैल-जून 2021

सुहृदय विद्वतजन,

"ई-प्रदीप" त्रैमासिक ऑनलाइन पत्रिका के **आगामी** अंक **अप्रैल-जून 2021** हेतु आपके शोध-आलेख, कहानियां, कविताएँ, पुस्तक समीक्षाएं एवं अन्य विधाओं की रचनाएँ आमंत्रित हैं। कृपा कर अपनी रचनाएँ हिन्दी यूनिकोड फॉण्ट में ही भेजें किसी अन्य फॉण्ट में रचनाएँ स्वीकार नही की जायेगी। अपनी रचना के साथ अपना एक नवीनतम फोटो एवं जीवन परिचय निम्नलिखित मेल आई डी पर अवश्य भेजें - eppatrika@gmail.com

शोध-आलेख भेजने वाले लेखकों के लिए निर्देश :

शोध आलेख निम्न प्रारूप में ही भेजें। **(अंतिम तिथि 10 मई 2021)**

शोध आलेख विषय
नाम, विभाग का नाम, संस्थान का नाम अथवा पता, ई-मेल एवं मोबाइल नंबर
शोध सारांश जो 200 शब्दों से अधिक न हो
बीज शब्द, भूमिका, निष्कर्ष

संदर्भ में लेखक का नाम, प्रकाशन वर्ष, पुस्तक का नाम, प्रकाशन का नाम, प्रकाशन का स्थान अवश्य लिखें। ध्यान रखें कि रचनाएँ पूर्णत: मौलिक हों। पूर्व प्रकाशित रचना यदि अज्ञानतावश प्रकाशित हो जाती है तो उसका पूर्ण उत्तरदायित्व साहित्यकार एवं रचनाकार का होगा।

शोध-पत्र 3000 - 3500 शब्दों से अधिक न हो तथा 200 शब्दों का सारांश भी प्रेषित करें। शोध आलेख ए-4 साइज़ के कागज पर कंप्यूटर से एक ओर यूनिकोड अथवा मंगल फॉण्ट साइज़ 14 में टंकण किया हुआ ही भेजें। भेजते समय शोध पत्र एम एस वर्ड फाइल में सीधे दी गयी ई-मेल आई डी पर डाउनलोड करें, मेल बॉक्स में कॉपी पेस्ट न करें। किसी अन्य फॉण्ट, स्केन, पीडीएफ अथवा मेल बॉक्स में कॉपी पेस्ट कर भेजी गयी रचना किसी भी स्थिति में स्वीकार नहीं की जायेगी। उसके लिए अलग से कोई प्रतिउत्तर भी नहीं दिया जायेगा।

यदि शोध-आलेख एवं भेजी गयी रचना कापीराईट का उल्लंघन करती है अथवा किसी अन्य रचना या पूर्व प्रकाशित रचना का कोई अंश बिना प्रकाशक एवं लेखक की पूर्वानुमति के प्रकाशित हो जाता है तो उसका पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक एवं रचनाकार का होगा। संपादक परोक्ष या अपरोक्ष रूप से इसके लियें उत्तरदायी नही होगा।

कृपया शोध-आलेख भेजने के पूर्व यह सुनिश्चित कर लें कि उसमे व्याकरण एवं मात्राओं की गलतियाँ किसी भी स्थिति न हों।

अपनी रचनाएँ 15 मई तक अवश्य भेज दें। उसके बाद भेजी रचनाएँ स्वीकार नहीं की जायेंगी।

शोध पत्र के प्रकाशन हेतु ई-प्रदीप पत्रिका की वेबसाइ www.epraddep.com पर दिये गये "मौलिकता का प्रमाण-पत्र" (Certification of Originality) डाउनलोड करें एवं उसे पूर्ण भरकर अवश्य भेजें, इसमें शोध-आलेख अन्यत्र न भेजे जाने की पुष्टि की गयी हो। शोध पत्र की सामग्री कहीं से चोरी की गयी (plagiarism) नहीं होनी चाहिए। शोध पत्र में सारणी एवं चित्रों का प्रयोग लेख के बीच में न करते हुए अंत में सन्दर्भ या संलग्नक के रूप में करें।

कृपा लेटेस्ट अपडेट के लिए निम्न लिंक https://chat.whatsapp.com/Gp9fGiJZgvCBqLxyou57xY द्वारा व्हाट्सएप्प समूह एवं टेलीग्राम एप https://t.me/joinchat/HDaPVF1w0YwPGJlo द्वारा जुड़ जाएँ।

www.epradeep.com **ई - प्रदीप** अंक : 01 वर्ष : 01 जनवरी-मार्च 2021

साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

सम्पादकीय समिति

1. **संरक्षक**
   डॉ. डी. एन. शर्मा
   पूर्व प्रचार्य एवं अध्यक्ष (हिन्दी विभाग)
   एम. जी. एम. महा. वि. सम्भल, उ.प्र.

2. **सम्पादक**
   डॉ. राहुल उठवाल

3. **संयुक्त सम्पादक**
   डॉ. प्रवीण चन्द्र बिष्ट
   सहा. प्रोफ़ेसर एवं विभागाध्यक्ष (हिन्दी)
   रामनारायण रुइया स्वा. महा. वि., मुम्बई

4. **सह- सम्पादक**
   डॉ. ईश्वर पवार
   एसो प्रोफ़ेसर एवं विभागाध्यक्ष
   सी टी बोरा महाविद्यालय, शिरूर, महा.

5. **सह- सम्पादक**
   डॉ. नीलम ऋषिकल्प
   एसो. प्रोफ़ेसर (हिन्दी विभाग)
   राम लाल आनन्द महाविद्यालय,
   दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

6. **सह- सम्पादक**
   डॉ. सीमा शर्मा
   एसो. प्रोफ़ेसर (हिन्दी)
   जानकी देवी मेमोरियल कॉलेज,
   दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

7. **मल्टीमिडिया सम्पादक**
   सुधेंदु कोपरगांवकर
   इंदौर, मध्य प्रदेश

पीर रिव्यू समिति

1. **प्रो. नवीन चन्द्र लोहानी**
   विभागाध्यक्ष (हिन्दी)
   चौ.चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ

2. **डॉ. सतीश पाण्डे**
   पूर्व विभागाध्यक्ष (हिन्दी)
   के.जे. सौमया स्वायत्त महाविद्यालय,
   विद्याविहार, मुम्बई
   सम्पादक—समीचीन (यू जी सी केयर
   लिस्टिड जर्नल)

3. **डॉ. महेश 'दिवाकर' (डी. लिट्)**
   साहित्य भूषण से सम्मानित
   पूर्व विभागाध्यक्ष (हिन्दी)
   जी. एस. हिन्दू महाविद्यालय चांदपुर-
   स्याऊ, बिजनौर

4. **डॉ. मुकेश चन्द्र गुप्ता**
   एसो. प्रोफ़ेसर एवं विभागाध्यक्ष
   (हिन्दी)
   एम. एच. महाविद्यालय, मुरादाबाद

5. **प्रो. विजय कुमार रोड़े**
   प्रोफ़ेसर (हिन्दी विभाग)
   सावित्रीबाई फूले विश्वविद्यालय, पुणे

6. **डॉ. अनीता कपूर**
   लेखक / कवि / पत्रकार
   हेवर्ड, कैलिफोर्निया, यू एस ए

7. **डॉ. गंगा प्रसाद शर्मा 'गुणशेखर'**
   साहित्य शिरोमणि
   पूर्व प्रोफ़ेसर (हिन्दी विभाग)
   ग्वांगडोंग यूनिवर्सिटी ऑफ फॉरेन
   स्टडीज, चीन, ग्वांगडोंग, गुआंगझोउ,
   बाईयुन, चीन

8. **श्री. बी. एल. आच्छा**
   पूर्व प्राध्यापक एवं शिक्षाविद्
   उच्च शिक्षा विभाग, मध्य प्रदेश शासन

9. **डॉ. वेदप्रकाश सिंह**
   सहा. प्रोफ़ेसर (हिन्दी विभाग)
   ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

* सभी पद अवैतनिक हैं।

सम्पर्क

ई - प्रदीप पत्रिका ऑनलाइन (त्रैमासिक)

आई - 605, वी.वी.आई.पी. एड्रेसेज़, राजनगर एक्सटेंशन गाजियाबाद, उ. प्र. 201017

दूरध्वनि: 7066508089, **ई-मेल**: eppatrika@gmail.com , info@epradeep.com

पत्रिका शुल्क - ई - प्रदीप पूर्ण रूप से निशुल्क है। यदि आप ई - प्रदीप के प्रकाशन हेतु स्वेछा से आर्थिक सहयोग करना चाहते हैं तो निम्नलिखित बैंक अकाउंट में सहयोग राशि दे सकते हैं- खाता संख्या 436010100229135, आई.एफ.एस.सी UTIB0000436, नाम: Rahul Uthwal/ यू.पी.आई 7066508089@axisbank अथवा फोनपे / गूगलपे / पेटीएम 7066508089

- *ई - प्रदीप से संबंधित किसी भी जानकारी के लिए कृपया ई - प्रदीप के ई - मेल पर मेल करें अथवा दूरभाष पर कार्यालय समय दोपहर 12:00 से संध्या 4:00 बजे तक सम्पर्क करें।*
- *ई - प्रदीप में प्रकाशित की गयी सभी विधाओं की रचनाएँ लेखकों एवं रचनाकारों की मौलिक रचनाएँ हैं। प्रकाशक और सम्पादक किसी भी रूप में इनके लिए उत्तरदायी (जिम्मेदार) नहीं होगा।*
- *प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक, अनुवादक एवं डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी की अनुमति आवश्यक है।*
- *ई - प्रदीप पत्रिका से संबंधित समस्त विवाद चदौसी और लखनऊ न्यायालय के अधीन होगा।*

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

Peer Reviewed Refereed Journal

वीणाधारिणी वीणा की झंकार दो

वाग् देवी नमः तुभ्यं, नमः तुभ्यं महामते !
गृहाण अर्चां पूजां च रक्ष-रक्ष कमलासने !
वीणाधारिणी वीणा की झंकार दो।
सात सुरों से जगती का श्रृंगार हो
दूर हटे मानव-जीवन से अंधियारा
धरती के कौने-कौने तक फैले उजियारा
दिशा-दिशा को वीणा का उपहार दो
वीणाधारिणी वीणा की झंकार दो।
खिले कमल सा स्वच्छ हृदय हो
निर्मल वाणी सदा मधुर हो
ज्ञान दीप प्रत्येक मनुज हो
बनें देव न कोई दनुज हो
उपकारी जीवन का उपहार दो
वीणापाणि वीणा की झंकार दो।
बाल-वृद्ध न कोई रहे अशिक्षित
प्रौढ़ भी बन जायें पूरे शिक्षित
भारत का भविष्य रहे सुरक्षित
नारी का पूरा सम्मान हो
माता इतना वरदान दो
वीणाधारिणी वीणा की झंकार दो।
सात सुरों से जगती का श्रंगार हो
वीणाधारिणी वीणा की झंकार दो।।

डॉ. डी. एन. शर्मा
पूर्व प्रचार्य एवं अध्यक्ष (हिन्दी विभाग)
एम्. जी. एम. महा. वि. सम्भल, उ. प्र.
पूर्व प्रचार्य, बहजोई महा. वि. बहजोई उ.प्र.

मुक्तक

राष्ट्र-मुकुट पर पांव टिकाए आज चीन हुंकार रहा
सीमा पर यों जहर उगलता, तस्कर लो फुंकार रहा।
सिर्फ यही है धर्म शेष अब मातृभूमि के लालों का
कर दें उसका सर्वनाश, जो भारत को ललकार रहा।

प्रश्न पूछती फिरती सबसे, राष्ट्र ध्वजा इस देश की
तुमको ममता मेरी ज्यादा, या अपनी है देह की?
क्या उत्तर दोगे तुम अपनी, आने वाली पीढ़ी को,
अपने जीने की खातिर यदि, मेरी इज्जत बेच दी?

-शैलेश मटियानी

www.epradeep.com
ई - प्रदीप अंक : 01 वर्ष : 01 जनवरी-मार्च 2021
साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

इस अंक में ....

कविताएँ

- भारत का जयगान, क्या करूँ ?, अभियान गीत 06
  शैलेश मटियानी
- ऋषिका श्रद्धा कामायनी..07
  डॉ. सरोज गुप्ता
- समय का पहिया...08
  श्रीमती रत्ना पांडे
- इतनी गहरी खाई न होती...08
  डॉ करुणा पांडे
- पहाड़ उदास है, धान की पौध लड़कियाँ 09
  डॉ गंगा प्रसाद शर्मा 'गुणशेखर'
- माँ नहीं रही, नहीं चाहिए...10
  डॉ. अनीता कपूर
- हाँ मैं हूँ स्त्री, तेरे प्रेम में 11
  गायत्री शर्मा
- अहसास नया...12
  अंकित कुमार मिश्रा
- कोई लौटा दे मेरे बीते हुए दिन..12
  डॉ. शालिनी माहेश्वरी
- अब रोने का मन करता है...13
  अतुल कुमार शर्मा
- नेता की रैली..13
  अंकित कुमार मिश्रा
- माहवारी..14
  डॉ. मंजु पुरी
- देह विमर्श...14
  गोलेन्द्र पटेल
- मायावी - कोरोना...15
  डॉ. परशुराम गणपति मालगे
- नारी तेरे अनेक रूप...15
  सीमा मैंगी
- निर्जन प्रान्त के पेड़, मुख्य अतिथि का गमला..............................16
  पीयूष कुमार
- हथियारघर में हाथ, टूटना...17
  प्रेम रंजन अनिमेष
- अपने हिस्से का फर्ज निभाओ, गम में शामिल हो तो बात बने............18
  शमा परवीन
- सबके घरों में रोशनी एक सी आती नहीं 18
  सलिल सरोज
- स्त्री और समर्पण..19
  जितेन्द्र 'कबीर'
- उम्मीद की उपज..19
  गोलेन्द्र पटेल
- ढहना घर में दीवार पर टंगा सितार 20
  हृदयेश मयंक
- दूसरों का दिल तोड़ते रहिए...20
  सलिल सरोज
- गांधीवाद, ग़ज़ल, वैदिक प्रकाश...21
  योगेश 'सुदर्शन' मिश्र
- सुबह का अखबार...21
  प्रभुनाथ शुक्ल
- दीपशिखा सी जलके, जरूरी क्या है?, देश से बड़ा कौन 22
  पृथ्वी सिंह बैनीवाल

कहानियाँ

- कालापानी..23-24
  कमलेश बख्शी
- तोते वाला कबाड़ी...25-28
  डॉ. कला जोशी
- बट इट्स ए कॉम्प्लिमेंट डियर....................................29-33
  डॉ. रीता दास राम
- मित्रता एक कसौटी...34
  डॉ.सविता सिंह
- इश्क़ वो आतिश है ग़ालिब...35-36
  सुशांत सुप्रिय
- सुरक्षा कवच...37-39
  डॉ. अर्चना दुबे

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

www.epradeep.com

ई - प्रदीप अंक : 01 वर्ष : 01 जनवरी-मार्च 2021

साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

लघु कथाएं

- राजनीति...39
  रन्दी सत्यनारायण राव
- मास्क...40
  डॉ. अनीता कपूर
- भूख का सच, पत्थर और मिडास 41
  डॉ अरुणा दुबलिश
- सड़क की छाती पर कोलतार...42
  सुशांत सुप्रिय

ललित निबन्ध

- हँसी 43-44
  डॉ. सतीश पांडेय

संस्मरण

- तरवाहिया की छांव, बैलगाड़ी की सैर..........................45-48
  डॉ.सविता सिंह

पुस्तक समीक्षा

- दलदल (कहानी संग्रह) 49-50
  सुषमा मुनीन्द्र
- मेरा बाल विज्ञान लोकप्रियकरण....................................51-52
  मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी

व्यंग्य

- आतंकी लेखक, भैया जी रंग रसिया, ...53-55
  रन्दी सत्यनारायण राव
- हे भाय ! तेरे से अच्छा मेरा वाद ! 56
  प्रभुनाथ शुक्ला
- दर्शन का बंटाधार..57-58
  जितेन्द्र 'कबीर'

बाल कविताएँ

- बिल्ली मौसी, जंगल में साक्षरता, दुकान गोलगप्पे की...!.............58
  रन्दी सत्यनारायण राव

शोध आलेख

- राष्ट्र निर्माण में भाषा का महत्व और राजभाषा हिंदी.................59-61
  संगीता रॉय
- साहित्य और हिंदी सिनेमा 52-66
  डॉ. सीमा शर्मा
- महर्षि गर्ग ऋषि ज्योतिष शास्त्र के प्रधान प्रवर्तक एवं श्रीकृष्ण के कुलगुरु 67-68
  सुबेदार रावत गर्ग उण्डू
- जिन्दगी की जंग और सरकारी महकमा.....................................69-70
  इरफान खान
- गद्य साहित्य की सशक्त विधा-निबन्ध......................................71-75
  डॉ. रामस्वरूप

उठो, जागो और तब तक नहीं रुको,
जब तक कि लक्ष्य न प्राप्त हो जाए।

-स्वामी विवेकानंद

सम्पादकीय

पिछले एक वर्ष से पूरी दुनिया कोरोना जैसी महामारी से भयभीत है। जिसके चलते करोड़ों लोग इससे प्रभावित हुए और लाखों इसके शिकार बने। इसने समाज के किसी भी वर्ग के साथ किसी तरह की हमदर्दी नहीं दिखाई ऐसे भयावह दौर में हम लोगों ने सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक व आर्थिक गतिविधियों को लोगों तक पहुंचाने का जिम्मा उठाया है। इस हेतु हमने 'ई-प्रदीप' नामक पत्रिका को प्रारंभ करने की योजना बनाई। ताकि पहले से स्थापित व उभरते साहित्यकारों के विचारों को एक साथ जनसामान्य तक पहुंचाया जा सके।

हम देखते हैं कि आज वैश्विक स्तर पर मनुष्य अनेक मोर्चों पर संघर्ष करने के लिए विवश है। उसे एक तरफ अपनी रोजी रोटी को बचाए रखने की चिंता है तो दूसरी तरफ अपने घर परिवार को समाज के अनुकूल सुविधा उपलब्ध कराने की इच्छा ! मनुष्य आज एक साथ अनेक मोर्चों पर जूझ रहा है। वह घर को घर बनाए रखने के लिए घर से बाहर निकलता तो है लेकिन उसके वापस घर पहुंचने की कोई गारंटी नहीं होती है। ऐसे दौर में व्यक्ति को हताशा और निराशा से बाहर निकालने और उसमें जीवन के प्रति सकारात्मकता सोच को विकसित करने का कार्य साहित्य लगातार करता आया है।

मित्रों, हमने इस 'ई-प्रदीप' ऑनलाइन पत्रिका में साहित्य की प्रत्येक विधा को स्थान देने का निश्चय किया है। इसका प्रमाण हमारे द्वारा प्रकाशित ई-प्रदीप का पहला अंक है। इसमें हमने देश के नामी-गिरामी व उभरते हुए नए साहित्यकारों को एक साथ प्रकाशित किया है। इसका उद्देश्य है कि हमारे पाठक नए और परिपक्व विचारधाराओं से एक साथ परिचित हो सकें। हमने इस अंक में कविता, कहानी, लघु-कहानी, व्यंग्य, संस्मरण, बाल साहित्य व समीक्षा आदि साहित्य की विविध विधाओं को शामिल किया है जो हमारे विविध रुचि वाले पाठकों की ज्ञान पिपासा को शांत करेगा।

हमें आशा है कि हमारा पाठक वर्ग इस पत्रिका में प्रकाशित सामग्री से लाभान्वित होगा। आपकी प्रतिक्रिया हमारे हौसले को बनाए रखने के लिए पर्याप्त होगा। हम आपकी प्रतिक्रिया और इच्छाओं का हृदय से स्वागत करेंगे तथा भविष्य में आपकी रुचि के अनुकूल साहित्य सामग्री उपलब्ध कराने की कोशिश करेंगे ।

अस्तु !

-डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट
संयुक्त सम्पादक

-शैलेश मटियानी

भारत का जयगान

कर चुका कब का दफन आसक्ति को
अश्वगंगा सूखकर तट बन गई।
रूप की भस्मी रचाकर देह में।
आत्मा वीरान मरघट बन गई।
मगर अनजाने किसी की याद में,
थरथरा जाए नयन, तो क्या करूँ,
मन बहुत संन्यस्त है सौंदर्य से,
होंठ कर लें आचमन तो क्या करूँ ?
शाप का हर क्षण कठिन होता नहीं,
व्यथा का तर्पण कठिन होता नहीं।
जिंदगी यदि बहुत ही धुंधली न हो,
मृत्यु का दर्पण मलिन होता नहीं।
मगर खण्डित भावना के बवंडर
धूल से ढक दें गगन, तो क्या करूँ ?
होंठ कर लें आचमन तो क्या करूँ ?
हो गया हूँ विरत इस संसार से,
कर चुका हूँ किनारा हर प्यार से।
शेष जो-कुछ राख भी अनुभूति की
बह चुकी वह भी समय की धार से।
पर किसी के वंदना के मौन स्वर
बांध कर रख दें चरण, तो क्या करूँ ?
होंठ कर लें आचमन, तो क्या करूँ ?
शीश धुनती सांस फिर तो उम्र भर
जन्मते ही मर गई ममता मगर।
हो गई निष्ठुर स्वयं संवेदना,
बन गया मन आत्महंता सहम कर।
अब किसी की दर्द में डूबी नजर
माँगने आए शरण, तो क्या करूँ ?
मन बहुत संन्यस्त है सौंदर्य से ----
होंठ कर लें आचमन तो क्या करूँ ?

क्या करूँ ?

नित नूतन स्वर संधान करें
हम भारत का जयगान करें
उत्तर में तुंग हिमाद्रिशिखर,
दक्षिण में हिंद महासागर
है पश्चिम में मैं पंजाब, पूर्व में
बंगभूमि श्यामल सुंदर
भारत की इस अनुपम छवि का
सुंदरतम दृश्यविधान करें
हम भारत का जयगान करें ।।
आंखों में स्वप्न अनश्वर हों,
हम सुंदर से सुंदरतम हों
गाएं संस्कृति के महाराग
हम भेद-भाव से ऊपर हों।
विज्ञान ज्ञान के अधुनातन
स्रोतों का अनुसंधान करें।
हम भारत का जयगान करें ।।
दिग् दिग् सुगंध अपना भारत
अनवरत छंद अपना भारत
पृथ्वी पर के सब धर्मों का
चिर सेतु बंध अपना भारत
समवेत जनों के कोटि कंठ
जागें तो स्वर्ण विहान करें
हम भारत का जयगान करें ।।

अभियान गीत

अरूढ़ रश्मि रथ पर आया है रवि गगन में
तू झूमता चला जा पंथी नई लगन में !
बढ़ा जा, बढ़ा जा !
बढ़ा जा, बढ़ा जा !
वीरानियां बिछा दी क्यों धूल ने चमन में
फूलों की लाश जाए क्यों शूल के कफ़न में ?
धरा की त्राहि पर क्यों उल्लास है गगन में ?
सौगंध है तुझे, रे, यह भेद भूलना ना !
शोणित बहा है बनकर के स्वेद, भूलना ना !
शोले लिए नयन में
बढ़ा जा, बढ़ा जा !
बढ़ा जा, बढ़ा जा !
तूफान आंधियों का है जोर, तो हुआ क्या ?
घिरती विपद घटाए घनघोर, तो हुआ क्या ?
जो प्रलय काल का सा है शोर, न भूलना, रे
तूफान आंधियों में, हो मस्त झूमना, रे
विश्वास ले चरन में
बढ़ा जा, बढ़ा जा !
बढ़ा जा, बढ़ा जा !
आरूढ़ रश्मि रथ पर आया है रवि गगन में
तू झूमता चला जा पंथी नई लगन में !
बढ़ा जा, बढ़ा जा !
बढ़ा जा, बढ़ा जा !

रमेश चंद्र सिंह मटियानी (शैलेश मटियानी)

जन्म : 14 अक्टूबर 1931, बाड़ेछीना, अल्मोड़ा (उत्तराखंड) 24 अप्रैल 2001 (दिल्ली) में निधन। मटियानी जी के 28 उपन्यास प्रकाशित है तथा 9 उपन्यास अपूर्ण। उनके दो दर्जन से अधिक कहानी संग्रह प्रकाशित हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने साहित्य की अन्य विधाओं में भी पर्याप्त लेखन किया जिनमें लोक साहित्य, बाल साहित्य, एकांकी, काव्य,संस्मरणात्मक रचनाएं आदि शामिल हैं। उन्होंने वैचारिक निबंध एवं लेख तथा विविध पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन व संपादन भी किया था। आधुनिक हिन्दी साहित्य-जगत् में नयी कहानी आन्दोलन के दौर के कहानीकार एवं प्रसिद्ध गद्यकार थे। उन्होंने 'बोरीवली से बोरीबन्दर' तथा 'मुठभेड़', जैसे उपन्यास, चील, अर्धांगिनी जैसी कहानियों के साथ ही अनेक निबंध तथा प्रेरणादायक संस्मरण भी लिखे हैं। उनके हिन्दी साहित्य के प्रति प्रेरणादायक समर्पण व उत्कृष्ट रचनाओं के फलस्वरूप आज भी उत्तराखण्ड सरकार द्वारा उत्तराखण्ड राज्य में पुरस्कार का वितरण होता है।

ऋषिका श्रद्धा कामायनी

-डॉ सरोज गुप्ता

संवित विमर्श की सात्विक प्रतिमा, शिव की अनुग्रह शक्ति,
श्रेष्ठ मूर्धा तत्व स्वरूपा विज्ञानकोश की अन्तिम परिणति।
ऋत् सत्य को धारण करती ऋषिका श्रद्धा कामगोत्रजा---
सात्विक सद्वृत्ति करुणा, प्रेम चिन्मयी शाश्वत ज्योति,
संवित् आनन्दमयी ऋषिका श्रद्धा हृदय की रम्य विभूति।
आह्लादिनी सूर्य-दक्ष-की मानदपुत्री, धर्म-मनु की पत्नी,
शुभ की शुभ्रा माता, मधु किरणों की लोललहर तरंगिनी।
शक्ति स्वरूपा ऋषिका श्रद्धा कामगोत्रजा---

अग्नि समिन्धन कर्मरुपिणी, प्रज्वलित करती दिव्याग्नि,
हविष्य अन्न देवों को देती, भग ऐश्वर्य प्रेरक सेव्य धन मूर्धा।
व्रत से दीक्षा, दीक्षा से दक्षिणा, दक्षिणा से प्राप्त होती श्रद्ध,
तप से होती सत्यप्राप्ति, कर्मकुशलता महाज्योति सी रेखा।
यज्ञमयी ऋषिका श्रद्धा कामगोत्रजा---

आदित्य अग्नि की आहुति से, सोम वृष्टि रेत: बन सृष्टा,
द्युलोक और अन्तरिक्ष में, प्राण यज्ञ की साक्षी श्रद्धा।
सतत् चक्र प्रवाहित होता, पंचाग्नि यज्ञ का मूल है श्रद्धा,
तेजस्वरूपा, सत धारणी, मनोमय चिद् पराशक्ति दिव्या।
विमर्शात्मिका परिणामिनी, ऋषिका श्रद्धा कामगोत्रजा---

इच्छा ज्ञान क्रिया की शक्ति, सत रज तम गुणों को जीती,
मयूरी के अण्डे ज्यों सतरंग छिपाये, परावाक् परमेष्ठिश्रद्धा।
इच्छा ज्ञान क्रिया की शक्ति, सत रज तम गुणों को जीती,
मयूरी के अण्डे ज्यों सतरंग छिपाये, परावाक् परमेष्ठिश्रद्धा।
सत सौभाग्य मुकुट मणि, दृढ़संकल्प हृदय की शक्ति,
सौभाग्य मस्तक पर इठलाती ऐश्वर्य की परादेवी श्रद्धा।
चिन्मयी ऋषिका श्रद्धा कामगोत्रजा---

देने वाले को प्रिय, लेने वाले को प्रिय, चाहे देना श्रेष्ठ वही,
भोजकों और यज्ञ वालों की प्रेरणा, यज्ञ, भोग प्रिय है सही।
शारीरिक दृढ़ता, दृढ़ संकल्प शक्ति, भव्य दिव्यपुरुषार्थी,
कृत कर्म समर्पण, पूर्णकाम, करती अहं विसर्जन मनोन्नयन।
कर्त्तव्य परायणा ऋषिका श्रद्धा कामगोत्रजा---

सत्यमय जीवन, योग और यज्ञ मनोयोग से साधने,
कर्मों में सत्य की प्रतिष्ठा कर, दिव्य जीवन जीने।
तप मंत्र बल से प्रदीप्त दिव्याग्नि को रुपान्तरित कर,
प्रकाश का कल्लोल, मधुकिरणों लोललहर से तरंगायित।
संवित्मयी किरणमयी ऋषिका श्रद्धा कामगोत्रजा---

चिदानंदेच्छा ज्ञान क्रियामयी,शक्तिस्वरूपा प्रत्यभिज्ञा श्रद्धा,
गुरुरुपिणी मनु मार्गदर्शिका, सद्य: शिवप्रसादमयी दीक्षा।
आधिदैविक, आधिभौतिक, आध्यात्मिक यज्ञ सम्पन्ना,
सच्चे मन की संकल्पशक्ति स्तुति से हम पाते श्रद्धा।
मन की संकल्पशक्ति ऋषिका श्रद्धा कामगोत्रजा---

महा ज्योति रेखा सी हृदय की अनुकृति उदार सत्ता,
पूर्णहंता की उपलब्धि भूमा, पथ निदेशिका उन्नायिका।
स्पन्दशीला व्यष्टि से समष्टि की ओर अग्रसर नीलाभा,
विश्व उन्मीलन वैषम्य सृष्टि की विवेकमार्गी मंगल कामना।
अनन्त समुद्र सी स्थिर ऋषिका श्रद्धा कामगोत्रजा---

जहाँ सत्य वहाँ आनन्द, सत्य को धारण करती श्रद्धा,
ऊर्ध्वगामिनी कामायनी कामना का उत्कृष्ट रुप अमला।
समरसता की सर्वव्यापिनी शक्ति प्रेम ज्योति विमला,
आत्मस्थ गुरु प्रकाश विमर्शमयी चिति की आनन्दलीला।
अन्त: स्वअनुभवानन्द गोचरा ऋषिका श्रद्धा कामगोत्रजा --

डॉ सरोज गुप्ता- 20 जुलाई को बड़ागांव, जिल- झांसी में जन्म। पिता श्री स्व. बुद्धिप्रकाश सरावगी इतिहास विशेषज्ञ, मर्मज्ञ विद्वान, धर्म, दर्शन, अध्यात्म में रुचि सम्पन्न। मातृभाषा के साथ बुन्देलखण्ड के साहित्य और संस्कृति के प्रति खासा अनुराग। अपने रचनाकर्म और प्राध्यापकीय कार्य के दौरान राष्ट्रीय सेवा योजना की कार्यक्रम अधिकारी तत्पश्चात राष्ट्रीय कैडेट कोर की कम्पनी कमाण्डर के रुप में बारह वर्षों तक समर्पित भाव से सक्रिय। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, भोपाल व दिल्ली के महत्वपूर्ण माइनर, मेजर प्रोजेक्ट का सफलतापूर्वक निर्वहन। राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय शोध संगोष्ठियों,वेबिनारों में संयोजक, व सचिव के रूप में श्रेष्ठ संयोजन। प्रामाणिक वृहद बुंदेली शब्दकोश- उत्तर प्रदेश भाषा संस्थान लखनऊ द्वारा प्रकाशित। साहित्य मण्डल श्रीनाथद्वारा, बुंदेली वैभव, हिन्दी लेखिका संघ भोपाल, तुलसी मानस प्रतिष्ठान भोपाल, साहित्यांचल भीलवाड़ा सहित कई गरिमामय मंचों से सम्मानित।

सम्प्रति- अध्यक्ष हिन्दी विभाग पं दीनदयाल उपाध्याय शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय सागर म. प्र., पिन - 470001

समय का पहिया

सूर्य एक, चंद्रमा एक, धरती और आकाश भी एक हैं,
सभी इंसानों पर, इन सभी की कृपा दृष्टि भी एक है,

समय भी होता एक, किंतु सबके लिए अलग क्यों है?
किसी का अच्छा, किसी का समय होता बुरा क्यों है?

इंसान के कर्मों का, क्या वह भी लेखा जोखा रखता है,
या न्याय की देवी की तरह ही आँखों को बंद रखता है,

भेद-भाव पूर्ण व्यवहार से, समय भी नहीं बच पाया है,
किसी के हिस्से में सुख, किसी के क्यों दुःख आया है?

समय का पहिया, अपनी गति से निरंतर चलता रहेगा,
जीवन भी सभी का, समय के साथ आगे बढ़ता रहेगा,

श्रीमती रत्ना पांडे
डी/5,शिवनेरी साइटी, वासना ज़कात नाके के पास, अर्थ अर्टिका काम्प्लेक्स के सामने, वासना रोड, वडोदरा (गुजरात)-390007,
ईमेल—
ratna.o.pandey@gmail.com

इतनी गहरी खाई न होती

गर तुमने मुझसे थोड़ी, सी भी प्रीत निभाई होती।
हम दोनों के संबंधों में इतनी गहरी खाई न होती ।।
हम दोनों के बीच मौन का काश नहीं ये व्रत होता,
हर लम्हे का मोलभाव और व्यापार नहीं होता।
दिल का भाव बताने में अक्षर की नीत सजाई होती,
हम दोनों के संबंधों में इतनी गहरी खाई न होती ।।
बंधे हुए आलिंगन में ऐसा अविश्वास नहीं होता,
मन में तेरे नहीं रमा हूँ ये अहसास नहीं होता।
मधुर मिलन के गीतों की मन वीणा न ठुकराई होती,
हम दोनों के संबंधों में इतनी गहरी खाई न होती ।।
साथ नहीं चल पाते हम तुम गर मन में प्यार नहीं होता,
आडम्बर से भरा हुआ अपना संसार नहीं होता।
कभी–कभी वाणी से भी शब्दों की रीत निभाई होती
हम दोनों के संबंधों में इतनी गहरी खाई न होती ।।

डॉ. करुणा पांडे- शिक्षाविद, मनोविज्ञानी, लेखिका बी.एड.विभाग से सेवानिवृत। वह अब पूर्ण रूप से साहित्य और समाज को समर्पित हैं। प्रकाशन– यथार्थ की चादर, अंतहीन तलाश और मंडी उपन्यास, वक्त की करवटें, कोहरे में किलकारी, उपकार का दंश, अधूरा कैनवास, अँधेरे में खिली धूप -कहानी संग्रह, जिज्ञासु बच्चे, और चम्पा जीत गयी, गुरु दक्षिण- बाल कहानी संग्रह, दोहा संग्रह, अभिनव संग्रह, जिन्दगी मूक सबकी कहानी रही, संवेदना से वेदना तक कविता संग्रह, एक निबंध संग्रह, एक रेखाचित्र, रामचरितमानस पर शोधग्रन्थ, विलोम शब्द कोष, एक बच्चे की डायरी -मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, उत्तराखंड के संस्कार गीतों पर पुस्तक, उत्तराखंड की लोक कला– एपण, उत्तराखंड की लोककथायें, विलुप्त होते उत्तराखंड के लोकगीतों पर पुस्तक, धृतराष्ट्र के झरोखों से (लघु कथा संग्रह), जगद्गुरु आदि शंकराचार्य, चुलबुला बचपन बाल गीत सात पुस्तकों का सम्पादन। निरंतर पत्र पत्रिकाओं में लेखन, दूरदर्शन और आकाशवाणी से सम्बद्ध । अनेक राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सम्मानों से अलंकृत। **निवास-** 2/62-सी, विशालखंड, गोमतीनगर, लखनऊ 226010, **ईमेल** : karunapande15@gmail.com

एक अच्छी शिक्षा बेहतर भविष्य की नींव है।

पहाड़ उदास है

जब से
काट लिए गए हैं
चोरी-चोरी
उसके हाथ-पाँव
चीड़ और देवदार
पहाड़
बहुत डरा-डरा रहता है
लुप्त हो गया है
उसके भीतर का
गीत-संगीत
उड़ गए हैं उसके
रागों के सारे पक्षी
उदास-उदास रहता है
इन दिनों
किसको दिखाए कि
हो गया है
पूरा अपंग अचल
कि अब नहीं
सहा जाता कुल्हाड़ी के
हल्के से वार का भी दर्द
सुबह-सुबह
जैसे ही नींद टूटती है
ओस से नहाई
देह से
कनेर के फूल-सा
पीला-पीला चेहरा लिए
अपने नेत्रों के
निर्झर से
चढ़ाने लगता है जल
सूर्य देवता को
बीच-बीच में उभरे
पत्थरों के अधरों के
मध्य के विवरों से
फूटते मंत्रोच्चारों के साथ
करता रहता है प्रार्थनाएँ

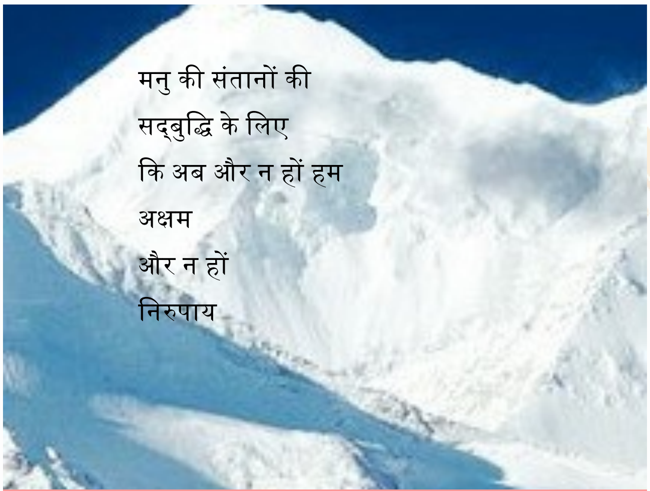

डॉ गंगा प्रसाद शर्मा 'गुणशेखर'

समशेर नगर, डाक बहादुर गंज, जनपद -सीतापुर के निवासी हैं। उन्होंने अपनी उच्च शिक्षा लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ से प्राप्त की है इसके अतिरिक्त उन्होंने शैक्षणिक अनुभव और शैक्षणिक उपयोगिता की पुस्तकों का लेखन किया है। उनके द्वारा 30 वर्षों से अधिक का अध्यापन अनुभव अधिकतर हिंदीतर भाषी और विदेशी विद्यार्थियों को हिंदी भाषा और साहित्य का शिक्षण ऐन इंट्रोडक्टरी हिंदी रीडर (हिंदीतर भाषियों और विदेशियों को हिंदी सिखाने की रूप साम्य पद्धति पर तैयार की गई अब तक की इकलौती सरलतम पुस्तक) संक्षिप्त व्यवहारिक शब्दावली (शब्दकोश) स्त्रीलिंग शब्द माला हिंदी (शब्दकोश), हिंदी क्रियाओं के बहुसंदर्भी प्रयोग,हिंदी में लिंग निर्धारण आदि विषयों पर कार्य किया है। **विस्तृत विवरण के लिए ई-प्रदीप की वेबसाइट www.epradeep.com पर भ्रमण करें।**

धान की पौध लड़कियाँ

जड़ से
उखाड़ ली जाती हैं
मूठी बनाकर
फेंक दी जाती हैं
कीचड़ में
फिर रोप दी जाती हैं
किसी दूसरे खेत की
अपरिचित माटी में
कभी-कभार
कुछ पलों के लिए
मुरझा भले जाती हैं
फिर आनन-फानन में
तनकर खड़ी भी हो जाती हैं
अपने आप मुटाती हैं
लहलहाती हैं
धन धान्य से भर देती हैं घर
ऐसे जीवट वाली होती हैं ये
धान की पौध लड़कियां!

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

डॉ . अनीता कपूर

माँ नहीं रही

माँ तो गई
अब मकान भी पिता को
अचरज से देखता है
मानो संग्रहालय होने से डरता है
उसने खंडहरों में तब्दील होते
मुहल्ले के कई मकानों को देखा है

माँ तो चली गयी
अब मकान खुद ही
ढहने लगा है
उसे मंज़ूर है खुद का बिलखना

पर वो पिता को ढहते नहीं देख पाएगा
भाई अब तो पिता को ले जाएगा

माँ नहीं रही
कौन उठाये खिलाये
रातों को चाँद दिखा
बीती पूर्णमासियों को जिलाये
अब तो बस हर रात अमावस्या हुई

माँ इस घर से गई
घर खड़ा है
रहने वाले बिखर गए
बेटियाँ वापस ससुराल गयीं
भाई ने कहा
बेचो इसे
पिता हठ में

यादों की ईंटें
मेहनत कमाई से
मैंने बनाया
यहीं है रहना अंत तक
असमंजस में हम सब
माँ तो चली गई
बच्चे इस मज़बूत दुकान को
मॉल की छोटी छोटी दुकानों में
बंटना नहीं देखना चाहते
इसलिए मज़बूत दुकान को
भाई ले गया
और माँ की तुलसी
माँ के कमरे की दीवार की ख़ुरचन
मैं विदेश ले आयी हूँ
आज माँ मेरे साथ है

तसल्ली है दुकान आज भी है

नहीं चाहिए

अब
तुम्हारे झूठे आश्वासन
मेरे घर के आँगन में फूल नहीं खिला सकते
चाँद नहीं उगा सकते
मेरे घर की दीवार की ईंट भी नहीं बन सकते
अब
तुम्हारे वो सपने
मुझे सतरंगी इंद्रधनुष नहीं दिखा सकते
जिसका न शुरू मालूम है न कोई अंत
अब

तुम मुझे काँच के बुत की तरह
अपने अंदर सजाकर तोड़ नहीं सकते

मैंने तुम्हारे अंदर के अँधेरों को
सूँघ लिया है
टटोल लिया है
उस सच को भी
अपनी सार्थकता को
अपने निजत्व को भी
जान लिया है अपने अर्थों को भी
मुझे पता है अब तुम नहीं लौटोगे
मुझे इस रूप में नहीं सहोगे
तुम्हें तो आदत है
सदियों से चीर हरण करने की
अग्नि परीक्षा लेते रहने की
खूँटे से बँधी मेमनी अब मैं नहीं
बहुत दिखा दिया तुमने
और देख लिया मैंने
मेरे हिस्से के सूरज को
अपनी हथेलियों की ओट से
छुपाए रखा तुमने
मैं तुम्हारे अहं के लाक्षागृह में

खंडित इतिहास की कोई मूर्त्ति नहीं हूँ
नहीं चाहिए मुझे अपनी आँखों पर
तुम्हारा चश्मा
अब मैं अपना कोई छोर तुम्हें नहीं पकड़ाऊँगी
मैंने भी अब
सीख लिया है
शिव के धनुष को
तोड़ना

डॉ. अनीता कपूर
लेखक / कवि / पत्रकार
हेवर्ड, कैलिफोर्निया, यू एस ए
"बे-एरिया इमिग्रेशन एवं लीगल सर्विसेस" के लिए अनुवादिका का कार्य करना और ज्योतिष नाड़ी और वैदिक ज्योतिष / हस्तरेखा / टैरो / वास्तु ज्योतिष विद्या में निरंतर लेखन एवं प्रकाशन / और सम्मान प्राप्त।
अध्यक्ष: "विश्व हिंदी संस्थान कनाडा", कैलिफोर्निया शाखा, आध्यात्मिक संस्था "Divine Rhythm of Soul" के माध्यम से मेडीटेशन के आयोजन करवाना, "ग्लोबल हिन्दी ज्योति" की संस्थापिका, "ग्लोबल हिन्दी ज्योति" द्वारा समय- समय पर काव्य -संध्या और अन्य कार्यक्रम आयोजित करवाना।

हाँ मैं हूँ स्त्री

हाँ मैं हूँ स्त्री,
मुझे हैं इसका अभिमान।
सतित्व के लिए अहिल्या बनी,
मान के लिए बनी मैं सीता।
प्रेम मैं राधा बनी,
तो स्वाभिमान में बनी मैं द्रोपदी।
आई मध्यम काल में तो,
बन लक्ष्मी भारत की लाज़ बचाई।
रीत की कड़ियां तोड़ रजिया तो,
ममत्व में मरियम कहलाई।
मदर टेरेसा बन की जग की सेवा,
तो आधुनिकता में इंद्रा कहलाई।
कल्पना बन अंतरिक्ष गई तो,
बन किरण धरती की आबरू बचाई।
हाँ मैं हूँ स्त्री,
मुझे हैं इसका अभिमान।
वक्त बेवक्त बन सिंधू, सुनीता, सानिया, मिताली,
चन्दा, मैरीकॉम....देश की प्रतिष्ठा बढ़ाई।
हाँ मैं हूँ स्त्री,
मुझे हैं इसका अभिमान।
नहीं बराबर पुरुषों के मैं..
क्योंकि उनसे कई ज्यादा हूँ महान।
भक्ति में हूँ मीरा, वात्सल्य में जसोदा
तो शक्ति में दुर्गा हूँ मैं।
हाँ मैं हूँ स्त्री,
मुझे हैं इसका अभिमान।
हाँ मैं हूँ स्त्री,
मुझे हैं इसका अभिमान।।

तेरे प्रेम में

प्रेम की पराकाष्ठा थी राधा, तो मीरा श्रद्धा की देवी बनी।
बनी रुकमणी जीवन संगिनी, तो द्रोपदी सखी रही।
हे कृष्ण तेरे प्रेम के अजीब पराग,
बनी कोई सत्यभामा, तो कोई जामवंती बनी।
श्रद्धा के फूल चढ़े रसखान के हाथ,
तो दीवाने सूरदास बने।
बने हो अर्जुन के सारथी तो,
नरसी मेहता के आधार बने।
कभी कराई जग हंसाई,
तो कभी प्राण आधार बने।
प्रेम भक्ति और श्रद्धा के अंतर में,
ना जाने कितने भक्त महान बने।
हे कृष्ण तेरे प्रेम में कोई परमानंद,
तो कोई कुंभन दास बने।
मोर-मुकुट से पैर की पायल के बखान बने।
होठों की कंपन से मुरली की तान बने।
काली-कमली और श्यामवर्ण से तिरछे नैनों के मस्तान बने।
चक्र, गदा, शंख धारण किए,
दुष्टों के संहार बने।
जय-विजय, द्रुपद-जरासंध के प्राणोंद्धार बने।
हे कृष्ण तेरी अद्भुत लीला को देख कितने नंददास बने।
कही चैतन्य महाप्रभु तो कहीं चतुर्भुजदास बने।

गायत्री शर्मा

आप हिंदी अध्यापिका के रूप में कार्यरत हैं। सामना पत्रिका में आपकी कविताओं का लगातार प्रकाशन हो रहा हैं। कई कविता प्रतियोगिताओं और भाषण प्रतियोगिताओ में आप समय समय पर पुरस्कृत होती रहीं है। आपकी रचनाओं में स्त्री के विभिन्न रूप देखने को मिलते है। साथ ही आपकी कविताओं में कृष्ण प्रेम की झलक देखने को मिलती है।

सिखाने से ज्यादा अच्छा, सिखने की इच्छा पैदा करना है।

अहसास नया

नारी पर क्या लेख लिखूँ मैं, कलम की स्याही नारी है।
वन - उपवन को शोभित करती, नारी ही वह क्यारी है।।
वीरों को अंक खिलाकर जिसने, रण कौशल सिखला डाला।
वो नारी ही थी जिसने दुर्गा, बन संसार हिला डाला।। 1 ।।

नारी की क्या बात कहूँ मैं, वो खुद साहित्य की सागर है।
कुछ शब्दों में बचा हुआ जो, नर बूँदों का गागर है ।।
नारी दुर्गा, नारी काली, नारी ही अतुलित बलशाली।
एक नयन गर तेज से भर दे, वसुधा डगमग कर डाली।। 2 ।।

हे जाग - जाग तू दुर्गा थी, तू क्यों बल को खोती है।
तूने संसार हँसाया है, तू बैठ ओट क्यूँ रोती है।।
तू तेज़ भर, तू ताप कर, अपने अधिकार को आप कर।
तू वसुधा है, तू गंगा है, तू रूप बदल सब भाँपकर।। 3 ।।

सत्तावन में प्रलय किया जो, एक अकेली नारी थी।
जनम से सबल नहीं थी वह भी, उस पर भी आपद भारी थी।।
उसने ख़ुद को जब जान लिया, मन में पुरुषारथ ठान लिया।
हर नारी में एक दुर्गा है, उस दुश्मन ने भी मान लिया।। 4 ।।

दुर्गावती, अवंतीबाई, निज दम पर सम्राज्य लिया।
नारी अबला घर बैठेगी, इन सब भेद को त्याज्य दिया।।
कौन रुला सकता है तुझको, तूने जगत हँसाया है।
क्यूँ भूल रही तू बल को अपने, तूने जगत बसाया है।। 5 ।।

हे जाग - जाग तू जगदम्बे, तू शारद है तू सीता है।
वसुधा क़े कण-कण में बसती, तू गंगा तू गीता है।।
उठ जाग तेज बल पौरुष से, रच डाल एक इतिहास नया।
निज भुज बल क़े प्रबल वेग से, फूँक डाल अहसास नया ।। 6 ।।

अंकित कुमार मिश्रा
बी एस सी, डिप्लोमा इन डॉयरेक्शन,
सतना , एम. पी.

कोई लौटा दे मेरे बीते हुए दिन

कोई लौटा दे मेरा बचपन, फिर से माँ के आँचल में छिप जाऊँ।
माँ की लोरी को सुनकर, मधुर स्वप्न में खो जाऊँ।
तितली बनकर घूमू बेफिक्र होकर, मनमौजी कहलाऊँ।
पापा की उँगली पकड़कर, कठिन रास्तों पर चढ़ जाऊँ।
भैया के कंधे पर सिर रखकर, पापा की डाँट से बच जाऊँ।
स्कूल पहुँचकर मित्र मंडली संग, मिलकर धमा-चैकड़ी मैं मचाऊँ।
गैरों की शादी में सेल्फी ले लूँ, अपनी शादी की सुनकर शरमाऊँ।
हर सण्डे पिकनिक पर जाकर, दोस्तों संग गप-शप लगाऊँ।
कक्षा बंक करके, दोस्तों संग में मूवी जाऊँ।
खूब करूँ मैं शॉपिंग, जेब खाली करके आऊँ।
टिकिया, चाट, पकौड़ी देखकर, मन ही मन ललचाऊँ।
बारिश में भीगकर झूम-नाचूँ, मदमस्त मयूर मैं बन जाऊँ।
माँ के बुलाने पर अभी आती हूँ, कहकर घंटा घुमाऊँ।
ननिहाल जाने की सुनकर, खिलकर गुलाब मैं बन जाऊँ।
परीक्षा परिणाम आने के दिन, मम्मी-पापा के दिल की धड़कन बन जाऊँ।
पढ़ लिखकर बड़ी अफसर बनूँ, मम्मी-पापा की रानी बिटिया कहलाऊँ।
उन्मुक्त उड़ूँ आसमाँ में पंछी बनकर, सतरंगी पंख फैलाऊँ।
पूरे करूँ मैं सपने अपने, देश के मस्तक का गौरव बन जाऊँ।
ऐसा नाम करूँ मैं रोशन, इतिहास में अमर हो जाऊँ।
टिम-टिम करके चमकूँ आसमान में, ध्रुवतारा मैं बन जाऊँ।

डॉ. शालिनी माहेश्वरी
166, पदमपुरी कालोनी सोंख रोड
मथुरा उ. प्र. , पिन कोड - 281001
ई-मेलः talk2shalini2016@gmail.com

ज्ञान तभी शक्ति बनता है जब हम इसे उपयोग में लाते हैं।

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

अब रोने का मन करता है

भाई-भाई की लड़ाई देखकर,
सूनी-सूनी सी कढ़ाही देखकर,
चूल्हे की बुझी आग देखकर,
मंद पड़े राग देखकर,
ढके बदन को खुला देखकर,
समाज की ये चला देखकर,
रजाई ओढ़ सोने का मन करता है।
हाँ! मेरा अब रोने का मन करता है।।
पीपल का राज जाता देखकर,
बाज, चिड़िया को खाता देखकर,
सत्ता की सियासत देखकर,
बूढ़ों की विरासत देखकर,
निर्दोषों को पिटता देखकर,
देश अपनों से लुटता देखकर,
मंगल पांडे होने का मन करता है।
हाँ! मेरा अब रोने का मन करता है।।
रक्तरंजित अखबार देखकर,
कुसंस्कारी घर-बार देखकर,
भाग दौड़ और आपाधापी देखकर,
पुजता हुआ पापी देखकर,
माँ को कराहता देखकर,
सिसकियों में भी ठहाका देखकर,
मैली चादर धोने का मन करता है।
हाँ ! मेरा अब रोने का मन करता है।।
किसान का बढ़ता कर्ज देखकर,
भ्रष्टाचार का उड़ता मर्ज देखकर,
उजड़ती हुई चौपालें देखकर,
जयचंदों की चालें देखकर,
पीली पड़ती हरियाली देखकर,
बेईमानों की खुशहाली देखकर,
संस्कारों को बोने का मन करता है।
हाँ ! मेरा अब रोने का मन करता है।।

अतुल कुमार शर्मा
शिक्षा: स्नातकोत्तर- अंग्रेजी, शिक्षाशास्त्र, समाजशास्त्र, बी.एड., विशिष्ट बी.टी.सी, आई जी डी कला।
संपर्क : प्रेमशंकर वाटिका के सामने, बरेली सराय,सम्भल, उत्तर प्रदेश
सम्पर्क-8273011742
सम्प्रति : स्वतंत्र लेखन, सामाजिक सेवा में :
अध्यक्ष- संस्कार भारती, नगर सम्भल।
महामंत्री- मानवाधिकार एवं सामाजिक सुरक्षा प्रहरी, सम्भल।

नेता की रैली

रैली नेता की हुई, जब लीला मैदान,
खूब जोर औ शोर से, हुआ घोर ऐलान।
हुआ घोर ऐलान, लगे थे पर्चा भारी ,
जगह - जगह थे लोग, कर रहे चर्चा भारी।
जो सुनने था गया, मिले नोटों की थैली,
जाएँ बहुत से लोग, जहाँ नेता की रैली।। 1 ।।

नेता जी जब मंच पे आये, हो गए मंचासीन।
नेताजी के वंदन में, महफ़िल थी रंगीन ।।
महफ़िल थी रंगीन, जमा थी भीड़ वहाँ पे।
क्या बोलेंगे नेताजी, सब लोग थे ताके ।।
माइक पे नेताजी आये, ज्यों खड़ा हो आके अभिनेता।
बोलन लागे बोल, तुनक कलियुग के नेता ।। 2 ।।

तभी एक मतदाता बोला, हुआ न एक भी काम।
आप हो चुके मंत्री जी, पर बढ़ा न एक भी नाम ।।
बढ़ा न एक भी नाम, न बनी सड़कें नाली।
पड़ें हुए हैं खेत, बिना बीजों के खाली।।
कुरसी अपनी छोड़ यहाँ पे, आया करिये कभी - कभी।
होगा कोई काम अगर, तो जीतेंगे इस बार तभी ।। 3।।

अंकित कुमार मिश्रा
बी एस सी, डिप्लोमा इन डॉयरेक्शन,
सतना , एम. पी.
दूरध्वनी: 9340324377,8518920073

शिक्षा अपने आप को या अपने आत्मविश्वास को खोए बिना लगभग कुछ भी सुनने की क्षमता है।

माहवारी

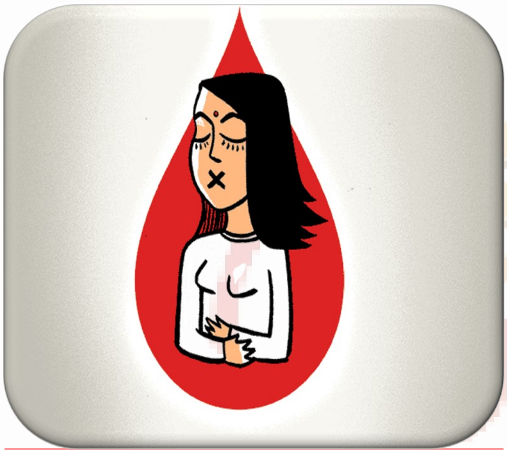

माहवारी, क्या कहाँ
माहवारी... शशशश.....
शर्म करो, चुप रहो
माँ बाप ने कुछ सिखाया नहीं
अरे औरत हो, मर्द बनने की
कोशिश मत करो।
हर महीने के दर्द के लिये
घर की शांति भंग मत करो
दर्द है, तो सहना सीखो
सहना ही है तुम्हारी तक़दीर
इस दर्द से क्या घर का काम
बंद हो जाएगा ???
सुबह की चाय !
दोपहर का खाना !
शाम की चाय !
रात का खाना !
इसका क्या होगा ??
दवाई खायो या नानी का नुस्खा
आजमाओ
पर मुझे इस रोने धोने से छुटकारा
दिलाओ
तुमने तो बस घर में ही रहना है
मुझे देखो, इस घर के लिये रात -दिन
एक करना है
बोली कुछ नहीं, पर मन ने ये सोचा
शायद, कभी तुमने भी मेरे दर्द को
समझा होता
सूखी आँखों के किनारे की नमी को महसूस किया
होता
शायद.......
शायद, तुमने कभी अपने अस्तित्व
और
इस दर्द के रिश्ते को भी जाना होता
पत्नी, बच्चा पैदा करने की मशीन नहीं
हमसफ़र, हमदर्द भी होती है
पढ़ी लिखी हो या अनपढ़
अपनेपन, प्यार की भी हक़दार होती है
क्या चाहती है वो
अपने अर्धांग से
थोड़ा सा प्यार
मान-सम्मान !!
बस.... और क्या
अच्छा सुनो
अब बहुत हो गया
दर्द...... दर्द
चलो गरमगरम चाय बना देना
कुछ दोस्त आएंगे मेरे
आज...... शाम !

डॉ मंजु पुरी
सहायक आचार्य (हिंदी)
हिमाचल प्रदेश विश्व विद्यालय, समर हिल, शिमला, **शिक्षा** - स्नातकोत्तर हिंदी, एम. फिल, नेट, पी-एच.डी, वर्तमान में उनके निर्देशन में 04 में पी-एच.डी. एवं 03 एम. फिल शोध कार्य जारी हैं। के अनेक अनेक जर्नल व पत्र पत्रिकाओं में शोध –

देह विमर्श

जब
स्त्री होती है
गर्भ में सृष्टि
तब
परिवार का पुरुषत्व
उसे श्रद्धा के पलकों पर
धर
धरती का सारा सुख देना चाहता है
घर;

एक कविता
जो बंजर जमीन और सूखी नदी का है
समय की समीक्षा-- 'शरीर-विमर्श'
सतीत्व के संकेत
सत्य को भूल
उसे बाँझ की संज्ञा दी।

-गोलेन्द्र पटेल

गोलेन्द्र पटेल
ग्राम- खजूरगाँव, पोस्ट- साहुपुरी, जिला- चंदौली, उत्तर प्रदेश, भारत 221009, छात्र: काशी हिंदू विश्वविद्यालय (हिंदी आनर्स),
सम्पर्क : 8429249326,
ई-मेल : corojivi@gmail.com

ज्ञान का निवेश सर्वोत्तम भुगतान करता है।" -बेंजामिन फ्रैंकलिन

मायावी - कोरोना

दिखता नहीं है वह मायावी,
छिप-छिपकर करता है, शैतानी।
सके सामने, बम–बारूद, तलवार आदि व्यर्थ है,
तंत्र-मंत्र, होम-हवन सब कुछ पस्त हैं।
यदि करना ही है हमें उसे परास्त,
तो, घर में ही रहना होगा अपनों के साथ।
आकस्मिक छिडी इस जंग में हम सब योद्धा हैं,
संयम और समझदारी से हमें लडना हैं।
शत्रु बहुत ही शातिर हैं,
पर, हम भी कुछ कम नहीं हैं।
ना शत्रु दिखता है, ना सरहद पर जाना हैं,
यह जंग कुछ अजीब जरूर है,
बाहर न जाकर घर में ही रहकर,
शारीरिक अंतर के साथ उसे हमें हराना हैं।
देश के लिए, मानवता के लिए कर तन-मन-धन समर्पित,
लडना है हमें क्योंकि, इसी में है देश और हमारा हित।

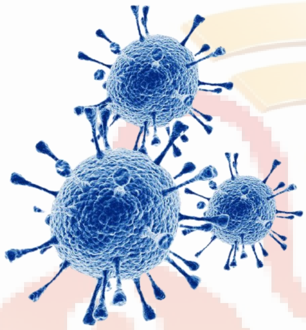

डॉ. परशुराम गणपति मालगे

शैक्षणिक योग्यता : एम.ए, पी.एच.डी, एस.एल.ई.टी, बी.एड, डिप्लोमा इन अंबेड्कर स्टडीज, **सम्प्रति**: बेसंट महिला महाविद्यालय–मंगलूरु, कर्नाटक में हिन्दी भाषा के सहायक प्राध्यापक। हिन्दी और कन्नड में कविता लेखन। विविध विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के लिए अध्ययन सामग्री की तैयारी। राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय साहित्यिक पुस्तकों में 20 से भी अधिक शोध आलेख प्रस्तुति, राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठियों में 30 से भी अधिक शोध आलेख प्रस्तुति। विभिन्न संस्थाओं में अतिथि के रूप में वक्तव्य एवं भाषण। दक्षिण कन्नड जिला प्रशासन (कर्नाटक) के साथ कोविड-19 के संदर्भ में एक महिने तक बी.आर.सी (Border rescue Committee) के सदस्य। मंगलूरु रेलवे जंक्शन में और एक महिने तक Ambulance Control Room में सदस्य के रूप में कुल दो माह तक Honorary जिम्मेदारी

नारी तेरे अनेक रूप

नारी लक्ष्मी का रूप हो तुम,
नारी सरस्वती का स्वरुप हो तुम।
बढ़ जाये जब अत्याचार तुम पर,
दुर्गा-काली का रूप हो तुम।।

नारी खुशियों का संसार हो तुम,
नारी प्रेम का आगार हो तुम ।
जो घर आँगन को रोशन करती,
नारी सूरज की सुनहरी किरण हो तुम।।

नारी ममता का सम्मान हो तुम,
नारी संस्कारों की जान हो तुम।
स्नेह, प्यार और त्याग की नारी,
सच्ची, इकलौती पहचान हो तुम।।

नारी कभी कोमल फूल गुलाब हो तुम,
नारी कभी शक्ति का अवतार हो तुम।
तेरे रूप अनेक नारी,
ईश्वर का चमत्कार हो तुम।।"

सीमा मैंगी

(एम.ए., बी.एड, एम.फिल) एच. ओ. डी. ऑफ़ हिंदी डिपार्टमेंट ए. एंड. एम. जैम्स कैम्ब्रिज इंटरनेशन स्कूल, पठानकोट, ईमेल: seemamaingi-1984@gmail.com

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

निर्जन प्रान्त के पेड़

बस्ती से दूर
इस निर्जन प्रान्त में
इन पेड़ों को
पानी देने वाला कौन है?
यहाँ दूर-दूर तक
दिखाई नहीं देता
कोई जानवर भी,
हाँ थोड़ा-बहुत
पक्षियों का शोर
ज़रूर सुनाई देता है
पानी का कोई
स्रोत भी नहीं।
फिर भी ये
इतने हरे-भरे
औ' प्रसन्नचित्त
कैसे हैं?
इनके आसपास के
छोटे-छोटे हरे पौधे भी
हवा से हाथ मिला
ज़ाहिर कर रहे हैं
अपनी ख़ुशी;
इन पर बैठने वाले
पक्षी भी
गाते हैं
अपना मीठा गान।
जुड़े हैं अपनी ज़मीन से।
ये इतने–
बिना पानी के हरे-भरे
सबको प्रसन्न रखने वाले
सबको आश्रय देने वाले
ये इतने–
बिना पानी के हरे-भरे
सबको प्रसन्न रखने वाले
सबको आश्रय देने वाले
शायद इसलिए हैं
कि ये बहुत गहराई तक
जुड़े हैं अपनी ज़मीन से।

पीयूष कुमार

जन्म : 07 जुलाई, 1996 फ़तेहपुर (उ.प्र.) स्नातक और परास्नातक (हिंदी), एम. फिल., पी-एच.डी.(शोधार्थी) उर्दू, मलयालम और योग में डिप्लोमा और अनुवाद में पी.जी. डिप्लोमा एवं एकल विषय (संस्कृत) में स्नातक। अनेक पत्रिकाओं में कविताएँ, पत्र और शोधलेख प्रकाशित। कई संपादित पुस्तकों में शोधपत्रों का प्रकाशन। विभिन्न काव्य-गोष्ठियों और कवि-सम्मेलनों में कविता-पाठ और ग़ज़ल-गायन कई राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनारों व वेबिनारों में शोधपत्र का वाचन और सहभागिता।

मुख्य अतिथि का गमला

महाविद्यालय में होना था
पर्यावरण पर कार्यक्रम
मुख्य अतिथि को देने के लिए
उखाड़ा गया एक पौधा
जिसे प्लास्टिक के छोटे-से गमले में
किया गया रोपित
गमले में चस्पा था
हरियाली भरा छोटा-सा पोस्टर।
कार्यक्रम में प्रकट की गईं
पर्यावरणीय चिन्ताएँ
बिसलेरी का पानी पीकर
की गयी जल-संकट पर बात
वैश्विक ऊष्णता और वनों की कटाई
आदि तमाम विचारणीय चिन्ताएँ।
कार्यक्रमोपरन्त चले गए
मुख्य अतिथि
और छोड़ गए गमला
अपनी ज़मीन से विलग
गमले में रोपित उस पौधे को
रख दिया किसी कर्मचारी ने
कहीं इधर-उधर।
और कुछ समय पश्चात
सूखकर निर्जीव हो गया
वह बेचारा पौधा।

हथियारघर में हाथ

हथियारों के संग्रहालय में
चाकुओं से लिखा हुआ है 'स्वागत'
और पिस्तौलों को जोड़ कर 'अलविदा'

बहुत गौर करने पर दिखती वहाँ
एक चीज जो न हमले का जरिया
न बचाव का -
लोहे की बनी
आधे हाथ भर की छड़ी
पीठ खुजाने की
मानवीय परस जिसे देती
उसके आखिर में बनी
नन्ही सी हथेली

कुछ वैसे ही जैसे
हथियार से जुड़ा हाथ
और हाथ से जुड़ा हथियार
अमानवीय बना देता उसे

नन्ही छड़ी से जुड़ी
नन्ही वह हथेली
देखने में लगती किसी बच्चे जैसी
मासूम उतनी ही
एक तरफ भारी हथियारों
दूसरी ओर सुरक्षा कवचों के बीच पड़ी

बताया यह जाता
कि लड़ाई के उन भारी परिधानों को
पहने
सैनिक इसी छड़ी से
पीठ अपनी खुजाते

तब जब सुनते हैं कि हुआ करती
आचार संहिता
युद्ध में भी युद्ध के लिए भी
नियम क्या कोई था ऐसा
कि पीठ खुजा रहा जब कोई योद्धा
वार उस पर दूसरा
नहीं करेगा
या कि छूट गया
यह हाथ अगर किसी का
तो वक्त जरूरत पास जो हो
अपने हाथ से

पीठ उसकी खुजा दे
भले वह रहे प्रतिद्वंद्वी प्रतिपक्षी
या कोई दुश्मन दल का

होगा अगर लड़ाका सच्चा
जानता होगा
कि लड़ाई अपनी जगह
मगर विजयश्री या वीरगति
ऐसी बेकली बेचैनी में
भला किसके लिए भली
मनाता मानता होगा यही
किसी बैरी की भी न हो यह गति

रानियों महारानियों के
जड़ाऊ परिधान जहाँ रखे संग्रहालय में
वहाँ भी नजर आती
ऐसी ही छड़ी हथेली जिसकी
हाथीदाँत की

हाथीदाँत का होना
उस स्पर्श में भरता होगा
कैसी संवेदना?

क्या उन स्त्रियों की पोशाकें भी
होती होंगी युद्धावरणों सी ही
असुविधाजनक और भारी
और कारागर सरीखी
ऊँची चहारदीवारी ?

उन रानियों की तो दासियाँ भी
साथ वहीं रानियाँ और कई
फिर भी जीवन क्या उनका
इस तरह असहाय अकेला
कि न संतति न पति
अपनी बेबस बेचैनी में
अकसर होती होंगी
इसी हाथ के भरोसे ?

सच तो यही
कि चाहे अष्टधातु पंचरत्न या
हाथी दाँत का
अपने हाथ में थमा
यह उपकरण हाथ सा
हो तो सकता नहीं विकल्प
मानवीय आत्मीयता की ऊष्मा
से भरे परस का

बने बचे इसलिए भी रिश्ते
कि आड़े समय दरकार पड़े
पीठ एक दूसरे की सहला सकें

जीवन हो न ऐसा कि छोड़ दे
रण में
या शून्य में असहाय अकेला
हाथों में ऐसी किसी हाथनुमा छड़ी के सहारे
अपनी तकलीफ और छटपटाहट में

यदि इस कविता को सुनते
चुनचुनाने लगी हो कहीं पीठ आपकी
तो मैं ठहरता हूँ अभी यहीं
आप बना सकते हैं इसे
जादू की नहीं मगर
मुसीबत में काम आने वाली छड़ी
या कि एक जीवंत हाथ जादुई
अपनेपन से धड़कता स्पर्श मनुष्यता का...

प्रेम रंजन अनिमेष

बचपन से ही साहित्य कला संगीत से जुड़ाव। सभी विधाओं में लेखन।

प्रकाशित कविता संग्रह : मिट्टी के फल, कोई नया समाचार, संगत, अँधेरे में अंताक्षरी, बिना मुँडेर की छत, **आने वाले संग्रह:** कुछ पत्र कुछ प्रमाणपत्र, प्रश्नकाल शून्यकाल, अवगुण सूत्र, नींद में नाच, माँ के साथ, नयी कवितावली, पाखी, प्रेमधुन, अंतरंग अनंतरंग, वृत्त अनंत, संक्रमण काल की कवितायें, कवितायें जिनसे झगड़ती हैं कहानियाँ, आदि

ईबुक : 'अच्छे आदमी की कवितायें' एवं 'अमराई' ईपुस्तक के रूप में वेब पर

संपर्क: एस 3/226, रिज़र्व बैंक अधिकारी आवास, गोकुलधाम, गोरेगाँव (पूर्व) (पूर्व), मुंबई 400063

ईमेल: premranjananimesh@gmail.com

दूरभाष: 9930453711

टूटना

दिल है तो
टूटेगा
और धागा भी
कहीं कभी
प्यार का
मगर तुम मत तोड़ो
तोड़ो भी
तो चटका कर नहीं
(रहीम को याद करो)

कि वक्त आये
मौका मिले
तो जुड़ सके
फिर से

टूटे उतना ही
जितना जरूरी
गूँथने पिरोने
रचने के लिए नया

जैसे टूटते पहाड़
नदियों के लिए
टूटते कगार
नयी मिट्टी के लिए
टूटती मिट्टी
बीज की खातिर
टूटते बंधन
आजादी की राह पर

टूटना हो भी
तो खुलने की तरह

जैसे आसमान खुलता
बरस कर
कलियाँ खुलतीं
महक कर
और जीवन नया
अपने खोल से
किलक चहक कर...

-प्रेम रंजन अनिमेष

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

अपने हिस्से का फर्ज निभाओ

स्वच्छ वातावरण के वास्ते,
आज एक पौधा लगाओ।

पाना है गर्व की अनुभूति,
खुद को यकीन दिलाओ,
करना हो गर नेक काम,
आज एक पौधा लगाओ।

उज्वल भविष्य की ख़ातिर,
सब मिल कर वृक्षारोपण कराओ,
संसार की रौनक बढ़ाओ,
आज एक पौधा लगाओ।

विद्यालय है पवित्र स्थान,
इसे फूलों से महकाओ,
कह कर नही करके दिखाओ "शमा"
आज एक पौधा लगाओ।

शमा परवीन

जन्म - 15 अप्रैल (बहराइच, उत्तर प्रदेश)
गुरु - रश्मि प्रभाकर, पिता- अशफ़ाक अहमद, माता- मुस्तकिमा उर्फ अंजुम फातिमा, पति- मोहम्मद अल्ताफ शिक्षा- एम.ए., एन.टी.टी., डी.एल.एड., बाम्बे आर्ट, डिप्लोमा कम्प्यूटर, पता - बहराइच, उत्तर प्रदेश,
सम्प्रति - अध्यापिका, कवयित्री, लेखिका, भारतीय शिक्षा ट्रस्ट समिति की सदस्यता, विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से समाज सेवा कार्य में रूचि। प्रकाशित रचनाएँ/ कृति - विभिन्न दैनिक समाचार पत्र पत्रिकाओं में कविता और लघुकथाओं का प्रकाशन रूचि -कविता, उपन्यास, कहानी, और नाटक पढ़ने में रूचि।

गम में शामिल हो तो बात बने

महफ़िल में साथ देते हो,
तन्हाई बाँट लो तो बात बने।

शोहरत में सामने खड़े हो,
नाकामियों मे पुकार लो तो बात बने।

बार - बार इज़हार करते हो,
एक बार दिल से इक़रार हो तो बात बने।

यूँ तो मिलकर मुस्कुराते हो,
बिछड़ कर रो दो तो बात बने।

अमीरी बाँट लेते हो,
गरीबी बाँट लो तो बात बने।

मंजिल पर पहुँच कर तो सब साथ देंगे,
सफ़र में साथ चलो तो बात बने।

सबके एबो को तलाशते हो,
खूबियों को तराशो तो बात बने।

"शमा" से मिलना गर सिर्फ़ जरूरत हो,
परवाना -ए- खाक हो तो बात बने।

सबके घरों में रोशनी एक सी आती नहीं

सबके घरों में रोशनी एक सी आती नहीं अब
सूरज बड़ी इमारतों में अटक गया है कहीं

पेड़,पक्षी, नदी, नाले हैं प्यास से आकुल-व्याकुल
बादल इन्हीं बियाबां में भटक गया है कहीं

जगाते हैं जुगनुओं से ही सारी की सारी रात
चाँद बल्ब की तरह चौराहे पे लटक गया है कहीं

साल के चार मौसम दिखते ही नहीं यहाँ
घूस समझ कोई मंत्री सब गटक गया है कहीं

बाग-बगीचे अपनी तबियत से खिला करते नहीं
अफसर की निगाह में माली खटक गया है कहीं

-सलिल सरोज

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

स्त्री और समर्पण

स्त्री जिस किसी भी
अवतार में हुई,
खुद की परवाह किए बिना
दूसरों पर निसार हुई,
(कुछ अपवादों को छोड़कर)

'माँ' हुई जब वो तो
उसने उड़ेल दिया अपनी औलाद पर हृदय में
संचित स्नेह था जितना,
प्रत्युत्तर में भले ही ना पाया हो
उतना स्नेह
लेकिन देने में उसने कोई कमी
ना रखी कभी।

'बहन' हुई जब वो तो
निभाया उसने रिश्ता उम्र भर
भाई-बहनों से,
उनकी सुख-सलामती के लिए वो रही
हमेशा फिक्रमंद,
प्रत्युत्तर में भले ही ना पाई हो
उतनी तवज्जो
लेकिन देने में उसने कोई कमी
ना रखी कभी।

'बेटी' हुई जब वो तो
महकाया उसने आंगन माँ-बाप का
अपनेपन की खुशबू से,
दूर होकर भी उसकी जान रही समाई

माँ-बाप ही में,
प्रत्युत्तर में भले ही ना पाया हो
उतना सहारा
लेकिन देने में उसने कोई कमी
ना रखी कभी।
'प्रेमिका' हुई जब वो तो
प्रेम के आकर्षण से
बदल दिये उसने पुरुष की दुनिया के मायने
और कर पाया वो असंभव को भी संभव,

प्रत्युत्तर में भले ही ना पाया हो
उतना प्रोत्साहन
लेकिन देने में उसने कोई कमी
ना रखी कभी।

'पत्नी' हुई जब वो तो
सजा दी करीने से
अस्त-व्यस्त, बिखरी हुई सी पुरुष की जिंदगी
और होम कर दिया अपना सारा जीवन
उसकी कामयाबी के लिए,
प्रत्युत्तर में भले ही ना पाया हो
उतना श्रेय
लेकिन देने में उसने कोई कमी
ना रखी कभी।

'दोस्त-सहकर्मी' भी हुई जब वो तो
पुरुष में जगा दी उसने
सभ्य, शालीन और सुरुचिपूर्ण होने की प्रवृत्ति,
प्रत्युत्तर में भले ही ना पाया हो
उतना सम्मान
'लेकिन देने में उसने कोई कमी
ना रखी कभी

'दादी-नानी' हुई जब वो तो
करती रही हमेशा कोशिशें
अपने नाती-पोतों की हर जायज-नाजायज
जिद पूरी करने में,
बचाती रही उनको माँ-बाप के गुस्से से,
प्रत्युत्तर में भले ही ना पाया हो
उनका समय
लेकिन देने में उसने कोई कमी
ना रखी कभी।
पुरुष ने स्त्री के लिए जो कुछ किया
अपनी मर्दानगी का रौब दिखाने
के लिए किया,
स्त्री ने पुरुष के लिए जो कुछ किया
इस धरती पर उसका अस्तित्व बनाए रखने के
लिए किया।

जितेन्द्र 'कबीर'
जितेन्द्र कुमार गांव नगोड़ी डाक घर साच तहसील व जिला चम्बा हिमाचल प्रदेश
संपर्क सूत्र - 7018558314

उम्मीद की उपज

उठो वत्स!
भोर से ही
जिंदगी का बोझ ढोना
किसान होने की पहली शर्त है
धान उगा
प्राण उगा
मुस्कान उगी
पहचान उगी
और उग रही
उम्मीद की किरण
सुबह सुबह
हमारे छोटे हो रहे
खेत से....!

गोलेन्द्र पटेल
ग्राम- खजूरगाँव, पोस्ट- साहुपुरी, जिला- चंदौली, उत्तर प्रदेश, भारत 221009, छात्र: काशी हिंदू विश्वविद्यालय (हिंदी आनर्स), सम्पर्क : 8429249326,
ई-मेल : corojivi@gmail.com

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

ढहना

मात्र एक क्रिया भर नहीं
यह एक प्रक्रिया है जो
होती रहती है अनवरत।

ढह जाता है
एक पुराना मकान
जर्जर होते ही ढहा भी दिया जाता है
पुनर्निर्माण के लिए

ढह जाती हैं
इच्छाएं पक कर झर जाती हैं
पुराने पीपल की पत्तियां
नई कोपलों के लिए

मकान का ढहना
ढहना एक इतिहास का भी है
जिसे रचा रहता है पुरखों नें
सदियों सदियों की मशक्कत के बाद

ढहना कथाओं का भी होता है
जो नींव पड़ते ही पल्लवित हुईं थीं
और पुष्पित फलित हुईं थीं
मकान की चहारदीवारी में

उम्मीदों का ढहना
एक टेढ़ी और कठिन क्रिया है
दूसरों की बनिस्पद
पर ढहती हैं उम्मीदें भी

फिर फिर पनप जाया करती हैं
उम्मीदें, मनुष्य की जिजीविषा के साथ
यही होता रहा है
आदिम दिनों से आज तक।

शायद होता भी रहे
युगों युगों तक
बनते ढहते रहने से ही
बनता बिगडता रहता है इतिहास
और आकार लेती रहती है क्रिया, प्रतिक्रिया।

घर में

घर में
सब कुछ ठीक ठाक था
एक भरोसे को छोड़कर
जो धीरे-धीरे टूट रहा था

घर में
बहुत कुछ चीजें थीं
जिन्हें होना था
कुछ कायदों को छोड़कर
जो धीरे-धीरे कमजोर पड़ रहे थे

घर में
ऐसा कुछ नहीं था
जिसे नहीं होना था
कुछ विचारों को छोड़कर
जो धीरे-धीरे जगह बना रहे थे

घर में
जो खिसक रहा था
वह पुराना था
जो जुड़ रहा था वह नया था
एक पीढ़ी से दूसरी में ऐसा ही
होता आया है

घर को
नये सिरे से रचने व
संवारने की जरूरत है।

हृदयेश मयंक

जन्म स्थान: जौनपुर जिले के एक किसान परिवार में, शिक्षा: एम ए हिन्दी (मुंबई विश्व विद्यालय से), **प्रकाशित कृतियां:** मैं शहर और सूरज (कविता संग्रह), सायरन से सन्नाटे तक (गीत संग्रह)युद्ध में शामिल नहीं थीं चिड़ियायें कविता संग्रह), ठहराव के विरुद्ध (कविता संग्रह), अभी भी बचा हुआ है बहुत कुछ (कविता संग्रह), हम ये जो मिट्टी के बने हैं (कविता संग्रह), अपने हिस्से की धूप (ग़ज़ल संग्रह) आदि अनेक कविता संग्रह प्रकाशित। कोयलिया चुपके से कूंक (गीत नवगीत संग्रह, शीघ्र प्रकाश्य), विरसे की कहानियाँ (शीघ्र प्रकाश्य)

पुरस्कार: महाराष्ट्र राज्य हिन्दी साहित्य अकादमी का संत नामदेव पुरस्कार, महाराष्ट्र राज्य हिन्दी साहित्य अकादमी का अन्ना भाऊ साठे राष्ट्रीय एकता पुरस्कार, भारतीय सद्विचार मंच का डॉ राममनोहर त्रिपाठी सम्मान आदि सम्मान से सम्मानित।

दीवार पर टंगा सितार

दीवार पर टंगा सितार
जब तक दीवार पर
टंगा था सितार
लोग याद करते रहे नाना को
धुन टेरते और सितार बजाते
नाना कइयों के प्रिय थे

अब नाना नहीं हैं
दीवार भी नहीं जिस पर
टंगा रहता था सितार
पर धुनें अभी भी बसीं हैं स्मृति में

स्मृति से सितार का
और सितार से नाना का रिश्ता
ठीक वैसे ही है
जैसे घर से दीवार का
और दीवार का उस जगह से
जहाँ टंगा रहता था सितार

सितार का न होना
कोई बड़ी बात नहीं
पर स्मृतियों का न होना
बहुत ही घातक है
पूरे समाज के लिए।

दूसरों का दिल तोड़ते

दूसरों का दिल तोड़ते रहिए
बस घर अपना जोड़ते रहिए

जहाँ सवाल हो जाए आपसे
राह भी वहीं से मोड़ते रहिए

जो दिखाता हो असली चेहरा
वो शीशा बेधड़क फोड़ते रहिए

आवाज़ खिलाफ में एक न हो
हर एक की गर्दन मरोड़ते रहिए

सच हो जाए खुद से ही परेशान
रोज़ ही नया झूठ छोड़ते रहिए

आप जहाँ की हर रेस जीत जाएँगे
शर्त है कि अकेले ही दौड़ते रहिए

सलिल सरोज

निवास- बी 302, तीसरी मंजिल, सिग्नेचर व्यू अपार्टमेंट्स, मुखर्जी नगर, नई दिल्ली-9, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली से रूसी भाषा में स्नातक और तुर्की भाषा में एक साल का कोर्स और तुर्की जाने की छात्रवृति अर्जित। कार्यालय महानिदेशक लेखापरीक्षा, वैज्ञानिक विभाग,नई दिल्ली में सीनियर ऑडिटर के पद पर 2014 से कार्यरत।

गांधीवाद

गाँधीवाद ....
पतित सत्य के बीज से
उपजे हुए
अहिंसा और शांति के
फसल का
वह हरा-भरा खेत है,
जिसे चर लेने के लोभ में
कोई भी अजा,
शिकारी के रचे हुए व्यूह में
फँस जाता है,
जिसे पकड़ कर हलाल कर देना,
ज़रा भी मुश्किल नहीं...
कुर्बानी के बकरे को
प्रलोभन की हरियाली तो खुब लुभाती है,
वह इतराता है
मैं परिवार का अहम सदस्य हूँ,
देखो न लोग मुझे
मुफ्त की कितना खिलाते हैं,
मेरी सेहत का कितना खयाल रखते हैं,
उस बेचारे को अपनी नियति का
अनुमान ही नहीं,
वह भला क्या जाने
इस मुहब्बत की फसल पर फले
मुफ्तखोरी के फल की कीमत क्या है?

गज़ल

आंखें मिली थी यार से पिछली बहार में
फिर उम्र ढल गए तमाम इंतजार में
बीते हुए लम्हों की कसकती हुई सदा,
उठती है धड़कनों की उजड़ी दयार में
तीरे नजर से कत्ल का हम क्या गिला करें
आबाद हुए दर्द ए इमान प्यार में
नाशुक्र तूँ नहीं मेरी किस्मत थी जो मिला
अब कौन जाने क्या है कीमत बाजार में
दस्तूर जमाने का सुदर्शन कहाँ गया
जो निभ न सका और न रहा अख्तियार में

वैदिक प्रकाश

जब कि सभ्यता है बंदिनी विधर्म नीति की बेड़ी में,
क्या दिखती है आर्य चेतना, स्वतंत्रता की श्रेणी में ?

क्या कारण हमने जुगनू को अपना संविधान माना ?
सत्याग्रह ने अंधकार को क्यों अपनी मुक्ति जाना ?

संविधान है आर्य भूमि पर श्रुतियों की वह दीपक माला
वैदिक सार्वभौमिकता की धँधक रही जिसमें ज्वाला

वैदिक ज्वाला के स्फुलिंग का यौवन पूछ रहा है अब
बलिवेदी में मेरी विभूति का चन्दन चर्चन होगा कब ?

कब जैमिनी का न्यायशास्त्र मंगल ध्वज बनकर लहरेगा ?
हे आर्यों कब तक सुप्त चेतना यह तेरे सम्मुख ठहरेगा ?
दिव्य दिवाकर द्रवित न हो द्रव्यों पर तेरा शासन है
पुरुष न करे पुरुषार्थ आह ! यह भी कैसा अनुशासन है।

योगेश 'सुदर्शन' मिश्र

सहायक शिक्षक, माध्यमिक विद्यालय
बृहन्मुंबई महानगर पालिका विद्यालय)
पता- वडाला मुंबई- 37 महाराष्ट्र

सुबह का अखबार

अलसुबह! चाय की चुस्कियों में
अखबार का फ्रंड पेज खोला
जेएनयू में लगे आजादी के नारे
कश्मीर फ्री का शीर्षक बोला ?
तभी मेरे अंदर का उबलता राष्ट्रवाद बोला
आजादी...आजादी का यह कैसा शोला?
बगल खड़े वामी ने बोला!
भाई! यह है विचारों का गोला
तभी राष्ट्रवादी ने बोला
क्यों निगलते हो ऐसा गोला ?
जो भड़काए अलगाववाद को शोला ?
तभी गूंजी सेक्युलरवाद की बोली
नहीं पचती, तेरी राष्ट्रवाद की गोली ?
दूसरे ने कहा क्योंकि मैं हूँ वामवादी
कश्मीर है मेरी आजादी ?
फिर क्या था !
चौराहे पर जमा हो गए
साम्य, चरम, नक्सल, पूंजी, समाज और सीनेवादी
बोले हम हैं आजादीवादी !
तभी बोला! दक्षिणवादी
तेरी सोच है अलगाववादी ?
सच कहूँ , सिर्फ मैं हूँ राष्ट्रवादी !
तभी गूंजी एक बोली, सबकी आंखें खोली
चुप कर!
तुम सबने निगली वोटबैंक की गोली ?
भारत को बांटा टोली-टोली
गढ़ते हो आजादी-आजादी बोली
बताओ कहाँ है भारतवादी टोली...?

प्रभुनाथ शुक्ल

दीपशिखा सी जलके...

दीपशिखा सी जलके मातृशक्ति,
सदा वो उज्ज्वल राह दिखाती है।
प्रथम गुरु वह निज संतान की,
नित सुंदर वो संस्कार सिखाती है।।

मुश्किलों में साथ निभाती चलती,
बनी मजबूत चट्टान देश की है।
घड़ी भर भी घर नहीं लापरवाही,
अथक कथा अविराम विशेष की है।।

मुस्काती हर्षिल हर पल घर में,
परिजनों पर नित स्नेह बरसाती है।
शक्ति-भक्ति की मिसाल वही,
बच्चों पर नित प्यार लुटाती है।।

चाँद-सूर्य की तरह ड्यूटी करती,
'पृथ्वी सिंह' नारी सम ना कोई है।
शीतल संस्कृति की निर्माता माँ,
निज स्वार्थों दूर मात स्वंय होई है।।

जरूरी क्या है ?

बिन मजबूरी घर से न निकले,
जीवन से अधिक जरूरी क्या है?
पग पग कोरोना मौत बना है,
मौत से मिलना मजबूरी क्या है?

बिन हाथ धो न खाना खाना,
पाप में धँसना जरूरी क्या है?
जानते हैं महामारी कातिल है,
कोरोना में उलझना जरूरी क्या है?

जिन्दगी अनमोल खज़ाना है,
इसे नष्ट ही करना जरूरी क्या है?
सुखी जीवन को सँवारे अब,
मुसीबतें बढ़ाना जरूरी क्या है?

जिन गली-मौहल्ले काम न हो,
वहाँ जाने की मजबूरी क्या है ?
महामारी तो भय व मौत है,
मौत पास लाना जरूरी क्या है?

मास्क लगा बातें अब करना,
चेहरा दिखाना जरूरी क्या है?
'पृथ्वी' पर शुद्धता रखें अब,
बीमारियां लाना जरूरी क्या है ?

देश से बड़ा कौन

किसी के पथ को नहीं रोक सकती
कोई भी आपदाएं..
किसी के साहस को नहीं तोड़ सकती
कोई भी यातनाएं...

दुःख दर्द की हर घड़ी
हंस कर सह लेंगे...
कभी आया कड़वा जहर भी तो
मीरा की ज्यों पी लेंगे...
जिंदगी में आया अंधेरा तो
सूर्य बनकर मिटा देंगे...

देश सर्वोच्च है हमारा,
देश से बड़ा कौन है..
'पृथ्वी' इंसानियत तकाजा है,
इंसान से बड़ा कोई नहीं है..

पृथ्वी सिंह बैनीवाल
संस्थापक सदस्य, जाम्भाणी साहित्य अकादमी बीकानेर

13 पुस्तकें एवं 11 सांझा संग्रह प्रकाशित, अनेकों पत्र पत्रिकाओं का संपादन, विभिन्न विषयों पर देशभर के समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में शोध पत्र, अनेकों लेख, कहानियां एवं 1500 से अधिक काव्य रचनाएं प्रकाशित।, देशभर के कई प्रतिष्ठित समाचार पत्रों में पिछले 40 वर्षों से कार्यकारी संपादक, उप-संपादक, विशेष संवाददाता से लेकर विभिन्न पदों पर कार्य किया।, सपिछले 40 वर्षों से अधिक से राष्ट्र, प्रदेश, गांव, समाज, गरीब व असहाय लोगों के हितों की माँग उठाना, उनका इलाज करवाना, दवाई दिलवाना, अपंग लोगों को ट्राई-साईकल दिलवाने का कार्य निरंतर जारी।, कई अन्य राष्ट्रीय संस्थाओं में पदाधिकारी एवं सदस्य के रूप में कार्यरत। स्वास्थ्य विभाग हरियाणा में संपादक के पद पर कार्य किया।, भारत गौरव अवार्ड, लाइफटाइम अचीवमेंट अवार्ड, बेस्ट सोशल वर्कर, कोरोना वारियर सम्मान आदि अनेकों राष्ट्रीय और राज्य पुरस्कारों से सम्मानित

निवास, #313, सेक्टर - 14, हिसार (हरियाणा) - 125001, ईमेल: bishnoi.psbeniwal29@gmail.com
संपर्क सूत्र : 7015184834, 9467694029

कहानी

कालापानी

कमलेश बख्शी

बेटा नौकरी से लौट आया था।

उसने चाय बनाई, खुद भी कप लेकर बैठ गई। उसे बीसियों बातें करनी थी बेटे से- रोज ही सोचती थी -आज शुरू करूँगी । दिनभर मन में मथती रहती थी अवश्य करूँगी।

जाने कैसे वक्त सिमट जाता। बच्चे आ जाते छोटा मुन्ना रो पड़ता। चाय का कप रख उसका डायपर बदलती। लौटती तो मुकेश पेपर में सिर गड़ाए इतना गंभीर लगता, मुख से शब्द ही न फुटते। ऐसा लगता है जाने बहुत जरूरी कुछ पढ़ रहा हो। पर यह तो रोज का नियम है एक वर्ष तो हो गया उसे आए। कुछ कहने के लिए हिम्मत जुटाती.. मुकेश..

हाँ ..माँ... और वह टीवी शुरू कर देता। हाथ से चुप रहने का इशारा कर देता। खबरें जो शुरू हो जाती। बस खबरें खत्म होते सुधा आ जाती। वह हमेशा की तरह रोटी बनाने चल देती।

खाना खा सुधा बच्चों को सुलाने ले जाती तब फिर प्रयत्न करना चाहती, बहुत कुछ कहना चाहती। अपने घर की जानकारी लेना चाहती। पत्र डाला या नहीं पूछना चाहती मकान का किराया जमा किया जा रहा है बैंक में या नहीं जानना चाहती। मैं वापस जाऊँगी कह देना चाहती थी। उसे आश्चर्य होता था साल भर में बेटे धर्मेश ने बेटी शीतल ने पत्र ही नहीं लिखा। अरे, हिंदी में लिख दें मेरे नाम से तो स्वयं पढ़ लूँ मैं क्यों मुंह देखूँ सब जानकारी लेने के लिए। एक बार मुकेश ने कहा था -शीतल का पत्र है सब ठीक है। उसने पत्र उलट पलट कर देखा एक लाइन भी हिंदी में सही नहीं थी। क्या समझती है कि भाई हिंदी पढ़ना भूल गया।

पुत्र को हंसी वाले प्रोग्राम में खोया और जोर -जोर से हंसना देख वह भी टीवी देखती रहती। "अच्छा देर हो रही है माँ, सो जाओ। "बाथरुम जाने की हाजत होती, बार-बार धीरे-धीरे किवाड़ खोलती फिर भी आहट उन तक पहुंच जाती। बहू- बेटे दोनों टीवी देख रहे होते सुधा वहीं से बोलती -"माँ बोनी को देख लेना। आँखें खोले खेलते बोनी के साथ कुछ देर बात कर लौट आई ।

बित्ताभर लड़के को दूसरे कमरे में डाल दिया था अस्पताल से लौटते ही वह तो हैरान परेशान हो गई थी। हम तो कलेजे से चिपका सोते थे बच्चे को। कभी पीठ नहीं कि बच्चे की तरफ।
बहू-बेटे दोनों खूब हँसे थे यह अमेरिका है यहाँ बच्चे जब छोटे होते हैं तभी अलग अपने कमरे में सोने की आदत डाल देते हैं।

बच्चे होने के बाद भारतीय मित्र घर आए तो वह कहती -"कुछ न कुछ खाओ, यह लो बेसन के लड्डू मैंने बनाए है । चाय ही ले लो, कहो तो काफी बना दें ठंडा ही ले लो।"

तब बेटे ने मेहमान के जाने के बाद कहा- माँ यहाँ किसी को फोर्स नहीं करते। यह इंडिया में चलता है दस बार पूछ-पूछ खिलाना। यहाँ बस एक बार पूछा फिर बस..

चौबीस घंटे अंदर ही अंदर भुनभुनाते बीत जाये। बड़ा पोता- पोती इंग्लिश के सिवा कुछ बोलते नहीं। उन्हें सुनाने के लिए ढेर सारी कहानियाँ थी एक भी नहीं सुना पाई। कई बार बहू बेटे से कहा अरे इने हिंदी सिखाओ।

यह तो यही जन्मे है यही के नागरिक हैं। इन्हें तो इंग्लिश ही बोलनी पड़ेगी नहीं तो दोस्त उन पर हँसेंगे। तो क्या बच्चे दो भाषा नहीं सीख सकते? तुम लोग कैसे सीखे थे, पंजाबी, हिंदी, अंग्रेजी बोल।

वह चुपचाप बैठ गई। अतीत में खो गई। मुकेश तीन साल बाद आया था बड़े पोते दीप को ले कर। बस सात दिन रहा। उसे बहू के मायके और एक हफ्ता घूमना भी था। वह मुकेश से लिपट गई थी मुकेश को बांध लिया था आलिंगन में ...वह अपने कुछ छुड़ाता ताँगे पर बैठ गया था, छोड़ो भी माँ..

वह दरवाजे थामें सिसकती रही, जब तक घोड़े के गले की घंटी का स्वर लोप न हो गया।

वृद्ध पति ने कंधे पर हाथ रखा। चल अरे जो दिल्ली रहता है वह कौन छः महीने में आ जाता है उसे भी दो साल गुजर जाते हैं। वह पिघल गई और भी रुलाई छूट गई थी।

उस दिन उसे चिढ़ सी आ गई थी बेटों के प्रति जब साल भर बाद वे भी न रहे। न किसी बेटे ने लिखा हमारे पास आओ, न पूछा कुछ पैसे तो नहीं चाहिए? कोई परिचित कह रहा था, तुम्हारा धर्मेश कह रहा था बहुत पैसा है माँ के पास किराया हर महीने आता है हमसे अच्छा खाते पीते रहे हैं हमारे माँ-बाप । यहाँ तो बाप रे दिल्ली में दाल रोटी जुड़ जाए वही बहुत है।

मुकेश.. इसके एक-दो फोन आए फिर चुप लगा गया था। बेटी पत्र डालती रहती थी। वह तो अकेली रहने की आदी हो गई थी कि मुकेश का लंबा पत्र आया था -"माँ अकेली कैसे रहती होगी, बड़ा दुख लगता है तुम्हारी बहुत याद आती है। तुम मेरे पास आ जाओ। भरे परिवार में रहना। टिकट भेज रहा हूँ। धर्मेश दिल्ली से विमान में चढ़ा देगा, मैं न्यूयॉर्क तुम्हें लेने आ जाऊंगा।

वह पहुँच गई न्यूयॉर्क और वहाँ से बफैलो। पहुँच कर देखा सुधा के पूरे दिन थे। उसे दो साल से अच्छी नौकरी मिली थी । जिससे वह छोड़ना नहीं चाहती थी । दोनों बच्चों को पालते उसने कंप्यूटर का कोर्स कर लिया था।

हूँ..वह समझ गई थी इसलिए उसे बुलाया है। कुछ ही दिनों में कुकिंग रेंज चलाना बता दिया था। माँ तुम्हारे हाथ का खाना क्या लाजवाब बनता था अब तो रोज खाने को मिलेगा। बेटा कहता, सुधा माँ ने सब संभाल लिया है अब तुम्हें नौकरी छोड़ने की जरूरत नहीं।" वह कैद कालेपानी की सजा भुगत रही थी एक वर्ष से। चुप रही तो और कई वर्ष बीत जाएँगे। कहीं कोई बोलने वाला नहीं । कभी कोई इनके मित्र आते तब लगता कोई है बात करने वाले...सुधा -मुकेश को वक्त कहाँ.... यही कभी एक दो वाक्य .. यहाँ..वहाँ।

दोनों बड़े बच्चों को स्कूल के लिए तैयार किया उनकी बस नौ बजे आती है। छोटे को नहलाया -दूध दिया और वह खेलने बैठ गया। उसने कागज पैन उठा लिया।

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

शीतल को पत्र लिखूँ... वही भैया को लिखे ...माँ को भेज दो कुछ समय.... बस फिर कौन आता है। किसी तरह इस कालापानी से छूटूँ... इस उम्र में दिन भर काम... बच्चा संभालना क्या हँसी मजाक है।

शाम तक तन टूट जाता है । सुधा शाम को थक जाती है बस से आते और फिर खाना भी तो साढ़े छः खा लेते हैं। इतना भला है कि रात के बर्तनों उसे नहीं माँजने देते ...दोनों माँज लेते हैं। वह पत्र लिखने बैठ जाती है-

प्रिय शीतल,

आशीर्वाद,

तुमने तो एक पत्र भी माँ के नाम नहीं लिखा। आज मैंने कलम उठा ली है, नहीं तो पिछले पूरे वर्ष से मैं तुम्हें पत्र लिखना चाह रही थी। सच कहती हूँ सैकड़ों, हजारों बार तुम मस्तिष्क में उतरीं.....तुम्हारा चेहरा...आँखें.... जब परेशानी बढ़ जाती लगता तुम्हें पत्र लिखूँ। बेटी, कैसे भुला दिया तुमने... क्या सच ही मैं तुम्हें याद नहीं आई या माँ की जिम्मेदारी नहीं रही इसलिए तुम भाई -बहन राहत की साँस ले रहे हो। मन मस्तिष्क तो तुम्हारे पास पहुंच बात कर लौट आते हैं। क्या शरीर इतनी आसानी से पहुंच सकेगा। दिन-रात एकाकीपन से लड़ते रहना अधिक संभव नहीं, आत्मसमर्पण करने की स्थिति नजदीक आती जा रही है। यहाँ इस देश में बहुत अकेली हूँ। मैं कुछ कहना चाहती हूँ। समझते हुए भी मुझे मौका नहीं देते सुधा-मुकेश टाल जाते हैं मेरा कुछ सुनना। मैं अपने ही बच्चों से अंतःकरण में जूझती टूटती जा रही हूँ। अपने स्वार्थ के लिए वो वैसा करते हैं। जाने कैसे जी लिया एक वर्ष, कैसी अजीब बात है! दूर बैठे कैसे सब याद आते हैं... शांति भंगन जो हमेशा समय पर काम नहीं करती थी, पड़ोसन बबलू की माँ जो हमेशा कुछ न कुछ माँगने चली आती थी। ताँगे वाले, भाजी वाले, फल वाले उन्हें शायद याद भी न होऊँ, मुझे सब याद आते हैं। उनकी मेरे बीच वह गली वह घर.. वह हाट- बाजार अपनेपन का रिश्ता जुड़े हुए हैं। सच, मैं स्वदेश लौटना चाहती हूँ शीतल, मुकेश को लिखना माँ को कुछ माह के लिए भेज दो ....बस तुम दोनों के बच्चों को प्यार। धर्मेश, मीना, तुम्हारे पति को आशीर्वाद।

तुम्हारी

माँ

एक लिफाफा ढूँढ उसमें पत्र डाल चिपका दिया। मुकेश शाम को लौटा, "बेटा इस पर शीतल का पता डाल दे - ला मेल बॉक्स में डाल आऊँ।

"माँ टिकट नहीं है, कल लेकर आफिस से डाल दूँगा, चिपका क्यों दिया, मैं भी दो-चार लाइन लिख देता।" उसके चेहरे पर गहरी उदासी संध्या सी ढल आई थी। पल भर पहले तक चमकता आशा का सूरज डूबने लगा। एक अविश्वास उगने लगा-यदि पत्र न डाला तो खोल कर पढ़ा तो....... खैर एक माह तक राह देखेगी..... फिर अवश्य ही कह देगी......... मुझे जाना है।

"माँ क्या मन उदास हो गया?"

उसे लगा मौका हाथ लगा....हाँ ... मैं...

"माँ, बहुत पैसा लगता है आने-जाने में.. सस्ता होता तो यहाँ से सभी हर साल जाते, कोई नहीं जा पाता। तीन साल, पाँच साल फिर सब सुख तो हैं। यहाँ अपने बच्चों में बैठी हो न, कोई अभाव मुझे नहीं दिखता। और उसके मुख पर ताला लग गया। क्या जबाब दे... उसके मकान के किराए के भी इतने पैसे तो नहीं हो पाए होंगे कि टिकट उससे लेने को कह दें। उसे लगा अभिमन्यु की तरह वह चक्रव्यूह में फंस गई है जिससे निकलने में वह असमर्थ है।

कमलेश बख्शी

जन्म- इटारसी (मध्यप्रदेश)

मातृभाषा- पंजाबी

लेखन-हिंदी,

अन्य भाषाएं- मराठी, गुजराती, पंजाबी, इंग्लिश भाषा का ज्ञान

प्रकाशित कृतियाँ-कच्चे पक्के रास्ते,(1980) सुरंग से बाहर, (1981) अंतहीन भटकन (1982) विधिचंद (1984) बाल उपन्यास, दिशा खोजती जिंदगियाँ(2000) सभी उपन्यास, क्यों कहूँगी सच कहूँगी (1979) नया मोड़ (1989) कब तक (1989), मर्यादा (2000) उखड़ा वृक्ष धरती से जुड़ा (2001), सावधान ब्रिज आइस्ड है (2002) सभी कहानी संग्रह, नील गगन ले (यात्रा वृत्तान्त), आकाशवाणी से कविता,कहानी, नाटकों का प्रसारण कई सालों तक हुआ।

लघुकथा संग्रह प्रकाशाधीन, एवं अन्य कहानी, कविता संग्रह प्रकाशाधीन 2021

पुरस्कार- सोवियत नारी मास्को से प्रकाशित पत्रिका में प्रकाशित कहानी "नया मोड़" वर्ष की श्रेष्ठ रचना के अंतर्गत पुरस्कृत(1980) प्रियदर्शिनी पुरस्कार श्री किशाराम लेखराज रुपानी मेमोरियल अवार्ड (हिंदी साहित्य) , राष्ट्रीय हिंदी सेवी सहस्त्राब्दी सम्मान दिल्ली में, संयोग कला मंच मुंबई का सम्मान। अन्य संस्थाओं से अनेक सम्मान प्राप्त हुए।

तोते वाला कबाड़ी

डॉ. कला जोशी

लंबी घूसर दाढ़ी। मेंहदी से रंगें लाल बाल, चौड़ी पेशानी पर उतरती कुछ घुंघराली लटें, बड़ी-बड़ी आँखों के साथ नीचे को झुकी तोतई नाक। उजला रंग और उजले ही कपड़े पहने यही है रहमान कबाड़ेवाला। ठीक नौ बजे घर से हाथ ठेला लेकर निकल जाता। कबाड़ा दे दो कबाड़ा की आवाज लगाता हुआ। गर्मी हो, सर्दी हो या बरसात, रहमान का रोज का नियम बन गया है, शहर की गलियों में कबाड़ के लिए निकलना। पूरा शहर तो नापा नहीं जाता, पर रोज तीन-चार कॉलोनियों में फेरी लगा ही लेता है। पास के बच्चे नौ बजे घर से बाहर निकलकर रहमान के ठेले का इंतजार करते हैं। इसलिए नहीं कि कबाड़ बेचता है वरन फेमू को देखना है, उससे दुआ-सलाम करना हैं। 'फेमू' भी तो फुदकने लगता है बच्चों की चंचलता देख। बच्चे उसे गली के आखिर छोर तक छोड़ते हैं। फिर वह रहमान के साथ निकल पड़ता है। रहमान नौ से दो बजे तक तीन कॉलोनियों की फेरी लगा लेता है। तीन बजे कहीं छाँह में ठहरकर साथ लाई रोटी खाकर आराम करता है। फेमू भी खाने में हिस्सा बँटाता है। जो-जो रहमान खाता है वह सब उसे चाहिए। यह फेमू गोल-गोल चमकीली आँखों वाला तोता है। रहमान का प्यारा-दुलारा है। ठेले के बीच में उसका साफ-सुथरा पिंजरा है। कभी उसमें लगे झूले में झूलता, कभी रहमान की तरह आवाज लगाने की कोशिश करता...... कबाड़ा ले .....लो कबाड़ा। सभी रहमान को तोता वाला कबाड़ी कहते। तोता ही उसकी पहचान बन गया था। शाम पाँच बजते ही रहमान अपने घर की ओर लौटता। घर से दो फर्लांग पहले बम्बई बाजार चौराहे के पास सलीम चायवाले की दुकान पर ठेला रोकता। यह उसका रोज का नियम था। उसके मिलने-जुलने वाले यार दोस्त भी यही आकर उससे मिल लेते। सुख-दुख की, जमाने की तमाम बातें कहने-सुनने का उनका यह अड्डा था। चायवाला फटाफट चाय तैयार कर रहमान को बड़े गिलास में चाय और दो टोस्ट पकड़ा देता। यार दोस्त होते तो उन्हें कट थमा देता। रहमना फेमू के पिंजरे को खोलता, फेमू झट पिंजरे से निकल उसके कंधे पर बैठा चा.....चा बोलता रहता। उसे चाय पीने की बहुत जल्दी होती। रहमान उसकी कटोरी में थोड़ी चाय डालता और टोस्ट का आधा टुकड़ा उसको पकड़ा देता। रहमान की देखा-देखी फेमू भी चाय के साथ टोस्ट खाने लगता। चाय पीने वाले इस तोते को देखने की उत्सुकता में राह चलते लोग रूक जाते। यह अनोखा तोता था। अब तक किसी ने इस तरह चाय पीते तोते को नहीं देखा था। चाय खत्म करते ही फेमू बालता भी – " चचा चा खत्म हो गई चओ.......चओ....।" रहमान तोते के सिर पर हाथ फेरता "हाँ ! हाँ ! बेटा फेमू चलते हैं। जरा दम तो लेने दो। " फेमू इधर-उधर देखता हुआ रहमान के कंधे पर बैठ जाता। रहमान के सभी दोस्तों को वह जानता था। उनसे दुआ सलाम भी करता, उनकी बातों में बीच-बीच में टोहका भी देता। शाम छह साढ़े छह बजे तक रहमान और फेमू घर पहुँच जाते। घर आकर रहमान फेमू के पिंजरे को दालान में टांग देता। फेमू को वहाँ टँगा रहना बहुत अखरता पर क्या करे चाची शाम या रात को उसे इतनी आजादी कहाँ देती है कि वह पूरे घर में फुदकता रहे। फिर पूसी मौसी इस फिराक में रहती कि कब फेमू पकड़ में आये। चाची दिनभर घर पर अकेली रहती। रहमान के आते ही उनका बोलना शुरू हो जाता। दोनों बहुओं ने अपना घर अलग कर लिया। कभी-कभी बेटे लच्छू–अच्छू हालचाल पूछने आ जाते। दोनों लोगों और बकरियों का काम करते-करते चाची का पूरा दिन निकल जाता। थुलथुल काया जरा जल्दी ही थक जाती। वैसे चाची दिल की अच्छी है। भले ही वह फेमू को पिंजरे में ही टंगे रहने देती है पर रात को उसके लिए कुछ मीठा अवश्य रखती है।

फेमू का इस घर में आने का किस्सा भी अनोखा है। रहमान मियाँ को यह तोता शर्माइन बीबीजी ने दिया था। उनके यहाँ वह दो महीने में एक बार कबाड़ लेने पहुँच ही जाता था। पेपर की रद्दी भी मिल जाती थी। इस घर से उसका एक अजीब सा रिश्ता जुड़ गया था। स्नेह के इस रिश्ते में खर्च कुछ नहीं होता था। बीबीजी के पास ही फेमू तोता था। उनकी बिटिया ने इस तोते को बहुत प्यार से पाला था। बाहर से लौटती तो चहकने लगता – "विधु आ गई.... विधु आ गई।" अब विधु अपनी ससुराल चली गई थी। फेमू के रहते बीबीजी को विधु की बहुत याद सताती। फिर अब उनसे उसकी देखभाल होती भी नहीं थी। एक दिन पिंजरे का पल्ला खुला रह गया तो बिल्ली ने झपट्टा मार ही दिया वह तो खैर हो उनकी नींद खुल गई और तोते की जान बच गई। उसी दिन उन्होंने सोच लिया था तोते को किसी को दे देंगी, जो उसे प्यार से पाल सके। रहमान बरसों से इस घर में आ रहा था। तोता भी उसे पहचानने लगा था। एक दिन बीबी जी ने जिक्र किया तोते को किसी को देने का।

रहमान को तो मुँह माँगी मुराद मिल गई। बहुत दिनों से उसका अरमान था किसी परिन्दे को पालूँ, फिर यह तो विधु का सिखाया-पढ़ाया तोता था। उसने अपने लिए फेमू को बीबीजी से माँग ही लिया। तबसे फेमू रहमान के ही साथ है। अब तो उसे फेरी पर निकलने की आदत हो गई है। रहमान के लिए तो फेमू दोस्त बनकर आया है। फेमू समझे या न समझे पर रहमान हर दुख-सुख उसे बताता है। फेमू उसके कंधे पर बैठा टोहका देता है जैसे सब कुछ समझ में आ रहा है।

रहमान उसकी बीबी फेहमिदा, फेमू और दो बकरियाँ हैं घर में। बकरियाँ जितनी फेहमिदा से हिली हैं उतना ही फेमू रहमान से। पर बकरियाँ में.... में के अलावा कुछ कह नहीं पाती। उनकी आँखों की भाषा फेहमिदा पढ़ लेती और वे भी उसके हाव-भाव समझ लेती। अपने इस संसार में पांचों प्राणी सुखी हैं। अच्छू–लच्छू उनके दो बेटे हैं। दोनों घर के पीछे वाले हिस्से में रहते हैं। सब अपने-अपने काम में व्यस्त हैं। रहमान को अपेक्षा भी नहीं है किसी से। पंख निकलने पर परिन्दे भी अपना घोसला छोड़ देते हैं। फिर कभी वापस नहीं लौटते। उनकी उड़ान अनन्त आकाश और धरती के बची निर्बाध जारी रहती है। नई इच्छाएँ परवान चढ़ती हैं, उनको भी तो पूरा होना चाहिए, फिर क्यों वे बंधन की ओर पीछे मुड़कर देखें। नया आशियाना उन्हें भी चाहिए। आदमी के लिए क्या कहा जाए वह तो सबको बाँधकर रखना चाहता है। वह खुद भी बँधा होता है। इसी में वह अपना सुख-सुकून तलाशता है।

गोल भरा हुआ चेहरा, छोटी नाक, लम्बी टुड्डी, उस पर चने बराबर मस्सा, थोड़ा भारी शरीर, निकलता हुआ कद और हरदम बोलती आँखों वाली फेहमिदा अपनी किस्सागोई से पूरे मोहल्ले में जानी जाती बच्चे उसे बहुत पसंद करते। हर शाम कुछ न कुछ बच्चे आ ही धमकते। धार्मिक सामाजिक जलसों में तो स्त्रियाँ उसे घरे रहती। घर में वो दो इंसान ही हैं, पर फेहमिदा ने फेमू और बकरियों को भी अपने घर का सदस्य मान लिया है। जो घर के सदस्य थे वे तो पराये हो गए, पर फेहमिदा को कोई गिला नहीं है। गुस्सा तो उसे तब आता है जब रहमान सारी बातें फेमू को माध्यम बनाकर फेहमिदा को सुनाता है। जैसे फेमू ही सब कुछ हो गया। सीधे-सीधे बात नहीं हो सकती । रहमान सरल है। बीबी के गुस्से पर उसे हँसी आती। फेहमिदा कुढ़ती फिर खिलखिलाकर हँस पड़ती। फेमू भी उनका साथ देता। रहमान साठ पार है फिर भी श्रम की आदत है। घर के छोटे-छोटे काम भी कर देता है। अपने ठेले का रखरखाव और बाहर के काम तो वह करता है, पड़ोसियों को मदद की जरूरत होती तो हरदम तैयार रहता।

अब वे दिन तो रहे नहीं जब ईरानी होटल के सामने यारबाजों के गप्पगुल्ले चलते। शाम उतरते-उतरते बम्बई बाजार चौराहे पर रोशनियों का आमंत्रण खींचने लगता। जैसे-जैसे रात गहराती वैसे-वैसे रागों का महीन जादू खुमारी ला देता। फिजां ही बदल जाती। दिन जो किरातियों और ग्राहकों की चिल्लपों से बम्बई बाजार को ऊबाऊ बना देता रात उसी को अपनी मलमली चादर से ढँक लेती। गलियाँ आबाद हो जाती रंगीनियों से। कहीं तबले की थाप सुनाई देती तो कहीं घुंघरूओं की झंकार। सुनहरे वे दिन तो जाने कहाँ चले गए। आज तो हर चीज बिकाऊ हो गई। रंगीनियाँ लौट गई। दिन रोजी-रोटी की तलाश में भटकने लगा। रात किसी अपराध की पनाहगार बन गई। वक्त ने बम्बई बाजार को ऐसा नासूर दिया कि वो कराह उठा। अपनों के जुल्म ने उसे बदनाम कर दिया। संकरी-संकरी गलियाँ, एक दूसरे से सटे मकानों को जब जन-जमीन की सघनता मिली तो वे संकरे ओर सकरे होते गए। सूरज रोज आता पर मकानों की ऊँची दीवारों से टकराकर लौट जाता। प्रकाश की कमी सेहत, सीरत और बरकत पर भारी ही पड़ती है। रहमान मियां इसी का खामियाजा भुगत रहे हैं। रहने को मकान तो है, पर रोशनी की कमी ने न धन बढ़ाया न शिक्षा। हुनर कब तक साथ देता। साइकिल के पंचर जोड़ने वाले हाथ क्या करते जब धीरे-धीरे साइकिलें ही सड़क से नदारद होने लगीं। मजबूरन उन्होंने कबाड़ इकट्ठा कर बेचना शुरू किया। अपनी जमा पूंजी से हाथ ठेला खरीदा। अच्छू-लच्छू भी ज्यादा पढ़ नहीं सके। सरकारी सहायता तो मिलती नहीं। घरों की पुताई कर वे भी खर्च में सहयोग देने लगे। कमानेवाले हाथ जब अपना हक समझने लगे तो रहमान ने उनका निकाह कर दिया। फेहमिदा का घर में एकछत्र राज्य था। बहुओं के आने के बाद उसमें सेंध लग गई। दोनों बहुएं सगी बहिनें थी। उनकी आपस में खूब छनती। फेहमिदा को लगता वह अकेली पड़ती जा रही है। अकेली वह पहले भी थी । रहमान, अच्छू-लच्छू नौ बजे काम पर चले जाते थे। फेहमिदा घर के काम निपटाती। दो बकरियाँ उसने पाल रखी थीं उनका काम करते-करते कभी अपना अकेला होना जान ही नहीं पाई थीं। बहुओं ने घर का काम संभाल लिया था।

वे उसका लिहाज भी करती थी। पर न जाने क्यों फेहमिदा को लगता घर अब बहुओं का हो गया है, वह बाहर कर दी गई है। बकरियों की देखभाल उसका ही काम। अब वह बकरियों को चराने में अधिक समय लगाकर लौटती। अच्छू-लच्छू कमाने लगे। बहुओं को उनके रूपयों पर घमण्ड होने लगा। फेहमिदा को अब तक अपने अकेले होते जाने पर दुख नहीं था, पर जब रूपया बहुओं की बुद्धि पर हावी होने लगा तो घर में रोज कलह होने लगी। रोज-रोज के झगड़े से तंग आकर रहमान ने मकान के पीछे के दो कमरे अच्छू-लच्छू को अलग रहने के लिए दे दिए। बहुएँ यही तो चाहती थीं। अब रहमान –फेहमिदा के पास एक कमरा और दालान रह गई। उनके परिवार से चार लोग भले ही चले गये पर फेमू के रूप में एक नया सदस्य आ गया। फेमू था ही इतना चंचल कि उसने जल्दी ही फेहमिदा को अपना बना लिया। दोनों बकरियों की पीठ पर फुदकता वह उन्हें भी लुभा लेता। बकरियाँ में..... में..... करती वह उनसे पूछता का...... हे.....का ....हे। रोज ही घर में फेमू और बकरियों का यही प्रलाप चलता। फेहमिदा चिल्लाती – "मरदुएँ चुप रहो।" पर फेमू कहा सुनता वह रोटी बनाती फेहमिदा के कंधे पर सवार हो – "रोटी ...... दे......रोटी....... दे" की रट लगाता। फेहमिदा अपने इन बच्चों के बीच निहाल हो जाती। सुबह फेमू भी समझदार बच्चे सा उसके आगे-पीछे कूंद-फांद करता रहता। रात को तो फेहमिदा उसे पिंजरे में बंद करके टांग देती।

रहमान के फेरी पर निकलने से पहले फेहमिदा उसके पिंजरे को साफ कर पानी की कटोरी रखती। दूसरी कटोरी में भीगी चने की दाल रख देती। अब वह निश्चिंत थी फेमू का दिन भर के दाने-पानी का प्रबंध हो गया। फेमू भी तैयार रहता रहमान चाचा के साथ जाने को। फेमू को फेरी पर जाने का इतना चस्का है कि वह नौ बजे से पहले ही .... "चलो......चा......चओ......चा" पुकारने लगता। "चओ......चओ......" रहमान भी उसके साथ सुर मिलाता " आज अहिल्या पलटन चलना है फिर सदरबाजार फिर रामबाग तक। समझ आ गया न फेमू"। फेमू आँख झपकाता।......... "फेमू से ही बोलोगे कि मेरी बात भी सुनोगे, लौटते में तेल और खड़ा गरममसाला लेते आना। अहिल्यापल्टन जा रहे तो नजीर के यहाँ से सुरजने की फली लेते आना। मुँह का जायका बदल जायेगा। गोश्त खाने की हैसियत रही नहीं। "हाँ ! हाँ लेते आऊँगा। ठीक है फेमू याद दिलाना"

भीषण गर्मी और लू के थपेड़े बेहाल कर रहे हैं। सूरज सिर पर है। रहमान ने एक घने छायादार पेड़ के नीचे ठेला रखा और पेड़ के तने से टिककर सुस्ताने लगा। फेमू के पिंजरे पर उसने अपना गमछा डाल दिया था। ताकि उसे धूप नहीं लगे। पेड़ की छाँह में फेमू को भी सुकून मिला। थोड़ी देर सुस्ताने के बाद रहमान ने खाने का डिब्बा निकाला। आज उसका खाने का मन नहीं है, किन्तु चलने के लिए खाना भी जरूरी है। फेहमिदा ने कितने प्यार से ये रोटियाँ रखी हैं। रोटियाँ नहीं भाये तो छाछ-चावल भी रखे हैं। खुद बीमार है दस दिनों से पर खटती रहती है। आज जल्दी घर लौटूँगा, उसे हकीम जी के पास ले जाऊँगा। उनकी दवा से ठीक हो जायेगी। फेहमिदा ने सुरजने की फली लाने को कहा है वे भी नज़ीर के यहाँ से लेना है। उसकी बहुत इच्छा है फली खाने की। - "चल फेमू बेटा जल्दी खा।" ने थोड़े चावल में छाछ मिला कर फेमू को दिये, खुद रोटी खाई। आधे घंटे बाद वह ठेला लेकर फेरी के लिए चल पड़ा। गर्मी के कारण प्राय: सभी मकानों के दरबाजे बंद मिले। नज़ीर के यहाँ से फली ली। आज बैचेनी घेरे रही थी। जाने क्यों मन बार-बार घर की ओर खींच रहा था। रहमान ने घर लौटना ही ठीक समझा। चार बजते-बजते सलीम चायवाले की दुकान से गुजरा तब रूका नहीं, सीधा घर आया। ठेले को ठिये पर रखा। फेमू का पिंजरा दालान में टाँगा। घर के किवाड़ उड़के थे। रहमान किवाड़ ठेलकर अंदर आया, देखा फेहमिदा बेसुध पड़ी थी। हिलाया-डुलाया कुछ समझ नहीं आया। अच्छू-लच्छू को आवाज दी।दोनों बहुएँ दौड़ी आईं। अच्छू-लच्छू तो काम पर गये थे। मुँह पर पानी के छींटे डालने पर भी फेहमिदा को होश नहीं आया। रहमान ने ठेले का कबाड़ फटाफट उतारा। गद्दा डालकर बहुओं की सहायता से फेहमिदा को ठेले पर लिटाया। चादर की छाँह की और हाथठेला धकेलकर अस्पताल की ओर दौड़ा। अच्छू की दुल्हिन भी साथ-साथ गई। अस्पताल पहुँचते-पहुँचते रहमान पसीने से तर हो चुका था। बहू ने दौड़कर वार्ड ब्वाय को बुलाया। फेहमिदा को स्ट्रेचर पर डालकर ओ.टी. में पहुँचाया तब तक डॉक्टर भी आ गया। उसने फेहमिदा की नब्ज टटोली और रहमान की ओर देखकर बोला – "अब कुछ नहीं बचा देर हो चुकी।" रहमान धप्प जमीन पर बैठ गया। कुछ देर तक सन्नाटा रहा। "चचा चले।" बहू की आवाज से रहमान की चेतना लौटी। वार्ड ब्वाय की मदद से फेहमिदा को ठेले पर लिटाया। थके कदमों से रहमान घर लौटने लगा। एक-एक पैर मन भर का हो गया।

जिंदगी की चाह में जिन पैरों में परवाज की उड़ान भर दी थी, मृत्यु ने उन्हीं पैरों को शिथिल कर दिया था। घर के पास आते ही बह दौड़कर अंदर गई। फेहमिदा की मृतदेह को अंदर लिया। रहमान दालान में दोनों हाथ फैलाएँ परवरदिगार से रहम की भीख माँग रहा था। दोनों बकरियाँ एक साथ में......में.... करे जा रही थी। फेमू अपनी गोल-गोल आँखों से रहमान को देखता, फिर घर में आती स्त्रियों को देखता। उसे समझ नहीं आ रहा था क्या करे।

एक दिन-दो दिन .... करते आज पूरे आठ दिन हो चुके थे। अभी तक बहुएँ खाना ला देती थी। अब घर एकदम सूना था। खाना भी रहमान को बनाना है। बकरियों की देखभाल करना है। कबाड़ लाना और बेचना है। जब तक जीवन है, इससे छुटकारा कहाँ। फेहमिदा के जाने से वह पत्थर हो गया था, पर अब जो सामने था उसने पिघला दिया। बकरियों को उसने बेच दिया। बेबस थीं बेचारी, चिल्लाती रहीं पर रस्सी से बँधी, खरीददार के साथ जाना पड़ा। फेमू भी टें-टें करता रहा। बकरियों की पीठ पर फुदकना...... फिर उनका सींगों से परे हटाना उसकी दिनचर्या में शामिल था। बकरियों को बेचने के बाद रहमान घर से बेफिकर हो गया। दिन अब कटते थे, घर काटता था। फिर भी जीना तो था। फेमू का साथ कुछ सुकून भर देता। अब वह कबाड़ बेचकर ही घर लौटता। आज लौटा तो आठ बज चुके थे। उसने फेमू का पिंजरा दालान में टांगा और उसका पल्ला खोल दिया। फेमू पिंजरे में ही बैठा रहा। रहमान ने हाथ-मुँह धोकर खिचड़ी पकने रख दी। भूख जोर से लग रही थी। गर्मी की उदास रात थी उसने दालान में ही अपनी खाट बिछा ली। फेमू अभी पिंजरे में बैठा था। अच्छू-लच्छू के बच्चों को लड़ने की आवाज आ रही थी। रहमान ने फेमू को आवाज लगाई – "आजा फेमू आ वहाँ क्यों है, आजा नीचे।"; .... फेमू कुछ नहीं बोला। रहमान पिंजरे के पास उड़कर पिंजरे में जा बैठा। रहमान को अजीब लगा वह पिंजरे के पास गया "क्या है फेमू...... भूख नहीं है।" फेमू एकटक देखता रहा उसकी आँखों से दो बूदें रहमान के हाथ पर गिरी। रहमान ने प्रश्नसूचक नजरों से फेमू की ओर

डॉ. कला जोशी

जन्म: 25 दिसम्बर 1959, होशंगाबाद म. प्र. **शिक्षा:** एम. ए. (हिन्दी, अंग्रेज़ी, संस्कृत) स्वर्ण पदक सहित, पी-एच.डी. (भाषा विज्ञान), डी.लिट् (भाषा सर्वेषण, मध्यप्रदेश)

कृतियाँ: कटते पलाश, अबूझ रिश्ते (कहानी संग्रह) बैकों में व्यावसायिक हिन्दी का प्रगामी प्रयोग (सर्वेक्षण शोध कृति), आदिवासी लोक संस्कृति, शैलेश मटियानी की कहानियों का अनुशीलन, भीली की भाषा विज्ञान, शाकुंतल (खण्डकाव्य), गोविन्द मिश्र की कथा-यात्रा (आलोचनात्मक कृति) **सम्पादन:** सृजन विमर्श (अर्द्धवार्षिक शोध-पत्रिका 2006 से निरन्तर), राष्ट्रीय स्तर के समाचार पत्र –पत्रिकाओं में कहानी, आलेख एवं शोध-पत्रों का निरन्तर प्रकाशन, यू.जी.सी. ज्ञान दर्शन चैनल द्वारा व्याख्यानों के प्रसारण । यू. जी. सी की तीन शोध परियोज्नओंन पर शोध कार्य, 1997 ेंा देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर की शोध-निर्देशक। सौराष्ट्र एवं मराठवाडा एवं जीजवाई विश्वविद्यालय की शोध परीक्षक । विवेकान्द पुरस्कार (शिक्षा हेतु), राष्ट्रीय अम्बेडकर साहित्य सम्मान-2002, भारती परिषद प्रयाग द्वारा मित्र कुल सम्मान, प्रज्ञाभारती उपाधि साहित्य सम्मलेन द्वारा सम्मान-2001, इसके अतिरिक्त अनेक सम्मान प्राप्त।

भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान शिमला की एसोसिएटशिप

सम्प्रति: विभागाध्यक्ष (हिन्दी) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इंदौर (म. प्र.)

सम्पर्क: 320, इन्द्रपुरी कॉलोनी, इंदौर— 452001 (म. प्र.)

दूरभाष: 98275-933 58, 0731-2362958

ई-मेल– profkalajoshi@yahoo.com

गया, फेमू को निकाला – "चल खिचड़ी खायेंगें। अब वे दिन तो रहे नहीं जब ईरानी होटल फेमू चचा के कंधे पर बैठ गया। रहमान ने एक थाली में खिचड़ी उड़ेली, एक प्याज और तीन-चार हरी मिर्च ली और खाट पर आ बैठा – "ले फेमू पहले मिर्च खायेगा।" फेमू देखा। फेमू ने चोंच खोली "च.....चचा.....चाची कां गई।" रहमान की पत्थर होती आँखों में नमी उतरने लगी। उसने फेमू पर प्यार से हाथ फेरा और नीचे उतार लिया।

बट इट्स ए कॉम्प्लिमेंट डियर

-डॉ. रीता दास राम

वाक्य रोली के दिमाग में हथौड़ा चलाता रहा। वह बुत बनी स्थिर मस्तिष्क से दिन से रात और रात से दिन होते देखती रही। "बट इट्स ए कॉम्प्लिमेंट डियर" इस वाक्य को मन ही मन दोहराती समझ नहीं पा रही कि वह कैसे रिएक्ट करे। उसकी बौखलाहट ने उससे बिना नमक की दाल और और बिना मिर्च की सब्जी बनवा दिया। बात किसी और से करना था नंबर किसी और का मिला लिया। वह कर क्या रही है उसे इसका भान भी नहीं रहा। वह बस यंत्रवत सी काम करती रही और बीते दिनों के बारे में सोचने लगी।

लॉक डाउन। सब बंद। अड़ोस-पड़ोस, नाते -रिश्तेदार, जान-पहचान सभी चार-दीवारी में। अजब सी घुटन। अपनी साँसे इस तरह बचानी है कि साँसे घुट न जाय। बेरहम होकर जीनी पड़ रही जिंदगी सुकून की तलाश में किताबों की सिलवटें ठीक करने लगी। रोली ने गांधी को पढ़ा। रवीन्द्रनाथ टैगोर को पढ़ा। नेहरू को पढ़ा। प्रेमचंद, शरतचंद, फणीश्वर नाथ रेणु, महादेवी वर्मा। लियो को पढ़ रही है। अन्य कई देशी-विदेशी कहानियाँ। सीरीस देखें। नई-पुरानी फिल्में। दोस्तों से रोज़ वाट्सप चैट। बच्चों के पढ़ाई में सहयोग किया। कई लेख पढे। कुछ अध-पढ़ी किताबें पूरी की। रोली का मन फिर भी न माना।

फोन पर दोस्तों से गपशप तो हो ही नहीं पाती कारण स्पष्ट है कि सभी के घर पर परिवार का हर सदस्य मौजूद और सभी औरतें अपने घर के कामों में युद्धस्तर पर जुटी हैं। लोग अपने अपने घरों में बंद हैं। जैसे बरसों से अपनों के बीच की बढ़ती दूरी का प्रकृति द्वारा संज्ञान लिया गया हो और अचानक यह परिवर्तन विस्तार लोगों को जाने कितने दिनों के लिए इतना करीब ले आया कि सभी की आँखें चौंधिया गई। उस पर कोरोना की दहशत जीने भी नहीं दे रहा। सभी अपने बचे हुए, बरसों से पेंडिंग कामों को खोज खोज कर निकालते पूरा कर रहे थे। कुछ इस तरह ही जीया जा सकता है।

रोली कभी माँ, कभी बहनों और भाभी से बतियाती। कभी काम के बाद भी घर वालों की फरमाइश पूरी करती। नई रेसेपी ट्राई करती। होली, गणपति, रक्षा-बंधन, दशहरा और दिवाली आई और बेमन से चली गई। बस थोड़े-बहुत पकवान ही बने। कोई उल्लास न था। सभी अपने अपने घरों में कसमसा रहे हैं। कुछ परिवार पूरी एहतियात और सुरक्षा का ख्याल रखते हुए बाहर भी गए किन्तु कोरोना पॉज़िटिव होने ने लोगों के मन में भय उत्पन्न कर दिया। लोग बाहर निकलने से अब वाकई डरने लगे। पहले सरकार के लगाए लॉक डाउन से मजबूरी महसूस करते थे अब वही सिर्फ जरूरत के अनुसार बाहर निकलने लगे।

रोली अपने रोज़मर्रा के काम बहुत समय लेकर निपटाती ताकि ज्यादा से ज्यादा समय उसी में निकल जाय फिर भी ढेर सा वक्त खाली बचा रह जाता। कहानी लिखना उसकी आदत में शुमार था। कभी कभी डायरी लिखकर खुद को संतुष्ट किया करती। कई दिनों से वह फेसबुक से दूर थी। जाने क्यों अपरिचित लोगों से उसे वितृष्णा होने लगती और वह अक्सर कुछ समय रहने के बाद फेसबुक बंद कर दिया करती। अब उसने साहित्य से जुड़े पाठकों और लोगों को खोज खोज कर अपने फ्रेंड लिस्ट में लिया। धीरे धीरे उसने अपनी लघु-कथाएँ पोस्ट करनी शुरू की। पोस्ट कभी दोस्तों द्वारा पसंद की जाती। कभी कभी रोली कुछ पोस्ट कर लोगों की पसंद परखने लगती। प्रेम कहानियाँ लोगों की फेवरेट होती। अमूमन छोटी कहानियाँ सारी पढ़ी जाती। ज्यादा बड़ी कहानियाँ लोगों में पहले ही अरुचि उत्पन्न कर देती। पढ़ने के पहले वह भी अक्सर लेख हो या कहानियाँ या कोई पोस्ट लंबाई चैक कर लिया करती। फेसबुक से जुड़े महत्वपूर्ण वरिष्ठ लेखक व कवि की पोस्ट पूरी पढ़ती। गुनती। लंबी, विमर्श युक्त पोस्ट और जानकारियों से भरी अच्छी पोस्ट वह रात को खाली समय में पढ़ने छोड़ दिया करती। जब से मोबाइल पर उसने फेसबुक चालू कर लिया उसे सुविधा हो गई है। किचन में सब्जी गलने, चावल पकने में लगने वाले समय का वह अच्छा फायदा उठा लेती है। छोटी मोटी पोस्ट या आए फ्रेंड-रिक्वेस्ट को देखना, डिलीट करना, गीतों के लिंक द्वारा यू-ट्यूब से गीत सुनना या रवीश कुमार जैसे कई और नए पत्रकारों की खबरें सुनना। देश-विदेश की कोरोना के अपडेट्स देखना आदि कार्य जैसे रोली की रोज की अहम जिज्ञासा हो गई। कितने नए पेशेंट आए। कितने ने अपनों को खोया। कोरोना बढ़ने के क्या रेशों है। किस देश में कोरोना की संख्या 'पीक' पर है। ग्राफ़ रोज बनते बिगड़ते हैरान करते।

फेसबुक की पोस्ट, कविताएं, लघु-कथाएँ, वरिष्ठों के लाइव-कार्यक्रमों का सिलसिला, एकल-काव्य-पाठ, ऑनलाइन काव्य संगोष्ठी, ढेरों विमर्श, लाइक, कमेंट। रोली खुश है कि घर में व्यस्तता के बावजूद वह कुछ साहित्यिक गतिविधियों में भी सहभागी होते लोगों को देख रही है और यह इंटरनेट के कारण ही संभव हो रहा है। इतने मंचीय कार्यक्रम में उपस्थित होना उसके भी बस की बात न होती। वह लगभग सभी को सुनने की कोशिश में रहती। अपने ज्ञान में वृद्धि करती।

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

रोली का खाली समय अच्छा गुजरता। वह रोज ही फेसबुक खोलने और देखने लगी।

दोस्त बढ़ने लगे। देश-विदेशों से भी फ्रेंड रिक्वेस्ट आने लगी। रोली स्वीकार करती। अमूमन साहित्य से जुड़े लोग ही जुडते चले गए। उसकी पोस्ट में दोस्तों की रुचि बढ़ने लगी। उसका साहित्यिक रुझान बढ़ने लगा। वह गौर से लोगों के पोस्ट, कमेंट, वार्तालाप, विमर्श, क्रियाएँ, प्रतिक्रियाएँ देखने-पढ़ने-सुनने लगी। कभी कभी वह भी कमेंट करती पर बात बढ़ने नहीं देती। इस तरह उसकी वैचारिक क्षमता को खुराक मिलने लगी।

फ्रेंड लिस्ट में इजाफ़ा होते ही लोग मेसेंजर में बात करने की कई लोग कोशिश करते। वह बहुत सहेज कर कम शब्दों में उत्तर देती। कई तो 'नमस्कार' 'सुप्रभात' 'हाय' 'हैलो' तक ही सीमित रहते। 'क्या कर रही हो जानेमन', 'क्या कर रही हैं आप', 'आपके शौक क्या है' 'क्या चल रहा है' जैसे मेसेज का वह जवाब ही नहीं देती जो बस किसी भी तरह बात करने के इच्छुक होते है। जितनी बात करो समय और दिन में इजाफ़ा करते चले जाते हैं। 'आप मुझे अच्छी लगती है', 'आपकी अमुक तस्वीर क्या आपकी है? ... कब की है?', 'आपकी हँसी आपकी आँखों तक नहीं पहुँचती', 'आप बहुत सुंदर है', 'आप बात क्यों नहीं करती', 'आप इतना कम क्यों बोलती है' जैसे फालतू बकवास करने वालों को रोली एक दो बार सहती अनफ्रेंड या ब्लॉक कर देती। उसकी साहित्यिक जिज्ञासा से भरी पोस्ट देख अपनी पत्रिका के लिए लिखकर देने कहने वाले संपादकों से उसकी अमूमन दो टूक बात होती। तय तारीख तक बहुत कम जरूरत भर शब्दों का आदान-प्रदान। मेल कर दिए जाने पर बातचीत रुक ही जाती जब तक कि दूसरी लेखन की डिमाँड न हो।

फ्रेंड रिक्वेस्ट अक्सर पेंडिंग पड़े रहते या रोली डिलीट कर देती। कभी ऑनलाइन होती तो आए रिक्वेस्ट पर उसका ध्यान जाता। इसी तरह लंदन से किसी जिम्मी फर्नांडीस का रिक्वेस्ट उसने देखा। रोली ने उसकी प्रोफाइल सर्च की। उसके प्रोफाइल में अच्छे शहर, आकर्षक कारें, अच्छी जगहों की तस्वीरें भरी पड़ी थीं जो उसके विदेशी होने का सबूत थी। रोली ने दूसरे दिन फिर उसकी रिक्वेस्ट देखी जो उसने पुनः भेजी थी। रोली ने उसकी प्रोफाइल पुनः सर्च की। कई विदेशी साहित्यकारों विलियम शेक्सपियर, लियो टोल्स्टोय, विलियम वड्र्सवथ आदि की उक्तियाँ अँग्रेजी में 'कोट' की हुई थी। कैमरे से खींची हुई ढेरों घरेलू तस्वीरें और कुछ पेंटिंग्स उसके वाल की शोभा बढ़ा रहे थे। रोली ने देखा और उसकी रंगीन तस्वीरों को देखने में उलझ गई जो बेहद खूबसूरत लगे। बर्फ से ढके रास्ते, पहाड़, मैदान की हरियाली, विदेशी सभ्यता और सौंदर्य जो रोली को निहायत अनोखे लगे। उसने यह सब बचपन में देखा और सुना भी था लेकिन तस्वीरें इतनी जीवंत थी कि मन मोह लेती रही। रोली को महसूस हुआ जरूर इसकी रुचि कलात्मक और साहित्यिक जुड़ाव रखती है। रोली ने जिम्मी फर्नांडीस की फ्रेंड रिक्वेस्ट स्वीकार की। वह पेशे से ड्राइव्हर था। रिक्वेस्ट स्वीकार करते ही मेसेंजर पर 'हाई' लिखा आया जिसका रोली ने तुरंत कोई उत्तर न देते हुए फेसबुक लॉग आउट कर दिया।

पुरानी पोस्ट पर दी प्रतिक्रिया को पढ़ते रोली अक्सर देखती कि कौन मित्र किस विधा में रुचि रखता है। उससे कई पत्रकार, शिक्षक, प्रोफेसर, मैनेजर, प्रायवेट-गवर्मेंट जॉब, पति के कंपनी एम्प्लोई, दोस्त और रिश्तेदार भी जुडते चले गए। कई पढ़ने में रुचि रखने वाले, कलाकार, पेंटर, विद्यार्थी और युवावर्ग भी दोस्त बने। रोली हिन्दी साहित्य से जुड़ी पोस्ट पढ़ती। अपनी पसंद और विचारों से मिलते लोगों को मित्र सूची में लेती। कई बार कुछ वाहियात लोगों का आना और अनफ्रेंड करना भी साथ होता रहता। इसी तरह उसने प्रकाशकों, कवियों, लेखकों, कहानीकारों, आलोचकों, संपादकों की फेहरिस्त भी इकट्ठी की। कई उसका उत्साह वर्धन करते। कई कहानी, कविता, लेख लिखने, विमर्श के लिए प्रोत्साहित करते। कई यूं ही बातों में वक्त जाया करते। रोली समझती। सुनती। दिमाग से झटकती और नई पोस्ट देखने लगती। उसने ऑनलाइन कविता और कहानियों को यूट्यूब और ब्लॉग में सुनना शुरू किया और पसंद आए लेखकों और कवियों की किताबें मँगवाने लगी।

फेसबुक पर खाली समय में आती और कभी कभी मित्रों से बात कर लिया करती। उसका नया विदेशी मित्र जिम्मी फर्नांडीस कई दिनों के अंतर में तीन चार बार 'हाई' लिख चुका था। उसके रिप्लाय में रोली ने 'नमस्ते' लिखा। उसका पूछना था 'वॉट इस दिस'। रोली ने 'गुड मॉर्निंग' लिखा। वह समझी कि जिम्मी को शायद हिन्दी नही आती। उसके दिमाग में विचार कौंधा फिर फ्रेंड रिक्वेस्ट क्यों भेजी ! वह अक्सर 'हाई' और 'गुड मॉर्निंग' लिखने लगा। कभी कभार रोली भी जवाब देती। एक बार उस ने लिखा 'आइ यम बिग कार ड्राइव्हर... यूअर जॉब?' रोली ने जवाब लिखा 'आइ यम हाउस वाइफ़'। वह अपनी कार का नाम बताता रहा और कई कारों का जिसे उसने चलाया। ऑडी-क्यू7, मार्सडीज़-

जीएलएस, बीएमडबल्यू-एक्स फाइव, फ़ोर्ड-एंडेवर, बेंटली-बेंटाइगा आदि अन्य कई नाम रोली को निहायत नए लगे। रोली की खामोशी उसे खामोश किया करती और बातचीत अवरुद्ध हो जाती। वह अक्सर बहुत कम बात करता और रोली के जवाब की प्रतीक्षा करता रहता। रोली कभी जवाब देती कभी उसके विश करने का उत्तर भी नहीं देती।

यूं तो रोली को कई अंजान ... नहीं क्योंकि वे फ्रेंड लिस्ट में हैं के मेसेज आते। प्रेम इज़हार करते। उसकी तारीफ करते वह तटस्थ होकर पढ़ती। चुप रहती। कोई लिखने की तारीफ करता। कोई सुंदरता की। कोई उसकी तस्वीर को चाय से भरे कप के ऊपरी सतह में पेश करता चित्र भेजता। कोई फूलों के बीच उसकी तस्वीर फोटो शॉप मिक्स करके भेजता। शांत स्वभाव रोली से बात न बढ़ने के एवज में या तो लोग चुप रह जाते या गालियाँ देते उसे घमंडी कहते। एटीट्यूट का आरोप लगता। वह तब भी चुप रहती। या तो अगला चुप हो जाता या अनफ्रेंड कर दिया जाता। जवाब देना रोली को जैसे कीचड़ में पत्थर फेंकना लगता। वह उनके आरोप पढ़ती इल्ज़ाम खुद पर ना लेती।

कुछ बहुत शालीनता से बातचीत करने वालों को रोली दुखी ना करती। बहुत आदर पूर्वक जवाब देती। बहुत कम शब्दों में वार्तालाप खत्म कर देती। अमूमन उन्हें सुनती रहती। खुद को समझाती यह फेसबुक है रोली ... कोई इसे सीरियसली नहीं लेता और तुमने भी इसे सीरियसली नहीं लेना चाहिए। समाज सुधारकों, पत्रकारों और वरिष्ठों को रोली अखबार की तरह ही रोज पढ़ती और जानकारियों से लैस होती जाती। वहीं कुछ पोस्ट इतनी बकवास या अश्लील होती कि उसका मन करता ब्लॉक कर दे। रोली भी धीरे-धीरे हर स्तर के लोगों को उनके स्तर से ही जज करती और बात आगे नहीं बढ़ने देती। उसके लिए फेसबुक एक खिड़की थी जिससे दिखाई देने और पसंद आने वाले रंगों का चुनाव वह खुद करती और खुश रहती।

फेसबुक में कुछ बहुत बुरे अनुभव से वह दो-चार हुई। कोई उसका नंबर पाने की ज़िद के बाद निरंतर मेसेंजर कॉल करता रहा। कोई वाटसप पर बतियाने की गुजारिश के सफल ना होने पर उसे बेहूदा कहता चैट बंद करता, सुकून पहुँचाता। कोई लिखता ही चला जाता बिना उसके जवाब का इंतजार किए। किसी के रोज़ गुलाब का फूल भेजने से उसे ऊब होती। कोई रोज भगवान को जैसे मेसेंजर पर ही पूजता। कोई बिना बात दुआएँ दिये जाता। कई फेसबुक पोस्ट पर कमेंट को गाली-गलौज में तब्दील होते देखना उसे बुरा लगता। कई मित्र इकतरफा प्यार के सिर्फ इजहार से खुश थे। कई जवाब के इंतजार से दुखी। कईयों ने खेल समझा कई संजीदगी से जुड़े रहे। रोली यथासंभव खुद को भावनात्मक रूप से दूर रखते अपने काम से काम रखती और लोगों को उनके ही हाल पर छोड़ देती।

अन्य मित्रों की तरह ही रोली जिम्मी फर्नांडीस से सीमित बातचीत को आगे तवज्जु नहीं देती परंतु उसके बारे में सोचती रहती। घर के कामों को सुबह से लगकर जल्द खत्म करना। कुछ किताबें, अखबार, थोड़ी बातचीत के बाद वह ऊब कर फेसबुक खोल लेती जैसे मन हल्का कर रही हो। मेसेंजर में जिम्मी फर्नांडीस का मेसेज देखती। वह कभी ऑनलाइन होता कभी नहीं। इस बार रोली ने जवाब में गुड मॉर्निंग लिखा और प्रतीक्षा करने लगी।

"हाउ आर यू?" उसने पूछा

"फ़ाइन" रोली ने लिखा।

रोली उसके वाल की तस्वीरों को देखने लगी जो प्रकृति का संजोग आकर्षक दृश्य थे। वह बिना आगे कुछ लिखे देर तक ऑनलाइन रहा। दोनों के बीच कोई बात नहीं हुई। रोली उसके वाल पर बहुत सुंदर साहित्यकारों के कोट पढ़ती रही जो जिम्मी हफ्ते में एक दो बार लगा दिया करता है। पुनः जिम्मी ने लिखा ...

"यूअर हसबेंड?"

"जॉब इन मल्टीनेशनल कंपनी" रोली का जवाब था।

"वॉव गुड ... विच कंपनी?"

"यूएचजी"

"मीन्स"

"यूनाइटेड हैल्थ ग्रुप"

"देट्स नाइस"

कुछ देर चुप रहने के बाद दोनों ऑफलाइन हो गए। रोली अपने घर के काम में जुट गई।

काम करते हुए भी वह जिम्मी के प्रोफाइल में देखी तस्वीरों के बारे में सोचने लगती। 'क्या वाकई इतनी सुंदर जगहें भी होती होंगी?' उसने तो अपना भारत भी पूरी तरह से नहीं देखा। कश्मीर, दार्जलिंग, माउंट आबू, नैनीताल, ऊटी कई हिलस्टेशन के नाम उसने सुने थे पर कभी कहीं गई नहीं। मायके और ससुराल से इतर उसका कोई ठिकाना नहीं था। पैसे की कोई कमी नहीं थी पर दिल शायद छोटे थे। उसने ताड़ लिया था और कभी कहीं जाने की ज़िद नहीं की। पति, बच्चे और रिश्तेदारों में बंधीं रोली किताबों से दोस्ती कर बैठी और अब किताबों से दूर जाना उसे नहीं सुहाता। थोड़ा समय मिलते ही वह अक्षरों को मस्तिष्क में उतारने लगती। उम्दा उपन्यासों को मँगवाती और पढ़ती रहती। उपन्यास खत्म होने से पहले ही एक नया

उपन्यास या कहानी संग्रह उसके किताबों के शेल्फ की शोभा बढ़ा रहे होते।

अक्सर पति राघव के दोस्त एकाध पुस्तक ले जाते तो महीनों वापस नहीं करते। वह अक्सर पढ़ चुकी पुस्तकें ही माँगने वालों को थमा देती। गर वापस न भी आए तो कोई बात नहीं। इस तरह पढ़ने की शौकीन रोली कईयों को पढ़ने का मौका देती। राघव को उसके इस शौक से कभी कोई परेशानी नहीं रही। हाँ फेसबुक जॉइन करने के लिए उसने जरूर तूफान खड़ा किया था। बहुत दिन लगे थे रोली को उसे मनाने में। रोली के बचपन के दोस्तों से लंबे फोन कॉल के कम होते वह मामला भी शांत हो गया क्योंकि रोली अक्सर मेसेंजर पर अपने बिछड़े दोस्तों से चैट कर लेती और फोन करने की जरूरत ही नहीं पड़ती। लॉक डाउन ने उसके फेसबुक से जुडने की निरंतरता में बढ़ोत्तरी की और उसका साहित्य से लगाव दुगुना हो गया। एक दिन था जब वह नए आए कंप्यूटर के उपयोग से भी झिझकती थी लेकिन आज वह आसानी से ई-मेल करती है। वर्ड-पीडीएफ़ फाइल, पोस्टर, स्ट्रीम यार्ड, गूगल, फोटो शॉप, फोटो कोलाज कई चीजे जानती है जिसे वह फोन पर ही कर लेती है। कहानी या लेख वह अब लैपटॉप पर लिखती है।

रोली जब भी फेसबुक ऑन करती मेसेंजर पर पहले जिम्मी का मेसेज देखती जबकि वह दो चार दिन, कभी हफ्ते बाद उससे मुखातिब होता। रोली को उसका इंतजार बना रहता। यह जाने कैसा रिश्ता था जो उसे अपनी ओर खींचे जा रहा था। क्या जिम्मी से उसकी पसंद मिल रही थी ! या जाने क्यों वह उसकी प्रोफाइल देखती और राह ताकती खुद नहीं जानती। कई बार उसकी चैट पढ़ती जो दो चार बार की बातचीत का नतीजा था।

आखिर रोली ने खुद को कमजोर ना करते हुए अपना सारा ध्यान अपनी उपन्यास खत्म करने में लगाया। इस बार दिनों बाद उसने फेसबुक खोला तो जिम्मी का कोई मेसेज ना पाकर वह उदास होते हुए भी खुश हुई क्योंकि वह खुद को ऐसे फिजूल के रिश्ते में कैद होते नहीं देखना चाहती थी। रोली अपनी जिंदगी में खुश थी। अक्सर उसकी खुशियों को जिम्मी का चैट चौंका जाता। वह उसके शब्दों में अर्थ खोजने लगती। आखिर उसके ऐसा लिखने का क्या मतलब होगा ! वैसा लिखने का क्या मतलब होगा ! लेकिन वह कोई नतीजे तक नहीं पहुँच पाती।

महीनों बाद उसकी जिम्मी से चैट हुई। उसके "हाई" का जवाब रोली ने 'हैलो' से दिया। अचंभित हुई रोली जब उसके लिखा

"डियर सेंड मी यूअर फोटो"

"वाइ"

"वांट टु सी"

"बट वाइ ?"

"टु शो माइ फ्रेंड्स ... यू आर माइ इंडियन फ्रेंड"

"नो" रोली ने लिखा और सोचने लगी। मेरी प्रोफाइल में तो मेरी कई तस्वीरें है जिसे वह देख सकता है जाने क्यों उसने फोटो माँगा। ठीक उसी समय उसने जिम्मी का भेजा मेसेज देखा।

"रोली यू आर वेरी सेक्सी"

"वॉट" रोली आश्चर्य चकित थी।

"इन रेड सारी ... प्रोफाइल फोटो"

"..." रोली को कुछ लिखते ना बना।

"यू आर वेरी ब्यूटीफूल"

"थैंक्स" रोली ने सहमते लिखा और लिखा "डोंट कॉल मी सेक्सी"

"बट ... यू आर सेक्सी"

"स्टॉप इट ... "

"इन प्रोफाइल फोटो यू आर रिएलि लूकिंग सेक्सी"

"डोंट यूस दिस वर्ड ... यम नॉट लाइक इट"

"बट इट्स ट्रू"

"इन इंडिया ... इट्स लाइक .... ए ए ए बैड वर्ड"

"बट इट्स ए कॉम्प्लिमेंट डियर"

"आई डोंट लाइक" रोली ऑफलाइन हो गई।

बौखलाहट उस पर सवार हो चुकी थी। उफ़्फ़ ... "बट इट्स ए कॉम्प्लिमेंट डियर" ... उसने अपने कान हाथों से बंद कर दिए। उसके दिमाग में 'सेक्सी' शब्द बार-बार घूमता उसे असहज करता। वह झटक देती और अपने कामों में व्यस्त हो जाती। उसने सोच लिया दोबारा जिम्मी ने इस शब्द का इस्तेमाल किया तो वह उसे अनफ्रेंड कर देगी। उसे ब्लॉक कर देगी। आखिर ड्रायव्हर ही तो है इसलिए ऐसे शब्दों का इस्तेमाल उसके लिए सहज ही बोलचाल की भाषा हो सकती है। खीज़ कर वह कई प्रश्न खुद से पुछती और खुद ही उसका उत्तर भी देती जाती। जाहीर सी बात है कि जिम्मी के शब्दों ने उसके दिमाग में तहलका मचा दिया था।

उस दिन के बाद सुबह से वह घर काम में उलझी रहती। अपने आप को अति व्यस्त रखने की कोशिश करने लगी। नेट पर फिल्में देखी। सीरियल में मन लगाया। नए पकवान ट्राय किए ताकि उसका ध्यान जिम्मी की ओर ना जाए पर सब व्यर्थ। हर सोच का सिरा उस तक आकर रुक जाता। उसे इस तरह का संबोधन किसी से कभी मिला नहीं था। उसने खुद को मनाने की कोशिश की। ऐसे तो लोग कुछ भी फेसबुक पर लिखते रहते है उसे किसी के कहे से इतना मन से लगाने की जरूरत नहीं है। उसकी खुद की सहजता उसके लिए जरूरी

थी जो चाह कर भी उसे मिल नहीं पा रही थी। उस दिन के बाद से वह पति राघव से भी ठीक से बात नहीं कर पा रही थी। बच्चे उसकी खीज़ समझ कर उससे दूरी बनाए हुए थे। कुछ दिन बाद आखिरकार उसने मुद्दे को सॉर्ट-आउट करने की सोची और समय निश्चित कर फेसबुक को ऑन किया। कई घंटे फेसबुक पर ऑनलाइन रही पर जिम्मी नहीं आया न ही उसकी हरी रोशनी दिखी। रोली तय समय पर रोज फेसबुक पर ऑनलाइन रहती पर वह दिखाई नहीं देता। उसने फेसबुक पर जाना बंद कर दिया। जैसे-तैसे उसने खुद को सहेजा। शब्दों से भी कोई इस आधुनिक समय में इतना परेशान होता है भला ... और अपनी सादगी पर वह भीतर ही भीतर घुट कर रह जाती।

अबकी लगभग पंद्रह दिन बाद उसने फेसबुक लॉग इन किया। वह लियो टोल्स्टोय के अभी अभी खत्म किए उपन्यास 'अन्ना केरेनिना' के बारे में पोस्ट करने लगी। उपन्यास रुचिकर था। मित्रों के कमेंट आने लगे। वह उपन्यास के बारे में कमेंट का जवाब देकर मित्रों को जानकारी दे रही थी। ठीक उसी समय मेसेंजर में जिम्मी का मेसेज आया ...

"हाई सेक्सी ... " पढ़कर रोली आपे में न रही।

"आई सेड़ देट डे .... डोंट से अगेन" रोली ने गुस्से में लिखा। जिम्मी की ओर से कोई जवाब नहीं आया।

"...." उसकी खामोशी बरकरार रही।

"अदर वाइस आइ विल ब्लॉक यू" रोली ने सख्त होकर लिख दिया। कोई जवाब नहीं पाकर रोली को कुतूहल हुआ। वह जिम्मी के कुछ लिखने का इंतजार करने लगी। कोई मेसेज न आता देख रोली ने पूछा ...

"वाइ डीड यू सेंड मी फ्रेंड रिक्वेस्ट?" (तुमने फ्रेंड रिक्वेस्ट क्यों भेजा था?)

"सॉरी ... बिकस यू आर लूकिंग वेरी सेक्सी अण्ड इन लंदन दिस इस नॉट ए बैड थिंग ऑर बैड वर्ड" (माफी ... क्योंकि तुम बहुत सेक्सी दिखती हो और लंदन में यह कोई बुरी बात या शब्द नहीं।)

"आइ थॉट यू लाइक माय लिट्रेचर बेस्ड पोस्ट" (मैंने सोचा था तुम मेरी साहित्यिक पोस्ट पसंद करते हो) रोली ने लिखा।

"नो ..... आई डोंट नो हिन्दी" (नहीं ... मुझे हिन्दी नहीं आती)

"देन ... वाइ आर यू इन माय फ्रेंड लिस्ट ? .... आई यम अनफ़्रेंडिंग यू" (तब ... तुम मेरे फ्रेंड लिस्ट में क्यों हो? ... मैं तुमको अनफ्रेंड कर रही हूँ)"

"प्लीज डोंट .... प्लीज़ प्लीज़ ... आई बेग़ यू ... डोंट अनफ्रेंड मी" जिम्मी का मेसेज आया।

रोली मेसेज को देखती रह गई। उसका याचना भरा मेसेज वह बार बार पढ़ती रह गई। जिम्मी ने फिर रोली को कभी कुछ नहीं लिखा। ना कभी कोई पोस्ट लाइक की। ना ही रोली की तस्वीर को कभी लाइक या कमेंट किया। रोली को उसने फिर कभी शिकायत का मौका देना तो दूर उससे बात करने की भी कोशिश नहीं की।

जिम्मी अभी भी रोली की फ्रेंड लिस्ट में है और रोली उसके पोस्ट की तस्वीरें देखा करती है। "बट इट्स ए कॉम्प्लिमेंट डियर" यह वाक्य अब भी उसे विचारों में चौंकाते रहते। वह सिर झटक देती और काम में लग जाती।

डॉ. रीता दास राम

(कवयित्री एवं लेखिका)

नाम :- डॉ. रीता दास राम **संप्रति** : कवयित्री / लेखिका **शिक्षा** : एम.ए., एम फिल, पी.एच.डी. (हिन्दी) मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई, **निवास: पता** :- 34/603, एच॰ पी॰ नगर पूर्व, वासीनाका, चेंबूर, मुंबई – 400074, **सम्पर्क** – 09619209272, **ई मेल** : reeta.r.ram@gmail.com

कविता संग्रह : **"तृष्णा"** प्रथम कविता संग्रह 2012, **"गीली मिट्टी के रूपाकार"** दूसरा काव्यसंग्रह 2016 में प्रकाशित, **सम्मान : 'शब्द प्रवाह साहित्य सम्मान'** 2013. **'अभिव्यक्ति गौरव सम्मान'** – 2016 **'हेमंत स्मृति सम्मान'** 2017, **'शब्द मधुकर सम्मान- 2018'**, साहित्य के लिए **'आचार्य लक्ष्मीकांत मिश्र राष्ट्रीय सम्मान'** 2019, कवियों की संग्रहीत पाँच **कविता संकलन पुस्तकों** में कविताएं प्रकाशित, 'दस्तावेज़', 'मृदंग', 'नवनीत', 'चिंतन दिशा', 'आजकल', 'वागर्थ', 'पाखी', 'शुक्रवार', 'निकट', 'लमही', 'उत्तर प्रदेश' सहित **विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं** में कविताएं प्रकाशित। **वेब-पत्रिका/ई-मैगज़ीन/ब्लॉग/पोर्टल** :- **'मृदंग'** अगस्त 2020 ई पत्रिका, **'मिडियावाला'** पोर्टल **'बिजूका'** ब्लॉग व वाट्सप, **'शब्दांकन'** ई मैगजीन, **'रचनाकार'** व **'साहित्य रागिनी'** वेब पत्रिका, **'नव प्रभात टाइम्स.कॉम'** एवं **'स्टोरी मिरर'** पोर्टल, समूह आदि में कविताएँ प्रकाशित। **रेडिओ** : वेब रेडिओ 'रेडिओ सिटी (Radio City)' के कार्यक्रम 'ओपेन माइक' में कई बार काव्यपाठ एवं अमृतलाल नागरजी की व्यंग्य रचना का पाठ। **प्रपत्र प्रस्तुति** : एस.आर.एम. यूनिवर्सिटी चेन्नई, बनारस यूनिवर्सिटी, मुंबई यूनिवर्सिटी एवं कॉलेज में इंटेरनेशनल एवं नेशनल सेमिनार में प्रपत्र प्रस्तुति एवं पत्र-पत्रिकाओं में आलेख प्रकाशित।

मित्रता एक कसौटी

-डॉ.सविता सिंह

उत्तर प्रदेश के एक छोटे से जिला बहराइच में अंग्रेजी के प्राध्यापक रहते थे जिनका नाम था, ठाकुर दलमर्दन सिंह राठौर। वह बड़े अनुशासित व्यक्ति थे और हर वक्त किताबों से प्रेम करने वाला उनका व्यक्तित्व दूसरों को परेशान करता था। अपने हर बच्चे को वह एक ही बात सिखाते कि पुस्तक से अच्छा कोई मित्र नहीं होता! यदि उनका कोई बच्चा उन्हें बाहर खेलता मिल जाता तो कान उमेठ कर वह उसे घर में ले आते और कहते क्यों पढ़ना अच्छा नहीं लगता?

ठाकुर साहब अपने क्षेत्र में ज्ञान के लिए बड़े प्रसिद्ध थे।

उनके एक पुत्री थी जो बड़ी नटखट थी। हर समय चुलबुली सी पूरे घर में घूमती रहती थी लेकिन पिता के घर में दाखिल होते ही जब उससे वह पूछते, आज क्या पढा? वह तपाक से जवाब देती आपकी किताब जो आप छोड़ गए थे। धीरे-धीरे पिता उसे पढ़ने के गुण बताते रहे और बेटी पुस्तकों को अपना दोस्त बनाती रही, उसे एक बात समझ में आ गई थी कि यदि पिता को खुश देखना है तो पुस्तकों के साथ रहना होगा!

धीरे-धीरे बेटी युवा हुई स्नातक की पढ़ाई समाप्त कर स्नातकोत्तर का आखिरी परीक्षा का समय आने से पहले ही उसका विवाह हो गया और वह ससुराल चली गई। पिता से दूर जाकर उसे पिता की बात बहुत याद आती और उसने तय किया कि अब अपने जीवन में हर वर्ष वह कोई ना कोई डिग्री अवश्य लेती रहेगी। बस उसने इसे अपना नियम बना लिया और धीरे-धीरे वह हर वर्ष एक डिग्री लेती गई और एक दिन स्कूल से पढ़ाना आरंभ कर कॉलेज में प्रोफेसर बन गई।

अब तो पढ़ना मानो उसके लिए इतना जरूरी हो गया जैसे हवा पानी और भोजन। आज वह बुढ़ापे की दहलीज पर कदम रख चुकी है। अवकाश ग्रहण के उपरांत भी हर वक्त लिखना पढ़ना उसकी आवश्यकता बन गई है। इसी कारण से अब अक्सर उसके मित्र कहते हैं ...अब तो तुमने पूरी जिंदगी अपनी जिम्मेदारी निभा ली, अब क्यों पुस्तकों के साथ रहती हो? सभी उसे छेड़ते रहते लेकिन तभी उसे अपने पिता याद आ जाते और वह सोचती है कि यह पुस्तकें केवल पुस्तके नहीं है! यह मेरे पिता हैं जो मेरे साथ हर वक्त ज्ञान के रूप में रहते हैं।

अचानक एक दिन खबर आई कि महामारी पूरे विश्व में फैल गई और सभी को अपने-अपने घरों में रहना पड़ेगा। हफ्ते भर तो सबको बहुत अच्छा लगा क्योंकि काम पर जाने वालों को आराम प्रिय होता है। घर के सभी काम जो नहीं हो पाते थे उन्हें किया गया और सोचा ईश्वर का यह वरदान है जो कुछ दिन परिवार के साथ बैठने के लिए समय दिया गया है। धीरे-धीरे सभी मित्रों के फोन आने लगे बोर हो रहे हैं अब। घर में अच्छा नहीं लग रहा है। बिना बाहर निकले बेचैनी हो रही है। लेकिन वह चुलबुली लड़की हर वक्त हृदय की गहराई से अपने पिता का आभार व्यक्त कर रही थी जिसने उन्हें किताबों के रूप में मित्र दे दिया था और उसे कभी बोर नहीं होने दिया, घर के अंदर रहने में क्योंकि जहाँ एक ओर माँ ने वात्सल्य और अध्यात्म का ज्ञान दिया था उसे बचपन में वहीं पिता ने पुस्तक और ज्ञान को मित्र बनाना सिखाया था! अब तो स्थिति यह है कि वह चुलबुली लड़की पूरे जीवन को ही तपस्या बना बैठी। बड़ी आसानी से और सुकून से उसने विश्व के इस कठिन दौर को प्यार से पूरे विश्व के लिए प्रार्थना करने में निकाल दिया। उसे पता ही नहीं चल पाया कब सुबह और शाम हो जाती है और समय इतनी आसानी से बीत जाता है कि बस नियम का पालन भी हो जाता है और ज्ञान का संचार भी। माता-पिता यदि चाहें तो अपने बच्चों में ऐसे संस्कार डालकर हर चुनौती के लिए तैयारी करवा सकते हैं।

डॉ.सविता सिंह
पूर्व विभागाध्यक्ष,हिंदी विभाग
ए. एम. कॉलेज, हड़पसर, पुणे,
महाराष्ट्र -28

इश्क़ वो आतिश है ग़ालिब

-सुशांत सुप्रिय

सुमी

करवट बदलते-से समय में वह एक उनींदी-सी शाम थी। एक मरते हुए दिन की उदास , सर्द शाम । काजल के धब्बे-सी फैलती हुई। छूट गई धड़कन-सी अनाम। ऐसा क्या था उस शाम में ? धीरे-धीरे सरकती हुई एक निस्तेज शाम थी वह जिसे बाक़ी शामों के बासी फूलों के साथ समय की नदी में प्रवाहित किया जा सकता था। उस शाम की चटाई को मोड़ कर मैंने रख दिया था एक किनारे। लेकिन ज़रूर कुछ अलग था उस शाम में। घुटने मोड़े वह शाम अपनी गोद में कोई ख़ास चीज़ समेटे थी। कौन जानता था तब कि उन यादों के रंग इतने चटखीले होंगे कि दस बरस बाद भी ... कौन जानता था कि एक सलोना-सा सुख जो अधूरा रह गया था उस शाम , कि एक छोटी-सी बेज़ुबान इच्छा जो ख़ामोश रह गई थी उस शाम , आज न जाने कहाँ से स्वर पा कर कोयल-सी कूकने लगेगी।

मेरे जीवन में। कौन जानता था कि समय के अँधियारे में अचानक उस शाम की फुलझड़ियाँ जल उठेंगी और रोशन कर देंगी तन-मन को। मुझे कहाँ पता था कि उस शाम के बगीचे में मौलश्री के शर्मीले , ख़ुशबूदार फूल झरते रहे थे। आज कैसे दिसम्बर की वह शाम जून की इस सुबह में समय के आँगन में मासूम गिलहरी-सी फुदक रही है।

यादों के समुद्र के इस पार मैं हूँ। समय की साँप -सीढ़ी से बेख़बर। वह शाम आज यादों के समुद्र-तट पर स्वागत के सिंह-द्वार-सी खड़ी है। मैं हैरान हूँ वहाँ तुम्हें खड़ा पा कर -- लहरों के हहराते शोर के पास आश्वस्ति-सी एक सुखद उपस्थिति ... कॉलेज में भैया के दोस्त थे तुम। हमारे यहाँ बेहद पढ़ाकू माने जाते थे तुम -- शिष्ट और सौम्य-से। न जाने क्यों तुम्हें देख कर मेरे मन में गुदगुदी-सी होने लगती थी ... तुम जब मुस्करा कर मुझे ' हलो सुमी ' कहते तो भीतर तक खिल जाती थी मैं -- मेरे गालों की लाली से बेख़बर थे क्या तुम? तुम्हारी हर अदा को कनखियों से देखती मैं तुम्हारी ख़ामोश उपस्थिति से भी खुश हो जाती।

पहली बार यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी में मिले थे तुम मुझे - लम्बी चोटी में सलवार-क़मीज़ पहने एक परेशान-सी लड़की कोई किताब ढूँढ़ती हुई। तुमने उस दिन लाइब्रेरी की हर शेल्फ़ छान मारी थी और आख़िर वह किताब मुझे ढूँढ़ कर दे ही दी थी। मैं तुम्हारी कौन थी? ऐसा क्यों था कि जब तुम काफ़ी दिनों तक दिखाई नहीं देते या घर नहीं आते तो मैं गुमसुम रहने लगती थी? चाय में चीनी की बजाए नमक डाल देती थी? दाल या सब्ज़ी बिना नमक वाली बना देती? रात में कमरे की बत्ती जलती छोड़ कर चश्मा पहने-पहने सो जाती ?

जिस दिन पता चला कि तुम अब एम. बी. ए. की पढ़ाई करने आइ. आइ. एम., अहमदाबाद चले जाओगे , मैं बाथरूम में फिसल कर गिर गई थी। खाना बनाते समय मैंने अपना हाथ जला लिया था। उसी दिन मैंने यह कविता लिखी थी। शीर्षक था : "क्या तुम जानते हो, प्रिय?"। कविता थी: "ओ प्रिय, मैं तुम्हारी आँखों में बसे / दूर कहीं के गुमसुम खोएपन से / प्यार करती हूँ, / मैं घाव पर / पड़ी-पपड़ी -सी / तुम्हारी उदास मुस्कान से / प्यार करती हूँ, / मैं हमारे बीच पड़ी / अनसिलवटी चुप्पी से भी / प्यार करती हूँ, / हाँ प्रिय / मैं उन पलों से भी / प्यार करती हूँ / जब एकाकीपन से ग्रस्त मैं / तुम्हारे चेहरे में / अपने लिए / आईना ढूँढ़ती रहती हूँ / और खुद को / बहुत पहले खो गई / किसी अबूझ लिपि के / चटखते अक्षर-सी / बिखरती महसूस करती हूँ ... "भैया को तुम्हारे प्रति मेरे आकर्षण का पता चल गया होगा तभी तो एक दिन उन्होंने मुझसे कहा था," सुमी , इंडिया में कास्ट एक बहुत बड़ा फ़ैक्टर होता है। हमें इसी समाज में रहना होता है। जात-पात के बंधनों को हम इग्नोर नहीं कर सकते।"

तुम और मैं -- हम अलग-अलग जातियों के थे। तुम दलित थे जबकि मैं ब्राह्मण थी। हालाँकि इससे तुम्हारे प्रति मेरे आकर्षण में कोई अंतर नहीं पड़ा।

वह शाम कैसी थी। उस शाम जब मैं बुखार में पड़ी थी, तुम भैया से मिलने घर आए थे। अगले दिन तुम अहमदाबाद जा रहे थे। क्या यह दैवी इत्तिफ़ाक़ नहीं था कि उस शाम घर पर और कोई नहीं था? सब लोग एक शादी में गए थे।

मैंने दरवाज़ा खोला था और तुम जैसे अधिकार -पूर्वक भीतर आ गए थे। क्या मेरा चेहरा बुखार की वजह से तप रहा था? वर्ना तुमने कैसे जान लिया कि मेरी तबीयत ठीक नहीं थी?

"अरे सुमी , तुम्हें तो तेज बुख़ार है। " मेरे माथे को छू कर तुमने कहा था।

मेरे माथे पर तुम्हारे हाथों का स्पर्श पानी की ठंडी पट्टी-सा पड़ा था।

"दवाई ले रही हो कोई?" तुम्हारे स्वर में चिंता थी। ऐसा क्या था जो तुम्हें भी मेरी ओर खींचता था? क्या तुम्हें इसका अहसास था?

तुम देर तक मेरे सामने के सोफ़े पर बैठे रहे थे। क्या इस बीच मेरा बुखार बढ़ गया था ? मेरी आँखें मुँद-सी क्यों गई थीं? जब आँखें खुली थीं तो तुम मेरे बगल में बैठे चिंतित स्वर में पूछ रहे थे, "सुमी, क्या तुम ठीक हो? तुम्हारा बुख़ार बहुत तेज़ लग रहा है। लाओ, मैं तुम्हारे माथे पर ठंडे पानी की पट्टी कर दूँ।" यह सुन कर बीमारी में भी मैं कुछ सकुचा-सी गई थी ।

तुम बहुत देर तक मेरे बगल में बैठ कर मेरे माथे पर ठंडे पानी की पट्टियाँ बदलते रहे थे। मेरी आँखें मुँद गई थीं। अपने कोमल स्पर्श की हिलोरें मेरे भीतर छोड़ कर तुम बाक़ी लोगों के आने से पहले ही चले गए थे। मुझे एक पारदर्शी, झीने सुख में भिगो कर।

बस, इतना ही तो हुआ था उस आख़िरी शाम ... जब तुम मुझसे मिले थे।

किस्मत भी कैसे-कैसे खेल खेलती है। क्या नाम था तुम्हारे और मेरे इस रिश्ते का? कल तुम अहमदाबाद चले जाने वाले थे। हमारे बीच अलग-अलग जातियों की ऊँची दीवार थी ...

लेकिन तुम्हारा यह लम्बा जीवन इतना सूना और उदास कैसे रह गया? क्या तुम्हारी पतंग का कोई धागा मेरी उंगली में बँधा रह गया था? एक बार कहा तो होता कि तुम भी मुझ से ...

कल दस बरस बाद जब अहमदाबाद आई और कॉन्फ्रेंस में अचानक तुम से मुलाक़ात हो गई तो मेरे मन के ताल में तुम्हारी उपस्थिति गुड़ुप्-सी पड़ी, स्मृतियों की अनगिनत लहरें जगाती हुई। हिम्मत करके मैंने भरपूर निगाहों से तुम्हें एकटक देखा। तुम अब भी उतने ही आकर्षक लगे। क्या मैं तुम्हारी आँखों में भी अपने लिए चाहत के रंग देख रही थी?

हाँ, मैं तुमसे प्रेम करती थी। पर कभी कह नहीं पाई। उस शाम भी नहीं जो पीले पन्नों वाली किसी पुरानी किताब में दबे किसी मोरपंख-सी आज बाहर निकल आई है। मैं किसी निर्जन तट पर पड़ी सीपी थी , तुम्हारी उस लहर की प्रतीक्षा में जो मुझे फिर से भिगो कर साथ बहा ले जाएगी अपने अनंत समुद्र की गोद में। और आख़िर कल शाम मैं उस समुद्र के आगोश में थी ...

नितिन....

अतीत के समुद्र से यादों के मोती चुगने की हसरत अब भी जवाँ है हमारे दिलों में। एक ऐसा अतीत जिस में मैं था, तुम थी, और अब हम उन यादों के मोतियों से भविष्य के लिए एक सुंदर माला बनाना चाहते हैं । बीते समय को लौटा लाने की चाहत की डोर से बँधे हैं हम दोनों। स्मृतियों के वसंत में कोई कोयल फिर से कूक रही है अस्तित्व की अमराइयों में। वर्षों के पतझड़ के इस पार रंग-बिरंगे फूल फिर से खिलने लगे हैं। दु:स्वप्नों के अँधेरे को चीर कर सूर्य की सुनहरी किरणें हम तक फिर से पहुँचने लगी हैं।

शायद तब हम स्वयं भी अपने-अपने दिलों की धड़कनों से पूरी तरह परिचित नहीं थे। तुम तब उन्नीस की थी और मैं इक्कीस का । मुझे हैरानी है कि दस बरस का लम्बा अंतराल भी स्मृति की स्लेट से उस शाम की छवि को नहीं पोंछ पाया । वह छवि हमारी यादों की डाल से अटकी किसी पतंग-सी रह-रह कर फड़फड़ाती रही। वह शाम ... कितनी ख़ामोश और मासूम-सी थी। तुम थी, मैं था और तनहाई थी। कुछ इच्छाओं के फड़फड़ाते पंख थे। कुछ उम्मीदों के इंद्रधनुषी सपने थे। कुछ अस्पष्ट-सी छवियाँ थीं। कुछ नि:शब्द-से स्वर थे। खिड़की के बाहर पूर्णिमा का गोल चाँद निकल आया था। चुप्पी का संगीत चारो ओर बज रहा था। तुम्हारे माथे पर ठंडे पानी की पट्टियाँ बदलते हुए मुझे तुम अपनी-अपनी-सी क्यों लगी थी? तुम से मेरा कौन-सा अनाम नाता था? लाइब्रेरी में जब तक मैंने वह किताब ढूँढ कर तुम्हें दे नहीं दी थी , तब तक मुझे चैन क्यों नहीं आया था? तुम्हारी मुस्कान मुझमें जलतरंग-सी क्यों बजने लगती थी? क्या तुम्हारे मन में भी मेरे लिए कुछ था?

उस शाम तुम मेरे कितनी क़रीब थी। तुमने काली जीन्स पर लाल स्वेट-शर्ट पहन रखा था। हालाँकि तेज बुख़ार की वजह से तुम्हारा फूल-सा चेहरा मुरझा गया था । मैं जिस पंखुड़ी को जानता था, वह कुम्हलाई हुई थी । खिड़की से चाँदनी का एक टुकड़ा आ कर तुम्हारी गोद में बैठ गया था। और मुझे हाल ही में लिखी हुई अपनी एक कविता याद आ गई थी। शीर्षक था: " तुम जैसे "। कविता थी: "ओ प्रिये, / तुम जैसे / एक उन्मत्त / युवा भँवर, / तुम जैसे / सप्तम स्वर में बजता / एक पियानो, / तुम जैसे / एक ऋचा आकाश तक जाती हुई, / तुम जैसे / फ़ौलाद और चाशनी की एक डोरी / मुझ से बँधी हुई , / तुम में आबाद हैं / प्रेम की अनगिनत अनुगूँजें, / जो वसंत करता है / फूलों के साथ / वह करना चाहता हूँ / मैं तुम्हारे साथ / ओ प्रिये ... "

मैं तुम्हें प्यार से छूना चाहता था। लेकिन जब मैंने बुखार जाँचने के लिए तुम्हारा माथा छुआ तो चौंक गया उस तपिश से। तुम्हारे माथे पर ठंडे पानी की पट्टियाँ बदलते हुए मैंने ऐसा क्यों चाहा कि तुम्हें अपने सीने में भींच लूँ? तुम्हारे चेहरे पर एक उदास मुस्कान थी।

सुशांत सुप्रिय
लोक सभा सचिवालय, नई दिल्ली में अधिकारी
निवास:
A-5001, गौड़ ग्रीन सिटी, वैभव खंड, इंदिरापुरम्, ग़ाज़ियाबाद- 201014
(उ.प्र.) मो : 8512070086
ई मेल : sushant1968@gmail.com

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

कहानी

सुरक्षा कवच

-डॉ. अर्चना दुबे

"अरे छवि, इन्हें क्यों ले आयी तुम?" गाड़ी में समान रखते हुए प्रभात बाबू ने अपनी छोटी बेटी छवि के हाथ में नन्हें लड्डू गोपाल की मूर्ति को देखकर पूछा। "पापा, हमारे साथ भैया भी तो चलेंगे न..., क्या वो घर में अकेले रहेंगे?"; छवि ने बड़े ही सहजता से कहा।

प्रभात बाबू सरकारी दफ्तर में शाखा प्रबंधक के रूप में कार्यरत थे। उस समय प्रभात बाबू की पोस्टिंग चित्रकूट के करवी जिले में हुई थी। पत्नी और बच्चों की बहुत समय से इच्छा थी मैहर की शारदा देवी के दर्शन की। प्रभात बाबू बहुत ही धार्मिक और ईश्वर में आस्थावान व्यक्ति थे साथ ही सहृदय और दयालु भी। उनके सभी परिचित और साथ काम करने वाले उनके शील स्वभाव और उदार हृदय की अक्सर प्रशंसा किया करते। उनके परिवार में भी हमेशा धर्म-कर्म का माहौल बना रहता था। आज छुट्टी का दिन था और कई दिन बाद दफ्तर के काम से थोड़ी फुरसत मिली थी, इसलिए प्रभात बाबू अपने परिवार के साथ सुबह ही अपनी कार से सतना, मैहर देवी के दर्शन के लिए निकलने की तैयारी करने लगे।

प्रभात बाबू की दो बेटियाँ थीं। बड़ी बेटी प्रज्ञा उस समय पच्चीस वर्ष की थी जो एम. एस. डब्लू. की पढ़ाई कर रही थी तथा छोटी बेटी छवि दसवीं कक्षा में पढ़ रही थी। प्रभात बाबू के कोई बेटा नहीं था। छुटपन में जब उनकी बेटियाँ एक बार रक्षाबंधन के दिन उनसे पूछती हैं कि, "पापा हम किसे राखी बाँधे, हमारा तो कोई भाई नहीं है, हमको भी भाई चाहिए।" बेटियों की मासूम सी जिद्द को देखकर प्रभात बाबू उसी शाम लड्डू गोपाल जी की छोटी सी मूर्ति ले आये और अपनी बेटियों को बुलाकर उनके हाथ में वो मूर्ति देते हुए बोले "ये लो अपने भैया, इन्हीं को राखी बाँधा करो अब से, यही तुम्हारे भाई हैं।" यह बात उनकी दोनों बेटियों के भोले मन को छू गयी और तब से लड्डू गोपाल उनके भईया बन गए। वे दोनों जहाँ जाती भैया को साथ जरूर लेकर चलती। उस दिन जब देवी के दर्शन के लिए निकलने लगे तो छवि ने धीरे से अपने भईया को साथ ले लिया।

प्रभात बाबू ने बेटी को मुस्कुराते हुए देखकर उसके हाथ से लड्डू गोपाल को लेकर कार में गियर हैंडल के पास खाली जगह पर सामने विराजमान कर लिया। उस दिन उस धार्मिक यात्रा में वे अपनी धर्मपत्नी उषा दोनों बेटियों छवि और प्रज्ञा और अपने साढ़ू के पाँच वर्ष के बेटे बबलू को भी साथ ले जा रहे थे। छुट्टी के माहौल में और इतने दिन के बाद मनचाही यात्रा पर निकलने की वजह से सब ही बहुत खुश थे और पूरी तरह से सब मस्ती से भरे हुए थे।

प्रभात बाबू भी हँसी-मज़ाक करते हुए कभी तेज कभी धीमी गाड़ी चलाये जा रहे थे। गाड़ी मझगवां की घाटी से होकर गुजर रही थी। यह घाटी वाला रास्ता बहुत ही खतरनाक रास्ता था। यहाँ यदाकदा दुर्घटना होती ही रहती थी। चूँकि हाड़ी रास्ता था तभी गाड़ी चलाते हुए अचानक एक अंधामोड़ (डेडटर्न) आया। गाड़ी मोड़ते ही सामने से तेज रफ्तार से एक मोटर साइकिल आ रही थी जो गाड़ी से टकराने ही वाली थी। यह देखते ही प्रभात बाबू ने बचने के लिए सीधे हाथ की तरफ गाड़ी को टर्न दिया और दुबारा से जब सड़क पर गाड़ी वापस लाने लगे तो गाड़ी सड़क पर ना आकर पहाड़ी से नीचे की ओर जाने लगी और पलट गयी।

यह सब इतने जल्दी हुआ कि कुछ समझ में नहीं आया कि हो क्या रहा और गाड़ी उलटते-पलटते पहाड़ी से लुढ़कते हुए नीचे जाने लगी। प्रभात बाबू का ईश्वर में दृढ़ विश्वास था और वो जो कुछ भी हो रहा ईश्वर की इच्छा से हो रहा की मान्यता रखते थे। अतः ऐसी विकट स्थिति में भी उनकी आस्था डगमगायी नहीं। जब प्रभात बाबू ने यह महसूस किया कि गाड़ी पर अपना काबू खो चुके हैं तो उन्होंने कस के स्टीयरिंग पकड़ ली और अपनी आँख बंद कर लिए और अपने इष्टदेव कृष्ण का नाम मन ही मन जपने लगे। गाड़ी अपनी रफ्तार से कभी किसी पत्थर पर तो कभी किसी झाड़ी से टकराती हुई पलटती हुई लुढ़कती रही, कभी शीशे टूटने की आवाज आती, कभी कहीं टकराने की पर उन्होंने कस के स्टियरिंग को पकड़ा रखा और अपनी आंख बंद ही किये रहे। इस दौरान प्रभात बाबू ने महसूस किया कि एक आभामंडल उनके चारों ओर बनी हुयी है जैसे कोई सुरक्षा का घेरा सा हो। उस पुलिया के नीचे एक नदी थी नदी के पास के एक बड़े पेड़ से गाड़ी टकराकर बायीं ओर पलट गयी। उन्होंने धीरे से अपनी आँखें एक भयंकर दुर्घटना की कल्पना के साथ खोली कि सबकुछ खतम हो चुका होगा। आँखे खोलकर उन्होंने देखा तो कार के सामने का काँच आधा टूटा हुआ है और हवा में झूल रहा है, फिर उन्होंने पहले धीरे से अपने हाथ पैर हिलाकर देखे तो उन्हें सबकुछ ठीक है लगा। हाथ में दो- चार कांच के छोटे टुकड़े मात्र चुभे हुए थे और सर से हल्का खून निकल रहा था, उसके अलावा कहीं कोई चोट नहीं। फिर उन्होंने अपने साथ कि सीट पर जहाँ उनकी बड़ी बेटी प्रज्ञा बैठी थी उसे देखा तो वो

वहाँ मौजूद नहीं थी। प्रभात बाबू को अंदाजा लग गया कि सामने से टूटे हुए शीशे से वो गाड़ी से गिर गयी होगी। फिर पलटकर पीछे की सीट पर देखें तो बबलू और उनकी पत्नी उषा और छवि वहाँ नहीं थे। तभी पीछे की सीट के नीचे से आवाज आयी" पापा मैं यहाँ हूँ।" प्रभात बाबू ने देखा उनकी छोटी बेटी छवि सीट के नीचे से निकलते हुए बोल रही है। उन्होंने बेटी से पूछा, "बेटा तुम ठीक हो? तुम्हें कहीं चोट तो नहीं आयी है?" छवि ने कहाँ, "नहीं पापा मैं ठीक हूँ, मम्मी, प्रज्ञा दीदी और बबलू कहाँ है?" प्रभात बाबू ने कहाँ, "बेटा शायद वो गाड़ी से गिर गए हैं, रुको पहले मुझे सामने से बाहर निकलने दो और फिर तुम भी धीरे से यहीं से बाहर आ जाओ।" कहकर प्रभात बाबू सामने के टूटे हुए शीशे से उसी ओर जिस ओर कार पलटी हुई थी निकलने की कोशिश करने लगते है। कार से उतरकर वो छवि को भी बाहर निकालते हैं। फिर चारों ओर नजर घुमाते हैं तो उन्हें वहाँ उनकी बेटी प्रज्ञा और बबलू नहीं दिखाई देते। उनकी पत्नी उन्हें गाड़ी के नीचे आधा अंदर दबी हुई दिखाई देती हैं। वे गाड़ी को सरकाकर उन्हें निकालने की कोशिश करते हैं पर कुछ होता नहीं है तब वो यहाँ-वहाँ नजर दौड़ाते हैं और ऊपर देखते हैं तो वहाँ बहुत सी भीड़ इकठ्ठा होकर इस दुर्घटना को देख रही होती है। प्रभात बाबू मदत के लिए उनलोगों को हाथ दिखाते हैं तो उस भीड़ में से कुछ लोग उनकी तरफ आने लगते हैं। तभी उन्हें उनकी बड़ी बेटी प्रज्ञा सामने से आती हुई दिखती है। उसके साथ एक तीस-बत्तीस की उम्र का एक युवक भी साथ होता है। बेटी पास आती है प्रभात बाबू घबराकर उससे पूछते हैं, "बेटी तुम कहाँ थी? तुम्हें कहीं चोट तो नहीं लगी?" प्रज्ञा ने कहाँ, "नहीं पिताजी, मैं कार के सामने की कांच से टकराकर बाहर गिर गयी थी, शायद बेहोश हो गयी थी, होश आया तो हाथ की उँगली से खून बह रहा था, बहुत दर्द हो रहा था, तभी ये भईया कहीं से आये, उन्होंने मेरे इस घाव पर मिट्टी लगाई तो खून बहना बंद हो गया। बस और तो कहीं चोट नहीं लगी है, सिर्फ़ उँगली में दर्द हो रहा है।" तभी प्रज्ञा के साथ आये उस युवक ने प्रज्ञा को लड्डू गोपाल की मूर्ति देते हुए कहा, "ये लीजिये आपके लड्डू गोपाल, कार का एक्सीडेंट देखकर मैं नीचे आने लगा तो वहाँ झाड़ियों में मुझे ये पड़े मिले तो मैंने उठा लिया, मुझे लगा शायद आप ही के हों।" ऐसा कहकर वह युवक प्रभात बाबू के साथ उनकी पत्नी को कार के नीचे से निकालने में उनकी सहायता करने लगा, उसी समय और भी चार-पाँच व्यक्ति सहायता के लिए आ पहुँचे। सबने मिलकर कार को उठाया। गाड़ी उठाते ही सबको यह देख आश्चर्य हुआ कि उषा जी और गाड़ी के बीच में एक पत्थर है जिससे गाड़ी और उषाजी के बीच में आधे बित्ते का अंतर बना हुआ है। गाड़ी का पूरा भार उस पत्थर पर था ना कि उषाजी पर। प्रभात बाबू ने उषाजी को बाहर की ओर खींचा तो उनके कराहने की आवाज आयी। जिससे उन्हें यह अंदाजा लग गया कि उनकी पत्नी अभी जीवित थी । थोड़ी ही देर में उनकी पत्नी भी होश में आ गयी परन्तु उनका एक हाथ उठ नहीं रहा था, कंधे में बहुत दर्द हो रहा था।

उसी समय सतना की ओर से आती एक खाली कार आकर वहाँ रुकी और ड्राइवर ने देखा कि यहाँ एक्सीडेंट हुआ है तो वो नीचे आया और प्रभात बाबू से बोला, "मैं सतना गया था सवारी लेकर, अब वापस लौट रहा था, मैंने देखा कि यहाँ कोई दुर्घटना हुई है इसलिए गाड़ी रोककर नीचे आया। मेरी गाड़ी खाली है अतः आप जहाँ चलना चाहे मैं अपनी गाड़ी से ले चलूँगा। आप सब चलिए मेरी गाड़ी में, जिस भी अस्पताल जाना है चित्रकूट की ओर या सतना की ओर आप जहाँ कहें मैं ले चलता हूँ।" प्रभात बाबू ने उसे धन्यवाद कहा, मन ही मन ईश्वर को भी और तुरन्त सबको लेकर गाड़ी की ओर बढ़े लेकिन बबलू अब तक उन्हें नहीं मिला था। वो सब से पूछ रहे थे कि एक पाँच साल के बच्चे को देखा क्या किसी ने। ऊपर सड़क के पास पहुँचते ही उन्होंने देखा भीड़ के साथ किनारे पर बबलू भी सहमा हुआ अपनी कमर पकड़े बैठा हुआ है। बबलू को देखते ही पूरे परिवार की आंखों में खुशी छा जाती है। छवि भागकर बबलू को गोद मे उठा लेती है। बबलू और परिवार के सभी सदस्यों को सही सलामत पाकर प्रभात बाबू की घबराहट कम होती है। फिर उस व्यक्ति के कार में बैठकर वे सब सतना के अस्पताल जाते हैं। अस्पताल के डॉक्टरों द्वारा आवश्यकता के अनुसार सबका उपचार किया गया। केवल प्रज्ञा के उंगली की नस कट जाने की वजह से उसके हाथ की छोटी सी सर्जरी की गयी और उषा जी के कंधे की हड्डी टूट जाने के कारण उन्हें पास के बड़े अस्पताल ले जाकर हड्डी का ऑपरेशन करवाया गया। वे भी जल्दी ही ठीक हो जाती हैं।

इस बीच प्रभात बाबू की कार भी बनकर आ जाती है। इन सब में प्रभात बाबू के मित्र और उनके कार्यालय की ओर से उन्हें बहुत सहयोग मिलता है। वे सपरिवार सुरक्षित वहाँ से अपने घर लौटने लगते हैं। मुख्य सड़क पर आ जाने पर उन्हें सड़क की दूसरी तरफ कुछ साधुओं का टोली नजर आती है जो पैदल यात्रा कर रहे होते हैं।

साधुओं की टोली ताल और ढोलक बजाते हुए “हरे कृष्णा, हरे राम- गोविंदा” का जाप किये जा रही थी। उन साधुओं के झुंड और “हरे कृष्णा, हरे राम गोविंदा” की धुन सुनकर प्रभात बाबू को बार-बार अपने चारों ओर बने उस सुरक्षा कवच की ओर ध्यान जाता तो कभी उस कार ड्राइवर की याद आती तो कभी उस युवक की जो उनकी बेटी को साथ लिए आता है। वे सोचते हैं कि इस भयानक एक्सीडेंट में गाड़ी से बाहर झाड़ियों के बीच गिरे उन छोटे से लड्डू गोपाल पर उस युवक की नजर कैसे पड़ी होगी तथा उसके भीतर इस भाव का प्राकट्य कैसे हुआ होगा कि यह मूर्ति इस गाड़ी में बैठे लोगों की होगी।

प्रभात बाबू थोड़ी देर के लिए गाड़ी एक तरफ रोक लेते हैं और आंख बंदकर के अपने परिवार के इतनी बड़ी दुर्घटना जिससे किसी के भी जीवित बचने की कोई उम्मीद ना होने पर भी सबके सुरक्षित बच जाने के लिए उस युवक को, ड्राइवर को और ईश्वर को मन ही मन बार-बार धन्यवाद देते हैं। उन्हें मन में यह अनुभूति होती है कि हो न हो ईश्वर ही उस युवक के रूप में हमारी सहायता के लिए आये थे। यह सोचकर ही उनका पूरा शरीर रोमाँचित हो उठता है। पुनः ईश्वर को कोटिस धन्यवाद देकर मुस्कुराते हुए, साथ ही उन साधुओं के धुन में धुन मिलाते हुए “हरे कृष्णा, हरे राम-गोविंदा” गाते हुए अपनी कार घर की ओर बढ़ा देते हैं।

डॉ. अर्चना दुबे
सहायक प्रध्यापक एवं हिंदी विभागाध्यक्ष, वी.जी.वझे केलकर महाविद्यालय (स्वायत्त), मुलुंड पूर्व, मुंबई। दूरध्वनी 09702550407

लघु कथा

राजनीति

रन्दी सत्यनारायण राव

लक्ष्मी, 'आन्दोलन जीवी दल' की सक्रीय सदस्या थी, वह दल के आह्वान मात्र से बस्ती वासी महिलाओं को क्षणों में इकठ्ठा कर,दल का पताका उठा ,चल पड़ती थी.एक दिन सड़क चलते, डम्पर ‘लक्ष्मी’को कुचल कर भाग खडा हुआ.फ़ौरन अफरा तफरी मच गई, ‘आन्दोलन जीवी’ दल का मुखिया झंडा और बैनर ले कर क्षेत्रीय थाने में जा धमका. नारें लगने शुरू हो गए –‘जब तक सूरज – चाँद रहेगा, लक्ष्मी तेरा नाम रहेगा...!’ पुलिस भी ‘आन्दोलन जीवियों’ आगत खतरे को भांप कर, दूसरे दिन ही,खूनी डम्पर को,'दल – बदलू दल' के एक सदस्य के घर के गैराज से बरामद कर लिया. जल्द, यह ख़बर ‘आन्दोलन जीवी’ दल के खिया
के कानों तक पहुंची.उन्होंने पता करवाने के लिए एक ‘गुप्तचर’,को भेजा,उसने आ कर बताया– ‘हुज़ूर...,यह ‘डम्पर’,आपके भतीजे ‘हलचल सिंह’ का है,और वे बहुत गुस्से में दिख रहे थे कि, आपने थाने में बवाल मचा रखा है कि,जब तक वह खूनी ‘डम्पर’का पता नहीं चल जाता,आप भूख हड़ताल पर बैठे रहेंगे...,यदि गाडी कोर्ट – कचहरी के हवाले हुई तो समझिये,पचास लाख़ पानी में गए...!’ अब ‘आन्दोलन जीवी’दल के मुखिया के सारे तेवर ढीले पड़ गए,थाने से उन्होंने तम्बू-बम्बू उखाड़ते प्रेसवालों को बताया- ‘हमने यह पता कर लिया है कि,यह एक सड़क दुर्घटना मात्र है,जिसमें हमारी एक लोकप्रिय नेत्री दुर्भाग्य वश काल के गाल में
समा गई,इसमें किसी का भी दोष नहीं, इसलिए हम अपना ‘आन्दोलन’समाप्त कर रहे हैं, अभी चुनाव अति निकट है,इसलिए,इस बात की आशंका भी है कि,हमें बदनाम करने के लिए यह हमारे विरोधियों की साजिश भी हो सकती है,बहरहाल, हमारे दल ने,एक बहुमूल्य वीरांगना का बलिदान किया है,हम आशा करते हैं,जनता हमें भारी मतों से विजयी बनाएगी,धन्यवाद...,सब मिलकर बोलें – जब तक सूरज- चाँद रहेगा,लक्ष्मी तेरा नाम रहेगा ...!’

रन्दी सत्यनारायण राव
निवास: बी-32/बी इंदिरा रोड, बागुन नगर, बारीडीह कॉलोनी, जमशेदपुर- 831017.
व्यवसाय- टाटा-स्टील से अवकाश प्राप्त
अब तक हजार से ऊपर विविध विधाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

मास्क

डॉ. अनीता कपूर

"मुझे माफ कर दो मैं स्वार्थी हो गया था, जिंदगी भर ठीक से कमा नहीं पाया इसीलिए डर गया था कि अगर तुम लोंगों के साथ हिस्सेदारी की तो मेरे हिस्से इतना भी नही आएगा, की मैं एक झोपड़ी भी खरीद सकूँ। भाई की बातें नीना के दिमाग में इतना शोर कर रही थी, जिसके सामने एयर-इंडिया विमान का शोर भी वो सुन नहीं पा रही थी। नीना हमेशा की तरह इस वर्ष की शुरुवात में कुछ दिनों के लिए माँ से मिलने आई थी, पर क्या पता था, की उसके पीछे-पीछे वाइरस भी चीनी विमान से कुछ दिन में आने वाला था।

नीना ने घर पहुँच माँ से फोन पर बात की तो पता चला कि, वे काफी बीमार है, यह सुनते ही वे तुरंत माँ को अपने घर ले आई। कुछ दिन में लॉकडाउन हो गया। कोरोना के बादलों के बीच में जब भी माँ नीना को सेवा के बदले आशीर्वाद देती, तो लगता बादलों को चीर सूर्य, उसके मन में झांक गया हो। नीना वापस अमेरिका नहीं जा सकी पर हर वक्त ईश्वर का शुक्र मानती रही और कहती रही की तेरी गणना तू ही जाने। इस बीच माँ की हालत बिगड़ने लगी। नीना ने भाई को कई फोन किए पर वो हर बार बहाना बना देता की लॉकडाउन में वो नहीं आ सकता, रास्ते बंद है। नीना ने एक दिन हिम्मत कर माँ को अस्पताल ले जाकर जैसे ही डॉक्टर को दिखाया तो उन्होने माँ को तुरंत एडमिट कर खूवडांटा की माँ को पहले क्यों नहीं लाये आदि। नीना किस तरह बताती की भाई गैर-जिम्मेदार निकला। किसी को भनक भी नहीं हुई कि माँ की गैर-मौजूदगी में माँ की अलमारी खोली गयी है और भोली माँ से कभी छल से करवाए गए हस्ताक्षर वाले पेपर गायब है। माँ अस्पताल में अंतिम सांसें गिन रही थी इधर नीना कोरोना के बादलों पर वाइरस की क्रूर हंसी सुन रही थी और भाई ने मकान की वसीयत अपने नाम बनवा ली थी।

नीना और उसकी बहनों ने स्वार्थी भाई की माली हालत को देखते हुए उसके वकील को रजामंदीनामा भेज तो दिया, पर नीना शून्यावस्था में काफी दिनों तक रही। बस यही सोचती की कोरोना को किस रूप में देखूँ जानलेवा महामारी रिश्तों का आईना के रूप में?

नीना सोचती रही की कोरोना ने सबके चेहरों पर तो मास्क लगवा दिये थे, पर रिश्तों के मास्क परत-दर-परत उतर गए थे।

डॉ. अनीता कपूर

लेखक / कवि / पत्रकार, हेवर्ड, लिफोर्निया, यू एस ए

"बे-एरिया इमिग्रेशन एवं लीगल सर्विसेस" के लिए अनुवादिका का कार्य करना और ज्योतिष नाड़ी और वैदिक ज्योतिष / हस्तरेखा / टैरो / वास्तु ज्योतिष विद्या में निरंतर लेखन एवं प्रकाशन / और सम्मान प्राप्त।

अध्यक्ष: "विश्व हिंदी संस्थान कनाडा", कैलिफोर्निया शाखा, आध्यात्मिक संस्था "Divine Rhythm of Soul" के माध्यम से मेडीटेशन के आयोजन करवाना, "ग्लोबल हिन्दी ज्योति" की संस्थापिका, "ग्लोबल हिन्दी ज्योति" द्वारा समय- समय पर काव्य-संध्या और अन्य कार्यक्रम आयोजित करवाना।

ई-मेल anitakapoor.us@gmail.com

भूख का सच

आज वृक्ष के नीचे बैठा वह बूढ़ा मर गया । वह बूढ़ा नहीं था, भूख और बीमारी ने उसे बूढ़ा और कमजोर बना दिया। पत्नी ने, लाचारी में उसे पेड़ के नीचे भीख माँगने बैठा दिया था।

आते जाते लोग उस रोती हुई स्त्री और मृत भिखारी पर दया दिखाते हुए कुछ पैसे/रुपए वहाँ फेंक जाते।

थोड़ी देर बाद किसी ने म्युनिसिपैलिटी को सूचना दे दी । इधर मासूम बच्चा न जाने कब से भूखा था । माँ ने लाश के पास फेंके गए कुछ सिक्के उठाकर बेटे के हाथ में रखे और कहा, "जा सामने ठेले पर सस्ते भोजन की थाली मिल रही है । चुपचाप खा ले और एक शाम के लिए घर ले जाना । आज के बाद पता नहीं तुझे कब भरपेट भोजन

पत्थर और मिडास

मालूम नहीं, यह भयानक सपना था या सच ? मैंने देखा चारों ओर पत्थर ही पत्थर हैं । पत्थर की ऊंची ऊंची दीवारें, पत्थर की सड़कें, पत्थर के मैदान, पत्थर के पार्क........... पत्थर के बुत, हाथी घोड़े और न जाने क्या- क्या...... आदमी रोटी-रोटी चिल्ला रहा है, पानी-पानी माँग रहा है पर उन बुतों से न रोटी झरती है न पानी।

चारों ओर हरे भरे वृक्ष कटे पड़े हैं । उन पर बने पक्षियों के ढेरों घोंसले नष्ट हो रहे हैं । बसेरा नष्ट होने से पक्षी भी गायब हो रहे थे ।

मैं बहुत घबरा जाती हूँ । इतने में एक छोटा-सा बच्चा पूछता है .... अम्मा पेड़ कैसे होते हैं, बादल और बादल की जलधार कैसी होती है ? चिड़ियां और घोसले कैसे होते हैं....... मैं सिर्फ किताब के पन्ने पर छपे चित्र उसे दिखा देती हूँ --बच्चों बहुत साल पहले जब यह पत्थरों का शहर, कंक्रीट का जंगल नहीं था तब यहाँ पेड़ भी थे घोंसले भी । चिड़ियां भी थी बादल भी । अब सब कुछ पत्थरों में बदल गया है --एक मिडास का जन्म हो गया जिसने जिस चीज को छुआ वही पत्थर हो गया । अब इंसान की बारी है पत्थर में बदलने की ....।

-डॉ अरुणा दुबलिश

डॉ अरुणा दुबलिश, डी. लिट्

साठोत्तरी हिंदी तथा बांग्ला कविता में मूल्य बोध । प्रकाशन : गूंगेपन के खिलाफ, वर्षा की पहली बूंद, आधी खुली खिड़की, (कविता संग्रह), हिंदी निबंध, लेख - आलेख, भारतीय दर्शन तथा अन्य निबंध (निबंध संग्रह), खुली हवा का झोंका, नटखट पल-सा (हाइकु संग्रह), हिंदी बाल साहित्य: परंपरा प्रगति और प्रयोग। 25 शोधार्थियों को शोध उपाधि प्रदान की। समय-समय पर अनेक सम्मानों से सम्मानित ।

371/6 प्रगति नगर, मेरठ, -241001 उ.प्र. भारत

मो. 9219702074

सड़क की छाती पर कोलतार

सुशांत सुप्रिय

सड़क की छाती पर कोलतार बिछा हुआ है। उस पर मज़दूरों के जत्थे की पदचाप है। इस दृश्य के उस पार उनके दुख-दर्द हैं। उनकी मायूसियाँ हैं । उनकी हताशाएँ हैं। सड़क पर साइकिल की घंटियों की आवाज़ है । कार के हॉर्न का शोर है । कूड़ा खाती गायों के रँभाने के स्वर हैं। ताँगे के घोड़े की टाप की आवाज़ है। स्कूल जाते बच्चों की मासूम खिलखिलाहट की स्वर-लहरियाँ हैं। मास्क लगाए हुए लोग सड़क पर सहमे-से आ-जा रहे हैं। लोगों के ज़हन में कोरोना वायरस का डर है। डर की तह में मौत कुंडली मारे बैठी है। बेज़ुबान सड़क जहाँ बिछी है, वहीं पड़ी है । एक सिगरेट की फेंकी गई बची हुई ठूँठ सड़क को कश-कश पी रही है ।

सड़क पर कूड़ा बीनने वाला बहती नाक वाला एक बच्चा रोता हुआ चला जा रहा है। यह देखकर हवा थोड़ी थम गई है । सूरज थोड़ा मद्धिम हो गया है। आकाश की नीलिमा थोड़ी कम हो गई है । सड़क के ऊपर आकाश है । आकाश में पंछी हैं। ज़मीन पर उनकी परछाइयाँ हैं । उनके परों में उड़ान है। दिल में आकाश नापने की तमन्ना है। वे अपनी साँसों की स्याही से उमंग लिख रहे हैं। सड़क के एक ओर आलीशान मकान हैं । पर ये मकान खूँटों से बँधे हैं । इनमें रहने वाले जीव कोरोना-काल की उपज हैं ।

सड़क के दूसरी ओर मैदान है। मैदान में हरी घास है। घास में कीड़े हैं। एक चिड़िया इन कीड़ों को मनोयोग से खा रही है। खाते हुए चहचहा रही है। सड़क चिड़िया की ख़ुशी देखकर मोम हुई जा रही है। सड़क पर कुछ साइकिल वाले दूधिये दूध के बड़े बर्तन लादे चले जा रहे हैं। उन बर्तनों में से छलकते दूध के अभिषेक से सड़क तृप्त हुई जा रही है।

सड़क पर एक युवक की लाश लिए कुछ लोग जा रहे हैं। दृश्य से परे बेरोज़गारी की वजह से की गई एक आत्महत्या जा रही है। कुछ धर्म-भीरु लोग लाश को प्रणाम कर रहे हैं। यह देख कर लाश विद्रूपता से मुस्करा रही है।

सड़क पर एक लगभग ख़ाली ट्रैक्टर लिए एक किसान चला जा रहा है। ट्रैक्टर में फ़सल के नाम पर नहीं-बराबर उपज है। सूखे की वजह से इस बार सारी फ़सल बर्बाद हो गई है। तभी उसका मोबाइल फ़ोन बजता है। उधर गाँव से उसकी बीवी बोल रही है। उसका भाई भी किसान था। उसने आत्महत्या कर ली है। ट्रैक्टर पर बैठे किसान की आँखों के सामने अँधेरा छा जाता है। आँखों का अँधेरा और सड़क का कोलतार आपस में घुल-मिल कर एक स्याह कोलाज बना रहे हैं।

सड़क को स्कूल जाते मासूम बच्चे अच्छे लगते हैं। उनके हाथ में पृथ्वी और जेब में सूरज है। उनकी निश्छल आँखों में डूब कर सड़क सब कुछ भूल जाती है। सड़क को गीत गाती घसियारनें अच्छी लगती हैं। सड़क को कॉलेज जाती शोख़ लड़कियों की खनकती खिलखिलाहटें अच्छी लगती हैं । दिन का यह नरम सिरा पकड़ कर सड़क ख़ुश हो जाती है। अब रात का समय है । कुछ दूरी पर सड़क पर एक दुर्घटना हो गई है । शराब के नशे में धुत्त एक कार ने एक अभागी साइकिल को कुचल दिया है। सड़क की छाती पर कोलतार है। कोलतार पर मृतक की क्षत-विक्षत देह पड़ी हुई है । वहाँ मृतक का ख़ून बिखरा हुआ है । सन्नाटा जैसे शोक-गीत गा रहा है । नशे में धुत्त कार का ड्राइवर वहाँ से भाग खड़ा हुआ है। सड़क यह दारुण दृश्य देखकर विलाप कर रही है। उसे उसकी पुरानी स्मृतियाँ याद आ जाती हैं। वह छटपटा कर फिर से बल खाती पगडंडी बन कर अमराइयों में खो जाना चाहती है । सड़क की छाती पर बिछा कोलतार इस त्रासद दृश्य से डर गया है । कोलतार के मन में आ रहा है कि काश उसके पंख लग जाते और वह इस त्रासद दृश्य से दूर नील गगन में उड़ कर कहीं खो जाता ...

सुशांत सुप्रिय
भाषा विभाग: (पंजाब) तथा प्रकाशन विभाग (भारत सरकार) द्वारा रचनाएँ पुरस्कृत। कमलेश्वर.स्मृति (कथाबिंब)कहानी प्रतियोगिता (मुंबई) में लगातार दो वर्ष प्रथम पुरस्कार। स्टोरी.मिरर. कॉम कथा.प्रतियोगिता, 2016 में कहानी पुरस्कृत। साहित्य में अवदान के लिए साहित्य- सभा, कैथल (हरियाणा) द्वारा 2017 में सम्मानित,
आकाशवाणी, दिल्ली से कई बार कविता व कहानी - पाठ प्रसारित।
लोक सभा टी.वी के "साहित्य संसार"कार्यक्रम में जीवन व लेखन सम्बन्धी इंटरव्यू प्रसारित ।
लोक सभा सचिवालय, नई दिल्ली में अधिकारी ।
निवास:
A-5001, गौड़ ग्रीन सिटी, वैभव खंड,
इंदिरापुरम्, ग़ाज़ियाबाद- 201014
(उ.प्र.) मो : 8512070086
ई मेल : sushant1968@gmail.com

ललित निबंध

हँसी

- डॉ. सतीश पांडेय

बहुत बार मैंने सोचा कि हँसी के कितने रंग होते हैं या हो सकते हैं। ध्यान में आया कि मनुष्य के जीवन में पहली हँसी तो उस बच्चे की होती है, जिसे देखकर घर के बड़े-बूढ़े अक्सर कहते हैं कि भगवान से बातें कर रहा है। थोड़ा और बड़ा होकर बच्चा जब कुछ देख कर अपने आप हँसता है तो वह मीठी-सी, निश्छल-सी हँसी देखकर उसके माँ-बाप भी हँसे बिना नहीं रह पाते। किसी हँसते हुए बच्चे की हँसी या उसे देखकर माता-पिता को आने वाली हँसी वात्सल्य-हँसी कहलाती है। एक हँसी वह भी होती है, जब बचपन में हम थोड़े बड़े होकर हँसते हैं – ताली पीट कर, निडर-सी हँसी। तब 'कौन क्या कहेगा' का डर नहीं होता। हँसते हैं और हँसते जाते हैं। बिना किसी डर के, बिना किसी भय के। न परिवार का डर, न दुनिया-समाज का। इससे थोड़ा और बड़ा होने पर लड़के तो बेखटके हँसते हैं लेकिन लड़कियों की हँसी पर प्रतिबंध लग जाता है। यदि कोई लड़की फिर भी हँसने की हिम्मत करती ही है तो मुँह ढक कर। मुँह ढकना भी साड़ी के पल्लू, दुपट्टे या रुमाल से होता है और यदि थोड़ा और निडर लड़की हुई तो हथेली से। इसे प्रतिबंधित हँसी कहते हैं। कभी-कभी ज्यादा निडर लड़की बिना मुँह ढके भी हँस लेती है लेकिन सबको मालूम है कि इसके कई-कई अर्थ खोजे जाने लगते हैं।

एक हँसी दोस्तों-सहेलियों के बीच होती है, जो तनाव-मुक्त हँसी होती है। ऐसी हँसी कभी-कभी किसी अनुपस्थित दोस्त या सहेली की किसी बात पर आती है तो कभी यह मन की कुंठा-ग्रस्त गाँठें खोलने वाली हँसी होती है। उन्मुक्त हँसी यह भी होती है लेकिन बचपन की तरह नहीं बल्कि किशोर या युवावस्था की। मेरे एक अध्यापक ने एक दिन बताया कि अपने दोस्तों के बीच वे भी बहुत हँसते थे। दरअसल उस अध्यापक की गंभीरता और उनके प्रति सम्मान के कारण हम विद्यार्थी उनके सामने हमेशा चुप ही रहते थे। उस दिन किसी संगोष्ठी से लौटते हुए वे अपने साथियों के साथ आ रहे थे। पान की दुकान पर पान खाकर उस संगोष्ठी की कुछ बातें याद करते हुए वे लोग खुल कर हँस रहे थे। पूछने पर उन्होंने बताया कि उस संगोष्ठी के अध्यक्ष द्वारा गुरु-गरिमा और गंभीरता का लबादा ओढ़े अध्यक्षीय वक्तव्य के नाम पर दो मिनट का वक्तव्य देने पर उन लोगों को हँसी आ रही थी। उस अध्यक्ष महोदय ने अपने भाषण में अधिकांश समय वहाँ उपस्थित साहित्यिकों का नाम लिया था और आयोजकों द्वारा उन्हें अध्यक्ष बनाए जाने के प्रति आभार माना था। अपने वक्तव्य का समापन उन्होंने इस तरह किया था कि उनसे पहले के वक्ताओं ने सारी बातें पहले ही कह दी हैं। अब कहने के लिए कुछ शेष नहीं है और समय भी बहुत हो गया है। इसीलिए वे अपनी वाणी को विराम देते हैं। दरअसल वे जहाँ भी जाते हैं, वाणी को विराम देने का यही फार्मूला अपनाते हैं। इसलिए उनके खड़े होते ही लोग 'वाणी को विराम देने' के उनके इस अंदाज पर पहले ही हँस देते हैं।

हँसना स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होता है इसलिए कुछ बुजुर्गों को मैंने अपने सामने के बगीचे में सुबह-सुबह हँसते देखा है। वे इसे 'हास्य योगा' कहते हैं। एक ऐसा 'योगा' जिसमें बिना हँसी के हँसने और 'हा-हा-हा-हा' की आवाज जोर जोर से निकालने को हँसी कहा जाता है। हँसी अपने आप जब आती है तो हम हँसते हैं, ठठा कर हँसते हैं लेकिन जब हँसी को बोलकर हँसा जाता है तो वह दिखावटी, ज़बरदस्ती की हँसी या हा-हा हँसी कहलाती है।

दिखावटी हँसी एक वह भी होती है जब हम किसी के प्रति झूठा सम्मान प्रकट करने के लिए हँसते हैं। इसे विवशतापूर्ण हँसी कहते हैं। ठीक वैसी ही विवशतापूर्ण हँसी जैसे एक लड़की का बाप शादी के समय दहेज न दे पाने के बाद लड़के के पिता की अपमानकारक फटकार सुनकर भी हँसता है या एक दफ्तर का कामचोर और भ्रष्ट कर्मचारी अपने बॉस की डाँट सुनकर भी हँसता है। यहीं याद आती है एक ऐसी हँसी जिसे 'थेथर' हँसी कहा जा सकता है। यह अक्सर अभ्यस्त निकम्मों द्वारा हँसी जाने वाली हँसी होती है। अपने निकम्मेपन पर दूसरों को हँसते देखकर अपने पर ही जो हँसते हैं, उसे थेथर हँसी कहते हैं। इसमें हँसने वाले की आत्मा तो रो रही होती है किंतु हँसने वाले को इसका पता नहीं होता और वह अपनी बेइज्जती पर भी हँसता रहता है।

हँसी का एक ढंग सबसे निराला होता है। यह हँसी प्रेमजन्य हँसी होती है। इसे मुस्कीमार हँसी भी कहते हैं। किशोरावस्था या युवावस्था में युवक या युवती जब एक दूसरे को देखकर लजाई-शर्माई-सी मीठी हँसी हँस कर अपनी प्रेम संवेदनाएँ व्यक्त करते हैं तो हँसी का यह प्रकार प्रकट होता है। इसे बिहारी बाबा ने 'भरे भौन में रीझत-खिझत के बाद मिलत-खिलत' वाली हँसी कहा है। यह बहुधा प्रेम-व्यापार में युवती के गुस्से के बाद प्रकट होती है या युवती के सहमत होने का संकेत देने वाली हँसी होती है।

हँसी का एक रूप व्यंग्य-हँसी वाला होता है। हँसने वाला सामने वाले की किसी कमजोरी या विडम्बना पर हँसता है। ठीक 'अंधे के अंधे ही होते हैं' वाली कहावत कहते हुए हँसी जाने वाली हँसी। यह हजारों-हजार परमाणु अस्त्रों से भी अधिक खतरनाक और

विध्वंसक हँसी होती है। सीधे सीने में तीर की तरह चुभ जाने वाली द्रौपदी की हँसी जैसी, जिसका परिणाम हमेशा महाभारत ही होता है। यह महाभारत चाहे पारिवारिक धरातल पर हो या राष्ट्रीय स्तर पर।

वैश्वीकरण के समय में आज सब कुछ व्यावसायिक होने लगा है और व्यावसायिकता भी लोकल नहीं, ग्लोबल हो गई है। हँसी भी इस प्रभाव से अछूती नहीं रह गई है। समर्थ हँसोड़ों ने भाँप लिया है कि गला -काट स्पर्धा के इस युग में हँसी समाज और मार्केट से गायब होती जा रही है। अतः उन्होंने हँसी का भी व्यापार शुरू कर दिया है। हमारे समय के बाज़ार की यह खासियत है कि जो भी वस्तु बाज़ार से गायब होती है, उसकी माँग बढ़ जाती है। डिमाँड और सप्लाई के इसी फार्मूले को जानकर हँसी का व्यापार पहले भी होता था, जब कुछ हास्य सम्राट काकाओं, विशालकाय शैलों और हुल्लड़बाजों ने कवि सम्मेलनों में मुँह माँगे दाम लेकर स्वयं को लुटने से बचाया और खुद मंच लूटा। धीरे-धीरे उनमें चुटकुलेबाजों का प्रवेश हो गया, जिसे देखकर टेलीविजन वालों ने भी चुटकुलेबाज राजुओं और एहसानों का दौर चलाया लेकिन चुटकुलों की एक खासियत होती है। वे भी बंदूक की गोली की तरह एक ही बार फायर होते हैं। बाद में वही चुटकुला फुस्स हो जाता है। जानकार लोगों का कहना है कि चुटकुलेबाजी के लिए भी क्रिएटिविटी चाहिए। यदि क्रिएटिविटी नहीं होगी तो 'ठोको ताली' कब तक चलती रहेगी।

आजकल व्यावसायिक हँसी ने कॉर्पोरेट रूप धारण कर लिया है। यह हँसी प्रायोजित कार्यक्रमों की तरह होती है। इसीलिए इसे प्रायोजित हँसी भी कहते हैं। इसमें शामिल दर्शकों के लिए आवश्यक होता है कि वे हर बार ताली पीट कर हँसेंगे। इसमें या तो भैंसिया छाप मोटापे को हँसी का आधार बनाया जाता है या अच्छे-भले पुरुषों को साड़ी पहना दिया जाता है। फिल्मों और सीरियलों के उपेक्षित अभिनेता साड़ी-अभिनय में माहिर होते हैं। कभी-कभी मसाज पार्लर के नाम पर ऐसे ऐसे फूहड़ मसाजों के नाम बताए जाते हैं, जिन्हें सुनकर अपनी बोल्ड इमेज़ के लिए जानी जाने वाली आमंत्रित अभिनेत्रियाँ भी बगलें झाँकने लगती हैं। स्टेज लूटने के प्रयास में अपनी 'भैंसिया-बुद्धि' का प्रदर्शन लाभदायक माना जाता है। कभी-कभी लोकप्रिय लोगों, विशेषतः अभिनेताओं-अभिनेत्रियों के साक्षात्कार के बहाने उनकी फिल्मों का प्रमोशन भी कराया जाता है। साथ में एक हँसोड़ पुरुष या महिला भी रहती है, जो हर बात में और कभी-कभी तो बिना बात की बात में भी हो-हो-हा-हा करके हँसने में माहिर होती या होता है।

ज्ञानी पुरुषों का मानना है कि हँसना सिर्फ अपने लिए ही स्वास्थ्यवर्धक नहीं होता बल्कि वह सामाजिक स्वास्थ्य के लिए भी आवश्यक होता है। अतः हे भारतवासियो ! हँसो ... हँसो। हँसी भी ताकत देती है। हो सके तो अपने आप पर हँसो। दूसरों पर तो सभी लोग हँस लेते हैं लेकिन अपने आप पर हँसना किसी-किसी को आता है। जो अपने आप पर हँसना सीख लेता है, वह निडर हो जाता है। फिर वह बड़ी से बड़ी ताकत से मुठभेड़ करने में सक्षम हो जाता है। इसी लिए अपने आप पर हँसना आज के माहौल में बहुत जरूरी है। आज भौतिक सुविधाओं की बाढ़-सी आती जा रही है लेकिन संबंधों की ऊष्मा कम होती जा रही है, उस पर हँसो। आज तकनीक ने जीवन को आसान बना दिया है लेकिन झूठ, फरेब, हत्या और व्यभिचार का कचरा जमा होता जा रहा है, उसके विरुद्ध हँसो। शासन की अंधी ताकत से बचने के लिए डर की हँसी नहीं बल्कि उसका डटकर विरोध करने वाली हँसी हँसो। महामारी के संकट काल में लोगों को उनकी हाल पर छोड़ देने वाली व्यवस्था पर हँसो। महानगरों के बेबस मज़दूरों को हजारों मील पैदल चलकर घर-वापसी करने वालों पर हँसो। देश की सीमाओं पर जान की बाज़ी लगाने वाले वीर जवानों की कुर्बानी पर संदेह करने वाले स्वार्थी नेताओं की नादानी पर हँसो। जीवन में हँसी को आवश्यक मानकर हँसी का व्यवसाय करने वालों हँसो किन्तु सिर्फ मनोरंजन के लिए नहीं बल्कि जीवन को सुंदर बनाने के प्रयास में जुटे लोगों के विरुद्ध षड्यंत्र कर रही हर ताकत के प्रतिकार के लिए हँसो। विश्वास करो, यह हँसी जितनी ही आत्मविश्वास भरी होगी, मनुष्य-विरोधी ताकतें उतनी ही कमजोर होती जाएँगी।

डॉ. सतीश पांडेय
पूर्व विभागाध्यक्ष (हिन्दी)
के. जे. सोमैया महाविद्यालय, मुंबई
प्रख्यात समीक्षक, वर्तमान में प्रतिष्ठित
साहित्यिक पत्रिका समीचीन के संपादक,

संस्मरण

तरवाहिया की छांव ----

-डॉ.सविता सिंह

गाँव की तरवहिया को आज तक हम भूल नहीं पाए हैं।आप लोग सोचते होंगे यह तरवहिया क्या चीज है? शहरों में जिसे हम बरामदा कहते हैं, वरांडा कहते हैं ,वही गांव में तरवहिया कही जाती है और गांव में छप्पर लगाकर घर की जो छत बनती है उसका सुकून सच पूछो तो शब्दों में बताया नहीं जा सकता। मिट्टी की दीवार और ऊपर से छप्पर की छत बड़ा सुंदर माहौल बनाता है।

हम अपने गांव गंगा सिंह की बेली जिसका नाम हमारे नाना के नाम पर पड़ा था, वहाँ परीक्षा के बाद हर साल एक महीने की छुट्टी बिताने हम सपरिवार वहाँ जाया करते थे। शहरों के हिसाब से देखें तो वहाँ कुछ भी नहीं था लेकिन आनंद के हिसाब से देखें तो सच में स्वर्ग ही था क्योंकि पूरा बचपन उछलते कूदते जो वहाँ बीता, वह एक महीना आज पैसों से खरीद कर नहीं मिल सकता। शहर से चलते समय बड़ी उमंग रहती थी मन में कि वहाँ जाकर खेतों में पाटी पर बैठेंगे, जिसे बैल चलाते थे खेत की मिट्टी को बराबर करने के लिए, फिर खेतों से खुखडी निकालेंगे जो अनाज काट लेने के बाद नीचे बची रह जाती लकड़ियां थीं उनकी हम लोग मिट्टी झाड़ झाड़कर एक जगह ढेर बनाकर रखते थे ।बड़ा मजा आता था। बचपन में जोश तो रहता ही है और ऐसे श्रम करने में बड़ा मजा आता था। शरारत भी लगती है और काम भी होता जाता है। नाश्ता करने के बाद सुबह हल्की हल्की धूप और खेतों का यह काम बड़ा मजा देता था फिर वहाँ से लौटते ही फरेंद खाने चले जाते थे। फरेंद शब्द भी शायद क्षेत्रीय भाषा का शब्द है जिसे आज हम जामुन कहते हैं, उसी को गांव में फरेंद कहा जाता था ।घर के सामने आम के पेड़, अमरूद के पेड़ और जामुन के पेड़ खूब सारे लगे थे ।घर के अंदर जहाँ पर हैंडपंप लगा था, हाथ का नल जिसे कह सकते हैं। हाथ से चला कर पानी निकालते थे, उसी के पास में रसोई थी और रसोई के ऊपर जो टीन की छत थी उस पर अंगूर की बेल फैली हुई थी। उस तीन की छत पर खूब सारे अंगूर आते थे। बड़ा मजा आता था। नल के पास ही अमरूद का पेड़ था और उस पर चढ़कर टीन के ऊपर हम पहुंच जाते और अंगूर के गुच्छे के गुच्छे तोड़कर नीचे उतर आते हैं।ऐसा लगता किला जीत कर उतरे हैं।

वास्तव में उस आनंद का कोई मोल नहीं है! आज जब सोचते हैं तो करोड़ों रुपए देकर भी उस आनंद को खरीदा नहीं जा सकता! खाना खाने के उपरांत नटखट बच्चे हुआ करते थे इसलिए कभी अमरूद के पेड़ पर चढ़कर लच्ची - ढाणी खेलते थे, कभी फरेंद के पेड़ के नीचे बैठकर जामुन के टपकने का इंतजार किया करते थे और फिर शाम होते ही खेतों में मेंड़ों पर दौड़ कर एक दूसरे को छूने का काम करते थे। इस तरह से गांव पर रहकर भी खूब उछल कूद करते और उस मौज मस्ती में कैसे एक महीना बीत जाता पता भी नहीं चलता! कभी-कभी पिताजी की डांट भी पड़ जाती कि सारी छुट्टी उछल कूद में ही बिता दोगे, पढ़ोगे कब? तब जल्दी से किताबें लेकर बैठ जाते थे। हाँ यह बात तो बताना ही भूल गए कि शहर से चलते समय अगली कक्षा की पुस्तकें बैग में भरकर लाते थे कि छुट्टियों में उसकी तैयारी करके जब स्कूल खुलेगा तो सबसे आगे पढ़ाई में रहेंगे ।लेकिन वास्तव में छुट्टी का मतलब छुट्टी ही होता है। कितनी भी किताबें भरकर ले आएं लेकिन पढ़ाई के नाम पर ढीले ही पड़ जाते थे, बिना कक्षाओं के कक्षा लगाना मन मस्तिष्क को बचपन में भाता नहीं था! बस कूद - कूदकर गांव के कामों में हाथ बटाने का बड़ा मन करता था। अगर गाय भैंसों के चारा काटने की मशीन पर कोई चला जाता तो उछल कर उसे हटा देते और कहते नहीं नहीं यह तो हम कर लेंगे और गोल - गोल हाथ घुमाते खूब मजा आता। उसके बाद जब भैंसों को चारा या गायों को चारा दिया जाता तो उनके मुंह से निकलते हुए झाग को देर तक देखते और सोचते कि अपना खाना मुंह से नीचे क्यों गिरा देते हैं ये ?शायद इनका मुंह बहुत बड़ा है इसलिए और फिर बच्चे होने के नाते अपने मुंह पर हाथ ले जाते कि कहीं हमारे मुंह से भी तो खाना नहीं गिर रहा है? कितना प्यारा बचपन होता है!

इसके उपरांत बकरियों को पकड़कर दूध निकालने में बड़ा आनंद आता था। सबकी डांट पड़ती, कहते ,अगर बकरी लात मारेगी तब देखना मजा आएगा! लेकिन कहाँ सुनने वाले पीछे के दो पैर पकड़ने को किसी को कह देते और फिर धीरे से डरते डरते दूध दुहने में बड़ा मजा आता! हमने पढ़ा भी तो था कि गांधीजी बकरी का ही दूध पीते थे! तो हम भी सोचते ऐसी क्या खास बात है इसे पीने में चलो देखते हैं और गरम गरम दूध की धार जब मुंह पर पडती तो आज भी उसका स्वाद आनंदित कर जाता है ।गांव के लोग गाय का दूध जब दुहने आते तब भी मैं वहाँ बैठ जाती और उनसे कहती झगडू दादा मेरे मुंह में एक धार मारो ना? जब दूध की धार मुंह की बजाए आंख पर पड़ती तो जोर से हम चिल्लाते, यह क्या किया? मेरा मुंह खराब कर दिया! फिर दादा कहते ,दोबारा मुंह खोलो अबकी सीधे मुंह में जाएगी धार!

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

यकीन मानिए, इतना गर्म और मीठा दूध होता कि आज तो मेरे लिए सपने जैसा लगता है! इसका यह मतलब नहीं है कि गाय और दूध बंद हो गए हैं! दोनों हैं, मगर बचपन चला गया है! अब मुंह खोल कर उस धार और दूध के लिए ना तो वह मन ही है और ना ही कोई इच्छा! इसीलिए तो कहा गया है कि "बचपन हर गम से बेगाना होता है"। दूध बंद हो गए हैं! दोनों हैं, मगर बचपन चला गया है! अब मुंह खोल कर उस धार और दूध के लिए ना तो वह मन ही है और ना ही कोई इच्छा! इसीलिए तो कहा गया है कि "बचपन हर गम से बेगाना होता है"।

आज छप्पर का चित्र देखकर वह तरव हिया याद आ गई ,जहाँ पूरी दोपहर धूप में हम लोग लेट कर कभी कहानियां पढ़ते थे कभी उसमें लगी हुई टेढ़ी डंडियों को पकड़ पकड़ कर गोल-गोल घूम कर खेल खेला करते थे। ना किसी समय की परवाह, ना किसी बात की चिंता! खाना - खाना, उछलना - कूदना ,खेलना और मन की मस्ती में जीना ! इसीलिए गांव जब भी याद आता है साथ में हंसता मुस्कुराता बचपन भी चला आता है ।जीवन की जड़ें गांव से ही जुड़ी हैं ।कितना भी शहरों में घूम लें, विदेशों की सैर कर लें लेकिन अंदर से एक धागा हमेशा गांव के उस घर में पहुंच ही जाता है जहाँ बचपन के सुनहरे दिन बिताए हैं !

सच में माँ-बाप को बार-बार धन्यवाद देने को दिल करता है जिन्होंने गांव की मिट्टी की सुगंध की अनुभूति बचपन में ही करवा दी थी और जीवन की यादों में बसा दिया! सच्चाई यही है कि पांच तत्वों से मिलकर हमारा शरीर बना है और उसमें से एक तत्व मिट्टी भी है इसलिए उस मिट्टी की सुगंध को जीवन से जोड़े रखने में बड़ी सच्चाई महसूस होती है, अच्छा भी लगता है क्योंकि आज हम प्रगति के नाम पर उस मिट्टी से इतनी दूर होते चले गए हैं कि अब वह निस्वार्थ गांव वाले भी देखने को नहीं मिलते, जहाँ हम उछल कूद कर बड़े हुए हैं! आज तो वह तरवहिया भी अपना जीवन समाप्त कर चुकी है जिसकी याद को हम कलेजे से लगाए हुए हैं और आप सबको उसके आनंद की कहानी सुना रहे हैं !

गांव से सभी लोग धीरे-धीरे शहर की ओर चले आए और वह घर भी अपना सफर पूरा कर चुका है।केवल वहाँ उजड़ा हुआ चमन ही रह गया है ।खेत ,खलिहान और गांव के निवासी हमारे परिवार के सभी लोग वहाँ से अलविदा कह शहरों की ओर कूंच कर गए हैं लेकिन मेरा मन शायद जब भी इच्छा चाहती है वहाँ घूम आता है और खुश होकर अपने बचपन में लौट जाता है। कभी अंगूर की बेल के नीचे से कुछ निकाल लेता है तो कभी अमरूद के पेड़ पर लच्ची - ढाणी खेल लेता है! कभी फरेंद को याद करके शहरों के जामुन से तुलना कर लेता है तो कभी सुबह आंख मलते हुए गर्मियों में टपके हुए आमों को ढूंढने लगता है। सच में मन बड़ा चंचल होता है ,रहता एक जगह है पहुंच कहीं और जाता है!देखिए ना तरवहिया की याद में न जाने कितने चक्कर उस मेंड़ के लगा लिए जिस पर चलकर अपने घर से मौसी के घर दौड़ जाया करते थे और घर के लोग ढूंढते हुए हमें वहाँ पहुंच जाते थे। कितने निश्चल रिश्ते हुआ करते थे! आज हम शहर की चमक - धमक में शायद अच्छी बातों को भूलते जा रहे हैं और अपनी जिंदगी को व्यस्त बनाकर मशीनीकरण में लिप्त होते जा रहे हैं। शायद आधुनिकीकरण ही शहरों को निगलना जा रहा है और बचपन को भी?

डॉ.सविता सिंह
पूर्व विभागाध्यक्ष,हिंदी विभाग
ए. एम. कॉलेज, हड़पसर, पुणे,
महाराष्ट्र -28

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

बैलगाड़ी की सैर

-डॉ.सविता सिंह

आज फिर से मेरा दिल एक बार अपने गांव की ओर मुड़ गया और मस्तिष्क फिर से विचार करने लगा कि कितना मनोरम था हमारा गांव, उसके दृश्य और वह सारी चीजें जिसमें ना ही कोई खर्चे का डर था, ना ही सामग्रियों के जुटाने का झंझट!

हाँ, अगर कुछ था तो प्रकृति से नाता जोड़ने का सवाल था साथ ही जानवरों का सम्मान एवं प्रकृति का भी सम्मान !

इन चित्रों को अगर गौर से देखा जाए तो इसमें कितना सुंदर माहौल देखने को मिल रहा है ।आपसी प्रेम और सौहार्द के इस माहौल को मैंने जिया है ।इसीलिए बार-बार मन अपने गांव की ओर मुड़ जाता है ।हिंदी फिल्म "नदिया के पार" देखते समय जब यह बैलगाड़ी दिखाई दी तो मुझे याद आ गए वह पल, जब मैं गर्मियों की छुट्टी में सपरिवार बैलगाड़ी में बैठकर गांव जाया करती थी।

एक बार बड़ा सुंदर मौसम था। काले काले बादल आसमान में अपनी उपस्थिति गरज-गरज कर दर्ज करा रहे थे। मैं बैलगाड़ी में बैठी थी अपने माता-पिता छोटे भाई के साथ, तभी बादलों की गड़गड़ाहट सुनकर मैंने जोर से आवाज लगाई ओ मैं तो अब भीग जाऊंगी! अरे! बारिश बहुत ज़ोर से आएगी! मैं उस समय में दसवीं कक्षा की परीक्षा देकर जा रही थी, तभी मेरे पिताजी ने एक घुड़की लगाते हुए कहा, इतनी जोर से कोई बोलता है ? बोलने की तमीज भी नहीं सीखी है , पढ़ लिख कर तुमने?क्या तुम नमक हो जो पानी के बरसते ही गल जाओगी? अब क्या था! एकदम उनकी फटकार ने मुझे संयत कर इस बात को सोचने पर मजबूर कर दिया कि हाँ बारिश के आने से भला मुझे डरना क्यों चाहिए? दरअसल ,बचपन में पता तो चलता नहीं था क्यों बैलगाड़ी खुली थी तो बारिश सीधे हमारे ऊपर आएगी ही! हैं ना बस इसी भाव ने मुझे डरा दिया था कि हमारे पास ना कोई छाता ,ना कोई बरसाती, ना कोई रेनकोट! तो हम बच्चों को भीगने के डर का भाव डरा गया!

जैसे हैं यह भाव एकदम से मन में आया था उसी समय बादलों की गड़गड़ाहट ने मुझे जोर से बोलने पर मजबूर कर दिया था, वरना तो बचपन से मिशन स्कूल में पढ़ने के नाते तहजीब और तमीज तो हर बात में सिखाई गई थी मुझे। जैसे,धीरे बोलना ,जिससे बात करनी है बस वही सुन सके इतनी धीमी आवाज में बात करना ही अच्छा होता है, यह पिताजी ने हमेशा समझाया था और हमेशा आंखें नीची रख कर बात करनी चाहिए, बड़ों से कभी आंखें मिलाकर बात नहीं करनी चाहिए । क्या क्या सिखाया गया था बचपन से हर पल और उनके साथ साथ जोर से बोलना तो नागवार ही था! इसीलिए बादलों की गड़गड़ाहट के साथ मुझे लगा कि मेरी आवाज सबको सुनाई दे और यदि नहीं सुनाई दी तो मेरा डरबढ़ जाएगा! मेरे पापा और भाई तक मेरी शंका नहीं पहुंच सकेगी! इसीलिए जोर से चिल्लाया था और उसी वक्त मुझे सुधार दिया गया था।

कहीं मन की गहराई तक पापा द्वारा बताई हुई यह बात घर कर गई थी कि प्रकृति से जुड़ जाओ कभी उस से डरो मत! आज जब शहर में रह रहे हैं उमर के साठ पड़ाव पा कर लिए है तब भी बारिश के आने पर उस वकिए को याद कर एक बार अपने आप को भिगो अवश्य लेती हूँ , पिता की बात याद करके कि मैं नमक नहीं हूँ जो गल जाऊंगी! सच में, कितनी खूबसूरत यादें होती हैं जो हमारे माता-पिता हमें दे जाते हैं!

हर पल हम उन्हीं के साथ रहते हैं भले वह दुनियां से कूच कर गए हों किन्तु उनकी बातें हमें बड़ी गहराई से जोड़ती हैं जिनसे सीखना तो होता ही है लेकिन साथ में हम उनकी यादों को भी सजा लेते हैं।

मुझे याद है बैलगाड़ी में बैठते ही बड़ा आनंद आता था ।एक तरफ तो बैलों को हाँकने की आवाज और दूसरी तरफ लकड़ी के पहिए की खड़-खड़ इतना सुंदर संगीत बजता था और जब कभी बैलों को तेज दौड़ाते थे,एक विशेष आवाज़ निकाल कर, हा हा हा कह कर तब और भी मज़ा आता था ।जब वह दौड़ने लगते थे कच्ची मिट्टी की सड़कों पर तब ऐसा लगता था कि मानव जीवन का संगीत सुन रहे हो मानो हैं सब ।कभी लेट जाते बैलगाड़ी में,कभी उठकर आसपास के नज़ारे देखते, बड़ा मधुर लगता था। मानो बैलों को पता था कि पीछे बच्चे बैठे हैं और उछलकर गाड़ी में जो ध्वनि होगी उससे उन्हें आनंद मिलेगा।

सच में शब्दों में बयां कर पाना कितना कठिन है इतने मधुर क्षण, जिन्हें जिया गया है पूरी तन्मयता से, प्राकृतिक दृश्यों के साथ ! ना कहीं से कोई प्रदूषण, ना कहीं से कोई धुआं, ना कोई सांस लेने की दिक्कत! सब कुछ खुला हुआ, हरियाली से भरा वातावरण, बड़ा मनोरम दृश्य और इतने हरे हरे पेड़ों को देखकर आंखें अपने आप रोशन हो उठती थी। घर के पास पहुंचते ही याद आती है उन बांसों की झाड़ियां जो इतनी तेज लहराती थीं हवा में कि उनकी आवाज मानो सरगम गा रही हों। कभी कभी जब हवा ज़ोर पकड़ ले तो उनके स्वर तार सप्तक तक जाकर फिर धीरे से मध्यम स्वर से होते हुए नीचे तक उतर आते थे। घर के पीछे लगी बांस की झाड़ियों का संगीत मैंने अपने कानों से से सुना और अपनी आंखों से देखा भी है!

सच कहें तो , न जाने कितना सौंदर्य बिखरा पड़ा है गांवों में.... जिसे देखने की जब तक दृष्टि आती है तब तक हम शहरों में बसने लगते हैं ।

एक और बात ,बचपन के खेल गांव के ना कोई कैरम बोर्ड, ना कोई लैपटॉप ,ना कोई मोबाइल था। ना ही कोई टी वी!उस समय गांव की हम उम्र लड़कियां आ जाती थीं और उसके बाद चित्र वाले खेलों में इतना आनंद आता कि पूछो मत! मानो,खेले के उपरांत ऐसा महसूस होता कि हम स्वर्ग की सैर करके घर वापस आए है!

इतना मनोरम माहौल हुआ करता था गांव का कि घर के पास ही एक बूढ़े पति - पत्नी रहा करते थे, जिन्हें आज भी जब हम याद करते हैं तो लगता है किसने सिखाया था रिश्ता जोड़ना ? हम लोग उतनी ही आत्मीयता से सभी बच्चे उन्हें नंदा नाना और नंदा नानी पुकारते थे ।कभी ऐसा नहीं लगा कि ये नाना-नानी किसी और के घर के व्यक्ति हैं? बड़ा अपनापन हुआ करता था। हर एक रिश्ता अपना ही होता था ।भेदभाव तो हम लोग जानते ही नहीं थे लेकिन आज एकदम माहौल उल्टा हो गया है।अपने भी गैर लगने लगे हैं क्योंकि न जाने ऐसी क्या बात है कि उस बेहद अपनेपन के अभाव का आज एहसास बढ़ने लगा है। मुझे याद है, मेरे घर में अड़ोस पड़ोस के सभी लोग मुझे अपने परिवार के ही लगते थे । कारण साफ है कि कभी यह बताया ही नहीं गया घरों में कि उनकी जाति अलग है या यह अलग घर में रहते हैं, यह अपने नहीं है ! लेकिन मैं देखती हूँ कि आज तो छोटे-छोटे बच्चे इस भाव से भरे हुए हैं कि यह गैर हैं! यह हमारी जाति के नहीं हैं, यह हमारे राज्य के नहीं हैं, यह हमारे राष्ट्र के नहीं हैं! यह हमारे परिवार के नहीं हैं और एक बड़ी अलग से दूरी मन और मस्तिष्क में बना कर बैठ गए हैं!

इसीलिए बचपन उनका बचपन नहीं रह गया ।बड़ी कड़वाहट से भरा हुआ सब कुछ होता चला जा रहा है। वास्तव में मित्रों! बचपन एक बार ही मिलता है ,दोबारा नहीं मिलता! इसे बड़े प्यार से जीने देना चाहिए क्योंकि वही बचपन जीवन भर आपको खुश रखता है।आइए अपने बच्चों के बचपन को प्राकृतिक संपदाएं प्रदान कर उनके उत्साह को सदा के लिए यादगार बना दें!

डॉ.सविता सिंह
पूर्व विभागाध्यक्ष,हिंदी विभाग
ए. एम. कॉलेज, हड़पसर, पुणे
महाराष - 28

पुस्तक समीक्षा

दलदल (कहानी संग्रह)

लेखक: सुशांत सुप्रिय

-सुषमा मुनीन्द्र

समीक्ष्य कृति - दलदल (कहानी संग्रह)
(अंतिका प्रकाशन , ग़ाज़ियाबाद)
समीक्षा आलेख - किस्सागोई का कौतुक देती कहानियाँ
प्रकाशन वर्ष: 2015
मूल्य: 275
समीक्षक: सुषमा मुनीन्द्र

सुपरिचित रचनाकार सुशांत सुप्रिय का सद्यः प्रकाशित कथा संग्रह 'दलदल' ऐसे समय में आया है जब निरंतर कहा जा रहा है कहानी से कहानीपन और किस्सागोई शैली गायब होती जा रही है। संग्रह में बीस कहानियाँ हैं। जिनमें ऐसी ज़बर्दस्त किस्सागोई है कि लगता है शीर्षक कहानी 'दलदल' का किस्सागो बूढ़ा, दक्षता से कहानी सुना रहा है और हम कहानी पढ़ नहीं रहे हैं वरन साँस बाँध कर सुन रहे हैं कि आगे क्या होने वाला है। पूरे संग्रह में ऐसा एक क्रम, एक सिलसिला-सा बनता चला गया है कि हम संग्रह को पढ़ते-पढ़ते पूरा पढ़ जाते हैं। कभी उत्सुकता, कभी जिज्ञासा, कभी भय, कभी सिहरन, कभी आक्रोश, कभी खीझ, कभी कुटिलता, कभी कृपा से गुजर रहे पात्र इतने जीवंत हैं कि सहज ही अपने भाव पाठकों को दे जाते हैं। 'दलदल' कहानी के विकलांग सुब्रोतो का करुण तरीके से दलदल में डूबते जाना सिहरन से भरता है तो 'बलिदान' की बाढ़ग्रस्त भैरवी नदी में नाव पर सवार क्षमता से अधिक परिजनों द्वारा डगमगाती नाव का भार कम करने के लिये, किसका जीवित रहना अधिक ज़रूरी है, किसका कम , इस आधार पर एक-एक कर नदी में कूद कर आत्म -उत्सर्ग करना स्तब्ध करता है। "काले चोर प्रोन्नति पायें, ईमानदार निलंबित हों" ऐसे

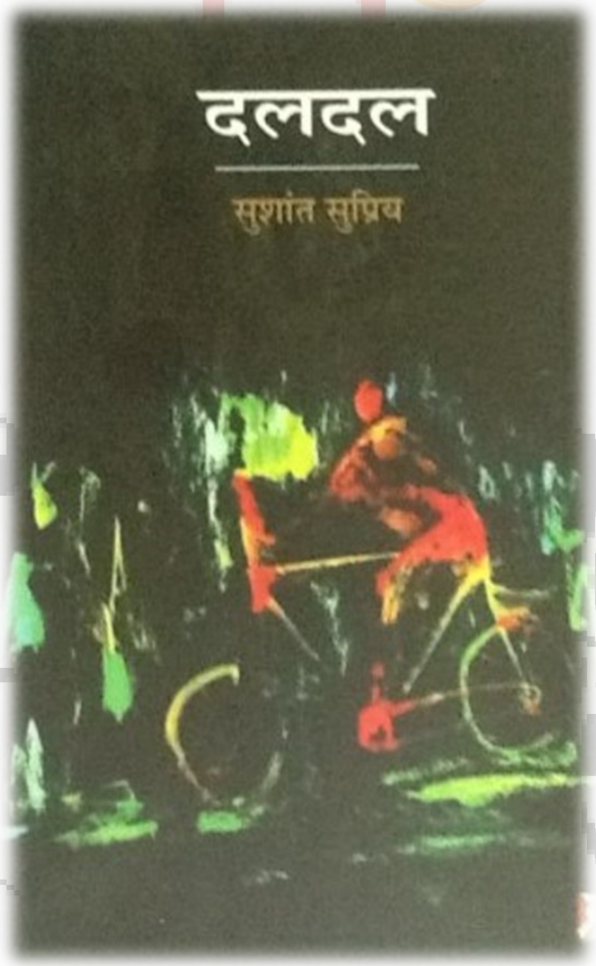

अराजक, अनैतिक माहौल में खुद को मिसफ़िट पाते 'मिसफ़िट' के केन्द्रीय पात्र का आत्महत्या का मानस बना कर रेलवे ट्रैक पर लेटना भय से भरता है तो 'पाँचवी दिशा' के पिता का हॉट एयर बैलून में बैठ कर उड़ना, गुब्बारे का अंतरिक्ष में ठहर जाना जिज्ञासा से भरता है। 'दुमदार जी की दुम' के दुमदार जी की रातों-रात 'दुम निकल आई है' जैसे भ्रामक प्रचार को अलौकिक और ईश्वरीय चमत्कार मान कर लोगों का उनके प्रति श्रद्धा से भर जाना उत्सुकता जगाता है तो 'बयान' के निष्ठुर भाई का "यातना-शिविर जैसे पति-गृह से किसी तरह छूट भागी मिनी को जबर्दस्ती घसीट कर फिर वहीं (पति-गृह) पहुँचा देना।"

आक्रोश से तिलमिला देता है। वस्तुतः सुशांत सुप्रिय की पारखी-विवेकी दृष्टि अपने समय और समाज की प्रत्येक स्थिति-परिस्थिति-मनः स्थिति पर ऐसे दायित्व बोध के साथ पड़ती है कि संग्रह की पंक्तियाँ तत्कालीन व्यवहार -आचरण का सच्चा बयान बन गई हैं - "कैसा समय है यह, जब भेड़ियों ने हथिया ली हैं सारी मशालें, और हम निहत्थे खड़े हैं।" (कहानी दो दूना पाँच)। "बेटा, पहले-पहल जो भी लीक से हट कर कुछ करना चाहता है, लोग उसे सनकी और पागल कहते हैं।" (कहानी 'पाँचवीं दिशा')। "मैं नहीं चाहता था मिनी आकाश जितना फैले, समुद्र भर गहराये, फेनिल पहाड़ी-सी वह निकले .... मेरे ज़हन में लड़कियों के लिये एक निश्चित जीवन-शैली थी।" (कहानी 'बयान')।

"लोग आपको ठगने और मूर्ख बनाने में माहिर होते हैं। मुँह से कुछ कह रहे होते हैं जबकि उनकी आँखें कुछ और ही बयाँ कर रही होती हैं।" (कहानी 'एक गुम सी चोट')। ये कुछ ऐसी वास्तविकतायें हैं जिनसे संत्रस्त हो चुका आम आदमी सवाल करने लगा है "नेक मनुष्यों का उत्पादन हो सके क्या कोई ऐसा कारखाना नहीं लगाया जा सकता ? " "लेकिन संग्रह की कहानियों में जो सकारात्मक भाव हैं ,

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

वे सवाल का उत्तर दें न दें , आम आदमी को आश्वासन ज़रूर देते हैं
कि “मुश्किलों के बावजूद यह दुनिया रहने की एक खूबसूरत जगह है।” (कहानी ' पिता के नाम ')

2

संग्रह की मूर्ति, पाँचवीं दिशा, चश्मा, भूतनाथ आदि कहानियाँ आभासी संसार का पता देती हैं। ये कहानियाँ यदि लेखक की कल्पना हैं तो अद्‌भुत हैं, सत्य हैं तब भी अद्‌भुत हैं। 'मूर्ति' का समृद्ध उद्योगपति जतन नाहटा आदिवासियों से वह मूर्ति, जिसे वे अपना ग्राम्य देवता मानते हैं, बलपूर्वक अपने साथ ले जाता है। मूर्ति उसे मानसिक रूप से इतना अस्थिर-असंतुलित कर देती है कि वह पागलपन के चरम पर पहुँच कर अंततः मर जाता है। 'पाँचवीं दिशा' के पिता हॉट एयर बैलून में बैठ कर उड़ान भरते हैं। गुब्बारा अंतरिक्ष में स्थापित हो जाता है। वे वहाँ से सैटेलाइट की तरह गाँव वालों को मौसम परिवर्तन की सूचना भेजा करते हैं। “चश्मा' कहानी के परिवार के पास चार-पाँच पीढ़ियों से एक विलक्षण चश्मा है जिसे पहन कर भविष्य में होने वाली घटना-दुर्घटना के दृश्य देखे जा सकते हैं। दृश्य देखने में वही सफल हो सकता है जिसका अन्तर्मन साफ हो। 'भूतनाथ' का भूत मानव देह धारण कर लोगों की सहायता करता है। वैसे 'भूतनाथ' और 'दो दूना पाँच' कहानियाँ फ़िल्मी ड्रामा की तरह लगती हैं। सुकून यह है कि जब हत्या, बलात्कार, दुर्घटना, वन्य प्राणियों का शिकार कर, गलत तरीके से शस्त्र रख धन-कुबेर और उनकी संतानें पकड़ी नहीं जातीं या पुलिस और अदालत से छूट जाती हैं, वहाँ 'दो दूना पाँच' के कुकर्मी प्रकाश को फाँसी की सजा दी जाती है। कहानियों में ज़मीनी सच्चाई है इसीलिये झाड़ू, इश्क वो आतिश है ग़ालिब जैसी प्रेम-कहानियाॅं भी प्रेम-राग का अतिरंजित या अतिनाटकीय समर्थन करते हुये मुक्त गगन में नहीं उड़तीं बल्कि इस वास्तविकता को पुष्ट करती हैं कि प्रेम के अलावा भी कई-कई रिश्ते होते और बनते हैं और यदि विवेक से काम लिया जाय तो हर रिश्ते को उसका प्राप्य मिल सकता है : “जगहें अपने आप में कुछ नहीं होतीं। जगहों की अहमियत उन लोगों से होती है जो एक निश्चित काल-अवधि में आपके जीवन में उपस्थित होते हैं।” (पृष्ठ 73)। लेकिन कुछ स्थितियाँ ऐसा नतीजा बन जाती हैं कि इंसान शारीरिक यातना से किसी प्रकार छूट जाता है लेकिन मानसिक यातना से जीवन भर नहीं छूट पाता। बिना किसी पुख्ता सबूत के, संदेह के आधार पर जाति विशेष के लोगों को अपराधी साबित करना सचमुच दुःखद है। ' मेरा जुर्म क्या है ?' के मुस्लिम पात्र के घर की

लेखक: सुशांत सुप्रिय
दलदल (कहानी संग्रह)

संदेह के आधार पर तलाशी ली जाती है, उसे जेल भेजा जाता है । बरसों बाद वह निर्दोष साबित होकर घर लौटता है लेकिन ये यातना भरे बरस उसका जो कुछ छीन लेते हैं उसकी भरपाई नामुमकिन है। 'कहानी कभी नहीं मरती' के छब्बे पाजी 1984 जून में चलाये गये आपरेशन ब्लू-स्टार के फौजी अभियान की चपेट में आते हैं। झूठी निशानदेही पर 'ए' कैटेगरी का खतरनाक आतंकवादी बता कर उन्हें जेल भेजा जाता है। वे भी बरसों बाद निर्दोष साबित होते हैं। कहानियों में इतनी विविधता है कि समकालीन समाज और जीवन की सभ्यता-पद्धति, आचरण-व्यवहार, यम-नियम, चिंतन-चुनौती, मार्मिकता-मंथन, समस्या - समाधान, साम्प्रदायिकता-नौकरशाही, कानून-व्यवस्था, मीडिया, भूकम्प, बाढ़, अकाल, बाँध, डूबते गाँव, कटते जंगल, किलकता बचपन, गुल्ली-डंडा, कबड्डी जैसे देसी खेल, कार्टून चैनल, वीडियो गेम्स, मोबाइल, लैप-टाप जैसे गैजेट्स .... बहुत कुछ दर्ज हैं।

3

सुशांत की कहानियाँ आकार में लम्बी नहीं , अपेक्षाकृत छोटी हैं तथापि सार्वभौमिक सत्य को सामने लाने में सक्षम हैं। भाषा आकर्षक और बोधगम्य है। आह्लाद और विनोद का

समीक्षक: - सुषमा मुनीन्द्र

सृजन: अब तक प्रायः 330 कहानियाँ लिखी हैं जो अक्षरा, साक्षात्कार, हंस, वर्तमान साहित्य, साहित्य अमृत, कथाक्रम, कथादेश, वागर्थ, समकालीन भारतीय साहित्य आदि राष्ट्रीय स्तर की पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं।

सम्प्राप्ति: मध्यप्रदेश साहित्य अकादमी का सुभद्रा कुमारी चौहान पुरस्कार, प्रकाश कुमारी हरकावत पुरस्कार (म0प्र0), निर्मल साहित्य पुरस्कार (म0प्र0), कमलेश्वर (वर्तमान साहित्य) कथा पुरस्कार, राधेश्याम चितलांगिया पुरस्कार, लखनऊ, पंडित हीरालाल शुक्ल पुरस्कार, जयपुर, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी सम्मान, समस्तीपुर, प्रेमचन्द्र (हंस) कथा सम्मान, दिल्ली, रत्नकांत रचना पुरस्कार, सतना, विन्ध्य शिखर सम्मान, रीवा, विन्ध्य गौरव सहित कुछ क्षेत्रीय सम्मान - पुरस्कार।

संपर्क:
द्वारा श्री एम. के. मिश्र
जीवन विहार अपार्टमेन्ट, फ्लैट नं. 7, द्वितीय तल, महेश्वरी स्वीट्स के पीछे
रीवा रोड, सतना (म.प्र.)-485001

पुट कहानियों को रोचक बना देता है। पात्रों के अनुरूप छोटे-छोटे, अनुकूल संवाद हैं जो अत्यधिक उचित लगते हैं। कुल मिला कर कहा जा सकता है किस्सागोई का आनंद देती ये कहानियाँ दिमाग पर हथौड़े की तरह वार करती हैं , तथा दिल पर असर छोड़ते हुये सकारात्मक सोच अपनाने के लिये प्रेरित करती हैं । अच्छे कहानी संग्रह के लिये सुशांत सुप्रिय को बधाई और शुभकामनायें।

मेरा बाल विज्ञान लोकप्रियकरण

-मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी

पुस्तक: मेरा बाल विज्ञान लोकप्रियकरण
लेखक: आइवर यूशिएल
प्रकृति: ई पुस्तक, प्रकाशक: Shopizen Inc
प्राप्ति : Shopizen app द्वारा
मूल्य: ₹, 50/-

लोकप्रिय हिन्दी विज्ञान लेखन जगत में आइवर यूशिएल यह नामसुपरिचित है। विज्ञान पर आधारित पाठ्यक्रम के बाहर की कोई हिन्दी पुस्तक हज़ारों ही नहीं बल्कि लाखों की संख्या में बिक जाय और वह भी सरकारी ख़रीद द्वारा नहीं बल्कि सामान्य बाल तथा युवा पाठकों द्वारा ऐसा अभूतपूर्व कीर्तिमान स्थापित करने वाले लोकप्रिय बाल विज्ञान लेखक के रूप में वे हम सभी के सुपरिचित हैं। मेरा उनका व्यक्तिगत परिचय तो बहुत पुराना नहीं है। वह सौभाग्य तो मुझे विज्ञान परिचर्चा के सम्पादन का दायित्व मिलने के कारण प्राप्त हुआ। किंतु इस नाम तथा उनकी पुस्तकों से मैं बहुत वर्षों पहले ही परिचित हो गया था जब मैंने पिछली शती के अस्सी के दशक में अपने बेटे के लिये उनकी लिखी जीव जन्तु, जादू, विज्ञान खेल आदि से संबंधित पुस्तकें खरीदीं और स्वयं भी पढ़ी थीं। याद रहने का एक और कारण था आइवर यूशिएल जैसा पूर्णरूपेण अपरिचित सा लगने वाला लेखक का नाम। मैं तो उनसे प्रत्यक्ष मुलाकात होने तक उन्हें विदेशी समझता था तथा उनके द्वारा इतनी अच्छी हिन्दी लिखे जाने पर विस्मय भी करता था। यद्यपि मुझे
श्री कामिल बुल्के जी से मिलने तथा उनके द्वारा अत्यंत शुद्ध हिन्दी में दिये गये व्याख्यान को सुनने का अवसर मिल चुका था इसलिये मुझे लगा कि ये भी बेल्जियम या रूस या ऐसे ही किसी देश के होंगे। उनकी पुस्तकें अनुवादित नहीं थीं बल्कि मौलिक थीं। तो यह भी अत्यंत प्रसन्नता की बात थी। यह तो मुझे बाद में पता चला कि वे एक विशुद्ध भारतीय व्यक्ति हैं जिनका नाम है रवि लायटू और इसी नाम की अंग्रेज़ी स्पेलिंग को उलटा करके

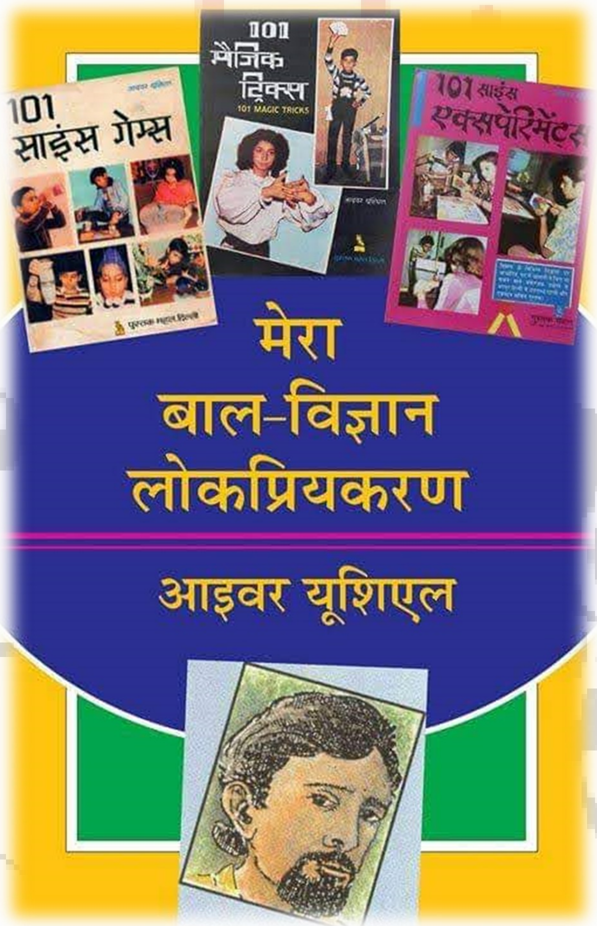

आइवर यूशिएल का जन्म हुआ है। श्री आइवर यूशिएल एक लोकप्रिय विज्ञान लेखक तो हैं ही परंतु इससे भी बड़ी बात है कि वे एक बाल विज्ञान लेखक हैं । बच्चों के लिये लिखना और वह भी विज्ञान जैसे विषय पर जिससे आम बच्चा दूर भागना ही पसन्द करता है बहुत टेढ़ी खीर होती है। इसलिये इस जाति के लेखक अत्यंत दुर्लभ होते हैं। वैसे ही हिन्दी में जनसामान्य के लिये सुगम ढंग से विज्ञान लिख सकने वाले ही आसानी से नहीं मिलते।

इंटरनेट का अंग्रेज़ी में लिखा माल जैसी तैसी हिन्दी में अनुवादित कर लेख लिखने वाले तो चाहे जितने मिल जाँय पर पूरी ज़िम्मेदारी के साथ विषय की एकदम सही जानकारी और वह भी मनोरंजक ढंग से देने का काम बिरले ही कर सकते हैं और उनमें आइवर यूशिएल का नाम अग्रणी है। उनके साथ एक सुभीता भी है और वह यह है कि वे एक चित्रकार भी हैं। इसलिये अपने लिखे को चित्रों द्वारा और आकर्षक बनाना उनके लिये सहज सम्भव हो जाता है। ऐसा लेखक यदि अपना जीवन प्रवास, अपने लेखक बनने की प्रक्रिया का क्रमगत विकास और अपना अनुभव विश्व प्रस्तुत करता है तो यह पाठक के लिये निश्चित रूप से एक अनमोल उपहार है। श्री यूशिएल जी की यह पुस्तक वही कार्य कर रही है। उनके अनुभव और उनसे प्राप्त ज्ञान लोकप्रिय विज्ञान लेखन के क्षेत्र में काम करने की इच्छा रखने वाले भावी विज्ञान लेखकों के लिये निश्चित रूप से मार्गदर्शक तथा प्रेरणादायी होंगे। यह पुस्तक यूशिएल जी की आत्मकथा नहीं है। यह उनके द्वारा विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में विभिन्न अवसरों पर लिखे गये लेखों का संग्रह है। पर सब लेखों का मूल स्वर एक ही है कि मैं कैसे बना। इसीलिये पुस्तक का नाम है " मेरा बाल विज्ञान लोकप्रियकर"।

एक सौ पृष्ठों की इस पुस्तक में 18 लेखों के 70 पृष्ठ इसी विषय वस्तु का प्रतिनिधित्व करते हैं। इतने वर्षों से बाल विज्ञान के क्षेत्र में कार्यरत रहते हुए भी और बाल पाठकों के बीच अमाप लोकप्रियता

प्राप्त करने के बावजूद बाल विज्ञान के क्षेत्र में जिम्मेदारों की जो सार्वत्रिक उदासीनता लेखक देखता है उससे लेखक केवल व्यथित ही नहीं बल्कि क्षुब्ध है। उसका यह क्षोभ पुस्तक की अर्पण पत्रिका में ही प्रकट होता है जब वह यह पुस्तक "बाल विज्ञान के लोकप्रियकरण के क्षेत्र में आधिकारिक भूमिका निभा रहे उन समस्त गांधारी पुत्रों को" अर्पित करता है "जिन्होंने देश के लाखों बच्चों की आशाओं और आकांक्षाओं को नज़रअंदाज़ कर अपनी नयी पीढ़ी को पूरी तरह उपेक्षित कर दिया।" विज्ञान से जुड़े अधिकारियों, वैज्ञानिकों, विज्ञान संस्थानों के प्रमुखों, प्राध्यापकों या लगभग उन सभी व्यक्तियों की, जिनके पास इस सम्बन्ध में कुछ न कुछ करने का अधिकार होता है, कुछ सामान्य धारणाएँ होती हैं जो किन्हीं अध्ययनों से नहीं बनी होतीं, बस होती हैं। हिन्दी में विज्ञान लेखन करने से कोई लाभ नहीं क्योंकि ज्ञान तो सारा अंग्रेज़ी में होता है तो अंग्रेज़ी में ही मौलिक लिखा जा सकता है, हिन्दी में तो केवल अनुवाद सम्भव है; हिन्दी में लिखा ही नहीं जा सकता क्योंकि हिन्दी में तकनीकी शब्द नहीं मिलेंगे और बनाये गये शब्दों का प्रयोग कर लिखा जाय तो बहुत कठिन हो जाता है; हिन्दी पढ़ेगा ही कौन और जो पढ़ते हैं वे दूसरे दर्जे के होते हैं;

हिन्दी में लिखी किताबें बिक नहीं सकतीं ये और इस प्रकार की अनेकानेक पूर्वाग्रहयुक्त धारणाओं से वे भरे होते हैं और उन्हें ही लेखक गांधारीपुत्र कहता है। उन सबकी उन भ्रामक धारणाओं और मान्यताओं का प्रत्यक्ष उत्तर हैं श्री आइवर यूशिएल और उनकी लेखकीय यात्रा की यह कहानी। इसीलिये उन्हीं को इस पुस्तक को अर्पण कर लेखक ने एक विशिष्ट औचित्य साध्य किया है। पुस्तक का पहला लेख है "मेरा बाल विज्ञान लोकप्रियकरण" जो पुस्तक का भी नाम है। इसमें लेखक ने अपने बाल विज्ञान लेखक बनने की लगभग पूरी कथा सुनाई है। अध्ययन से वे एक इंजीनियर और रुचि तथा योग्यता से एक चित्रकार तथा डिज़ाइनर हैं। लेखन के क्षेत्र में तो संयोग से ही आये। पर जब आये तब उन्होंने हिन्दी विज्ञान जगत में एक नयी हवा बहा दी। बाल पाठकों को आकर्षित करें ऐसे विषय, अत्यंत चुटीले शीर्षक, पुस्तक की मनमोहक चित्र सज्जा, सरल सुबोध भाषाम और साथ में शुद्ध तथा सही वैज्ञानिक जानकारी इन विशेषताओं के कारण तथा प्रकाशक द्वारा मूल्य भी अभिभावकों के लिये वहन करने योग्य रखे जाने के कारण उनकी पुस्तकें ग्रामीण तथा शहरी सभी क्षेत्रो के पाठकों द्वारा हाथोंहाथ ली गयीं। वे अब तक लगभग ७५ पुस्तकें लिख चुके हैं। उनकी अनेक पुस्तकों के अनेक देशी तथा विदेशी भाषाओं में अनुवाद भी प्रकाशित हो चुके हैं। प्रस्तुत पुस्तक भी चूँकि बाल विज्ञान लेखन से सम्बंधित उनके विविध लेखों का संकलन है इसलिए यह अपने आप में इस विषय का एक दस्तावेज बन गयी है। इसके कुछ शीर्षक जैसे "हिन्दी में बाल विज्ञान साहित्य: एक दृष्टि", "विज्ञान लोकप्रियकरण कितना सार्थक", "बाल विकास में सहायक विज्ञान", "इक्कीसवीं सदी में हमें उड़न खटोले चाहिये कि सचमुच के रॉकेट", "चित्र कथाएँ: स्थिति और संभावनाएँ", "पुस्तकालयों से बढती दूरी: दोषी कौन" आदि बाल विज्ञान साहित्य के विविध पहलुओं, उसकी वर्तमान स्थिति तथा उसके सुधार के लिए उठाये जा सकने वाले कदमों को हमारे सामने बडी बेबाक़ी से प्रस्तुत करते हैं। हिन्दी में बाल विज्ञान साहित्य के बारे में जो भी जानना चाहे उसके लिये यह पुस्तक पढ़ना निश्चित रूप से आवश्यक है। बाल विज्ञान साहित्य तथा लेखक की अपनी लेखकीय यात्रा के वर्णन के अतिरिक्त भी पुस्तक के दूसरे भाग में उसके द्वारा विज्ञान सम्बन्धी विषयों पर लिखे गये अन्य लेख तथा ब्लॉग भी संग्रहीत किये गये हैं जिनसे पुस्तक की विविधता, पठनीयता तथा उपयोगिता और बढ़ गई है। "अनियंत्रित जनसंख्या: एक भयावह स्थिति," "कितनी संवेदनशील है प्रकृति," "सलीब से लटका अतीत," "कॉमिक्स बनाम ज्ञान विज्ञान " जैसे शीर्षक भाँति भाँति के सामाजिक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक विषयों के विविध पक्षों का ऊहापोह करते हैं।

केवल पचास रुपये में घर बैठे एक ऐप के माध्यम से पाठक को इतना सब सुलभ कराने के लिये विज्ञान जगत को लेखक श्री आइवर यूशिएल तथा प्रकाशक शॉपिज़ेन आइ एन सी का आभारी होना चाहिये। मुझे यह पुस्तक अच्छी लगी और इससे सम्बंधित विषयों में रुचि रखने वाले सभी इसे पढ़ें ऐसी संस्तुति करने में मुझे अत्यंत प्रसन्नता हो रही है।

मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी
संपादक, "विज्ञान परिचर्चा", देहरादून

व्यंग्य

आतंकी लेखक'

-रन्दी सत्यनारायण राव

आपने अब तक अखबार, पत्र-पत्रिका तथा सरकारी व गैर सरकारी प्रचार माध्यमों से यह जाना और पढ़ा होगा कि इन दिनों हमारे देश के विभिन्न इलाकों में, देषश की एकता को खतरे में डाल अपनी रोटी सेंकने वाले उग्रवादी, आतंकवादी खूनी खेल कर रहे हैं।

कोई सिख आंतकवादी है, तो कोई उल्फाई, कोई गोरखालैण्ड की माँग वाले हैं तो कोई कश्मीरी। तात्पर्य यह कि ये सब राजनीतिक रूप से विजय प्राप्त करने और अपनी देश तोड़क माँगें पेश कर उन्हें मनवाने के लिए दबाव के रूप में अपहरण, लूट, हत्या जैसे कुकृत्यों का सहारा ले रहे हैं। किन्तु, ऐसे घृणित कार्य में संलग्न लोगों के साथ मैंने 'आंतकवादी लेखक' शीर्षक देकर चौका ही दिया न ....

लेकिन यह एक सौ एक फीसदी सच है कि यहाँ जिस आंतकवादी लेखक की बात कर रहा हूँ, उससे कितना कुछ शहर के बुद्धिजीवी वर्ग आक्रांत है। यहाँ मुश्किल तो यह है कि हर शख्स जनता का आवाज बनकर सफेदपोश लेखक, पत्रकार के पीछे ही पड़ा रहता है। अब आप ही सोचिए, साहित्यकार समाज का आईना होता है, उसकी रचनाओं में समाज प्रतिबिम्बित होता है, पत्रकारों का कर्तव्य होता है कि वे जैसे देखें, सुने उसे अपने अखबार में लोकहित में निर्भिकता से सामने लायें, सच पूछिए तो मैंने भी यही मान और जानकार अब तक चल रहा था, कितना जोखिम भरा काम है यह, किन्तु पिछले दिनों 'आंतकवादी लेखक' से मुलाकात कर उनसे बातचीत के क्रम में सारी गलत फहमियाँ दूर हो गई। उनसे मुलाकात भी बड़े विचित्र ढंग से हुई।

एक वृद्ध साहित्यकार जिनका काम ही नये उत्साही युवकों को फांस कर उन्हें गुरु मान लेने को बाध्य करना होता था, वे एक ऐसे ही युवक को सब्जबाग दिखा रहे थे कि वे उसे फलां दैनिक में लगा देंगे। मैं भी वहाँ उपस्थित था, अचानक दूर से किसी धवल वस्त्रधारी युवक को आते देख वे बेचैनी महसूस कर बोले - वह आंतकवादी आ रहा है, अब मैं चलता हूँ, आप लोग भी जायें। वे दोनों चले गये किन्तु मैं अड़ियल टट्टू की भांति वहीं जमा रहा, सोचा बहुत नाम सुना था, अब दर्शन कर कृतार्थ हो लूं। वे निकट आए और बोले, कहिये रन्दी भाई कैसे, हैं? मैं आवाक् उन्हें देखने लगा। भई .... आश्चर्य नहीं करें अक्सर ऐसा ही होता है कि आप की रचनाओं से बहुत सारे लोग आपको जान गये और आप उन्हें पहचानते तक नहीं, दरअसल हमारे साथ भी ऐसी ही बात है, मैं आपको जानता हूँ, आप मुझे नहीं, खैर चलिए कहीं चाय पीते हुए गप-शप करते हैं।

चाय के क्रम में उन्होंने बताना आरम्भ किया - स्थानीय साहित्यकार और पत्रकारों ने मुझे अपनी बिरादरी से इसीलिए दूर रखने की चेष्टा की है कि मैं जन्मजात मुंहफट् हूँ। सारे महान साहित्यकार और पत्रकारों के अच्छे और बुरे कामों को उनकी जन्म कुण्डली के साथ मैंने संजोकर रखी है। जैसे उदाहरण के लिए - किस साहित्यकार ने कहाँ कहानी कविता चुरा कर किस में छपवाई है, उसकी एक ही रचना कितने पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई है। किस ने आकाशवाणी जाकर अपनी रचना प्रसारित करवाले के क्रम में अपने स्वाभिमानों को गिरवी रखा है, किस कवि और कहानीकार ने खुद के पैसो से अपना सम्मान करवाया है, और किस पत्रकार की किस कन्या से आखें लड़ी है, किसने शराब पीकर मार खाई है, और किसने चापलूसी की नौकरी हथयाई है, अथवा ब्लैकमेल कर दुकानदारों से विज्ञापन हासिल किया है। किसने अपने गुट के लोगों के पैसे प्रेस में बढ़वायें हैं, और किस ने सम्पादकीय दायित्व को कलंकित करते हुए मौलिक रचनाकार के चरित्र हनन में सहायता की है और किस ने अपने साथियों का हक छीना है, कौन - कौन पुरस्कारों का बन्दरबांट कर रहे हैं, किसी पुलिस और अपराधियों से घनिष्टता है, किस संपादक की साहित्यकार, पत्रकार से तकरार है और कौन बगैर निमंत्रण के सभा, सोसाईटियों में पत्रकार के रूप में जाकर मुर्गो और शराब पर हाथ साफ कर रहे हैं। यहाँ के तथाकथित साहित्यकार, पत्रकार इसी से मुझे से दूर-दूर रहते हैं।

मैं आप से पूछना चाहता हूँ कि आप ही ऐसे साहित्यकार का नाम बतायें जो गुटबाजी न करता हो, दूसरों पर कीचड़ न उछालता हो, और स्वयं तो कुछ न लिखे लेकिन जो लिखते हैं उनकी तारीफ की जगह जली-कटि सुनाना क्या साहित्यिक धर्म है? पत्रकार सच्चाई और निर्भिकता की बात किस मुँह से करते हैं?

आप क्या बता सकते हैं कि कौन सा पत्रकार इस पुनीत कर्तव्य का निर्वाह कर रहा है ? शायद नहीं, आप ऐसे पूर्वाग्रह वाले लोगों को जानते ही नहीं। कोई कह दिया फलां 'आतंकवादी लेखक' है, आपने आंख मूंदकर मान लिया और लिखकर डिस्पैच कर दिया। आपको मालूम होना चाहिए कि आतंकवादी कभी खुले में किसी से मुकाबला नहीं करते, और यह भी कि उन्हें अपनी जाति, धर्म, वालों की सहायता मिलती है, तभी तो इधर मारा, उधर बिल में घुस गये। मीर जाफर व जय चन्दो के इस देश में बदकिस्मति से एक भी जयचन्द या मीर

जाफर साहित्यकार मेरी सहायता को नहीं आया। यह मेरा ही नहीं इस देश की परम्परा का अपमान है। अब आप ही देख कि, जो व्यक्ति अकेले ही भाड़ फोड़ने चला हो और साहित्यकार, पत्रकारों की कलई ताल ठोककर करते हुए प्रमाण सहित अपने पत्र चरित्रहीन में छापता हो, वह पागल ही कहलायेगा न और यह दुनिया सही बात कहने वालों को हमेशा ही 'पागल' ठहराती है। वैसे, व्यक्ति के नाम के साथ आतंकवादी जोड़ना क्या शोभा देता है ? लेकिन चोर-चोर मौसेरे भाईयों की एकता से अभिभूत हो आशा करता हूँ कि मेरे विरूद्ध गोलबंद होने को विवश करने वाली इनकी एकता जीवन पर्यन्त जाती रहे, यही साहित्य के प्रति मेरा योगदान होगा।

वह आगे और कुछ कहते, किन्तु उनका गला अवरूद्ध हो गया अपनी बिरादरी से दूर कर दिये जाने का दुख उनके चेहरे पर स्पष्ट परिलक्षित हो रहा था। परिणाम स्वरूप आंखों से दो मोटे-मोटे आंसू छलक उनके आस्तिन पर आ गए। उन्होंने कदाचित वस्तु स्थिति का आभास हो गया था, सो मुँह कर उन्होंने अपने को संयत करने की चेष्टा की। किन्तु मैंने उन्हें ढ़ाढस बंधाते हुए कहा - 'बन्धुवर .... आप जैसे कठोर और निर्भीक विचारों के स्वामी में फूल सरिखा कोमल हृदय भी है, यह आज जी जाना। सचमुच परिचय और विचारों के आदान-प्रदान के अभाव में लोग कितनी गलतफहमियाँ पाल बैठते है। आपके द्वारा जनता और साहित्य के हित में किये जा रहे संघर्ष में मैं भी आपके साथ हूँ। और वे मेरे गले से लगकर फफक उठे। उनके संर्घष को सांत्वना के दो बोल जो मिल गये थे।

भैया जी रंग रसिया

रन्दी सत्यनारायण राव

रंग-मंच की दुनिया में, भैया जी कोई परिचय के मोहताज नहीं, मुर्गे की प्रथम बांग के साथ उनकी आँख खुलती है, तो पहले ही पहल अपने बिस्तर के चरण स्थल के निकट शहर के प्रसि षोड्षी के कामुक मुस्कान से मंडित चित्र से, आँखों की प्यास बुझाने के बाद, बेड 'टी; की चुस्कियों से अख़बार के रंग-मंच और फिल्म से संबंधित सामग्री पढ़ने से उनकी दिनचर्या शुरू होती है। चूंकि मैं उनका राज़दार हूँ, इसलिए मुझे भी अपने साथ अवैतनिक रखते चलते हैं, कि मैं, अनुभव प्राप्त करता चलूँ, ताकि उनकी परम्परा को आगे बढ़ा कर, उनके नाम पर एक अलग रंग मंचीय धर्म की नींव डाल सकूँ। इस संबंध में उनको, मुझ पर मुझसे भी ज्यादा विश्वास है। मुझे याद नहीं पड़ता कि, उनके और मेरे दरम्यान मतभेद कभी हुए हों, अलबत्ते एक बार अवश्य रूष्ट और पचपन आयु के कारण, बचपने पर उतर आए थे। हुआ यों कि भैया जी ने नाटक को निर्देशित किया, उनकी पचास तकनीकि भूलों को काट-छांट कर, मात्र पाँच कर मैंने एक लेख लिखा। उन्होंने मेरी स्वामी भक्ति पर, गुप चुप शंका करते हुए एक जवाबी लेख, लिख मारा। दुर्भाग्य से मैंने उन्हें एक जागता हुआ निर्देशक निरूपित करते हुए, नारी गंध से दूर रहने वाला बताया था। जबकि अख़बार वालों ने गलती से मेरी बात को इस प्रकार प्रकाशित किया- " उन्होंने लिखा कि नाटक को आँख बंद कर देखा, पर उनका ध्यान नाटक की नायिका के सरकती साड़ी पर केंद्रित था। अब समीक्षकों के विचारों पर न भी जाऊँ तो भी, पाठकों ने मुझे, भैया जी का चमचा कह जो आरती उतारी कि बस ..... लेकिन इसके बाद यह बात प्रकाश में आ ही गई कि भैया जी के रंग मंचीय ज्ञान और समीक्षाओं का कोई जवाब नहीं, भैया जी की रूचि इन दिनों, देखे-अनदेखे नाटकों पर समीक्षा लिख कर प्रकाशित करवाने की हो गई है, उस दिन मैं ही क्या, शहर का प्रत्येक वह शख्स जो, रंग मंच से जुड़ा हुआ महसूस करता है, ऐसे ही एक पत्र में, भैया जी के नाम के साथ प्रकाशित नाटक की समीक्षा देख कर भौंचक्क रह गया। हुआ यों कि, जिस नाटक को देखकर भैया जी ने उस दिन के अख़बार में, समीक्षा लिखी थी, वह तो उस दिन मंचित ही नहीं हुई। उस दिन शहर में उपद्रव की आशंका को देखते हुए प्रशासन ने निषेद्याज्ञा घोषित कर दी थी। लेकिन इसमें भैया जी पर भी लांछन नहीं लगाया जा सकता था। बेचारे ने इसकी कल्पना तक नहीं की थी आदतन 'टेबुल - राईटिंक' में पकड़े गए। मैंने धीरे से यह हुनर मेरी ओर सरकाने की मिन्नत की तो आग बबुला हो कर बोले- "तुम जैसे

जाने नाटक और उसकी समीक्षा, मुझ जैसे बनिये के नाम ही यह हुनर है। मैं, तुम्हें अपने साथ रखकर सेवा और सीखने का मौका दे रहा हूँ, इसी में खुश रहो, समझे? और मैं सर हिला कर रह गया। भैया जी ठीक ही तो कह रहे थे, आज तक उन्होंने जो भी किया या करना चाहते हैं, माता जी के कोख में रहते हुए सीख कर आए हैं। महाभारत के अभिमन्यू का उदाहरण सामने है, चूंकि भैया जी के रसिक मिजाज़ी से मैं, परिचित रहा हूँ, इसलिए यह समझ सकता हूँ कि भैया जी का इन दिनों, रंगमंच के प्रति प्रेम बढ़ गया दिख रहा है, तभी तो शहर के उस कोने से इस कोने तक, संस्कृत कर्मियों में अपनी पैठ बनाए रखने के लिए सम्पर्क यात्रा करते फिर रहे हैं। इस कारण से वे मेरे मन बसिया हैं, कि निरंतर चर्चा में कैसे रहा जाए? इसका हुनर वे अपने पास सुरक्षित रखते हैं, उनकी दिली इच्छा है कि, वे जीवन पर्यन्त और बिना दम लिए रंगमंच की सेवा करते रहें, साथ ही छपते भी रहें, इसलिए शहर से प्रकाशित होने वाली पत्र-पत्रिकाओं के अतिरिक्त तमाम सोविनियरों में, छपते रहने का जुगाड़ भिड़ाने में जमीन आसमान एक किये हुए हैं। यदि आपको, अपने शहर अथवा मित्रों से लोकप्रिया होना है, या भैया जी के जैसा प्रतिभा सम्पन्न समीक्षक बनने की इच्छा है और कला-संस्कृति से संबंधित तकनीकी जानकारी न भी हो तो चलेगा। लेकिन तिकड़मी होना जरूरी होगा, एक बाद मूड में आकर भैया जी ने बता ही तो दिया - "अरे तू सत्तू धकेला कर, खाली चारू-पानी से अक्ल का दरवाज़ा नहीं खुलता। फिर भी तेरा मरियल सा चेहरा देखकर मुझे भी पता नहीं चलता कि दया कहाँ से आ रही है। फिर भी मेरे मरने के बाद तू ही यह संसार संभालेगा, इसलिए बताए देता हूँ सुन, मैंने कान उनके सामने कर दिये तो उन्होंने बोलना शुरू किया - "किसी आयोजन, नृत्य तथा नाटक को देखने जाने की आवश्यकता नहीं, पहले ही पता करले कि अमुक जगह, स्थान व दिन - समय में, वे आयोजित हो रहे हैं, अपने विश्वस्त मित्र या आयोजक से सम्पर्क कर जानकारी ले लें, फिर अखबारों के उस जैसे कार्यक्रमों पर लिखे गये कतरनों को संभाल कर रख लें, ऐसा करते समय ध्यान रहे कि कोई बात अपनी तरफ से जोड़ी न जाए, क्योंकि अक्सर एक नाटक बार - बार खेला/ मंचन किया जाता है, उसके सारे तकनीशियन कलाकार वही होते हैं, नृत्य, गीत, संगीत की जानकारी समीक्षक, या आलोचक को होना जरूरी नहीं, सब को मिलाकर लिख मार। चूंकि आज सच का दौर नहीं, किसी की आलोचना मौत को दावत देने जैसा है, इसलिए घटिया से घटिया नाटक को भी सर्वश्रेष्ठ करार देते हुए उसे नाटक और कला के क्षेत्र का युगांतकारी घटना कह कर निरूपित कर, तब देखना तरक्की के रास्ते खुद तुमसे हो कर गुजरेंगे। पत्र-पत्रिका वाले तुम्हारे विचार छापने को दौड़ पड़ेंगे, इससे नाम के साथ दाम मिलेगा, सो अलग।

भैया जी की बात को मैं गांठ बाँध ही रहा था कि उन्होंने एक नई बात कह कर मेरे रोंगटे खड़े कर दिए, उन्होंने इसे एक पवित्र सेवा भाव का नाम देते हुए, ऐसे लोगों पर लेख लिखना आरम्भ करने की जानकारी देते हुए मुझे अकेला छोड़ निकल लिए कि कुछ पर लिख कर पैसे लेने हैं।

रन्दी सत्यनारायण राव

बी-32/बी इंदिरा रोड, बागुन नगर, बारीडीह कॉलोनी, जमशेदपुर- 831017.

व्यवसाय- टाटा-स्टील से अवकाश प्राप्त

उपलब्धि- 'आशीर्वाद' (साहित्य एवं फिल्म प्रतियोगिता), मुंबई से सन् 6 अक्टूबर 1979 में, मातुश्री सभागार में, अहिन्दी भाषी के रूप में विषेश पुरस्कार प्राप्त, यह पुरस्कृत कविता- 'सूर्योदय की प्रतीक्षा' के लिए था जो तत्कालीन भारत की फिल्मी दुनिया के प्रसिद्ध शायर और गीतकार जनाब कैफी आजमी के कर-कमलों द्वारा प्राप्त हुआ।

लेखन- सत्यनारायण जी कविता, कहानी (बाल कहानियाँ) फिल्मी, व्यंग्य के अतिरिक्त साहित्य की सारी विधाओं को स्पर्श करने की कोशिश अनवरत करते रहें हैं। अब तक हजार से ऊपर विविध विधाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

हे भाय ! तेरे से अच्छा मेरा वाद !

आजकल अपन के मुलुक में वादियों का जमाना है। साहब! वादी तो वादी ही हैं। वह चाहे विचारवादी हों या अलगाववादी। काफी हाउस से लेकर शहर के टी-स्टालों और अखबार की सुर्खियों में बस एक ही चर्चा है। वह है वादियों की। वादियों की नई-नई जमात पैदा हो रही है। अब देखिए न! आजकल अपने बौद्धिकता वादियों में भी आजादी वादियों की नई नस्ल पैदा हो गई है, जो टुकड़े-टुकड़े वादियों का समर्थन करती है। वादियों की जमात ने अपनी वादी को आतंक और अलगावाद में झोंक दिया है। जिसकी वजह से अपनी कुदरतवादी, नरकवादी बन गई है। नतीजा वादियों के अलगाववादी आजकल जेलवादी हो गए हैं। कोई राष्ट्रवादी है तो कोई वामवादी। कोई समाजवादी है तो कोई पूंजीवादी। कोई पूरब है तो कोई पश्चिमवादी कहीं साम्यवाद है तो कही मार्क्सवाद। कहीं लेनिनवाद है तो कही मैकालेवाद। कहीं फांसीवादी हैं तो नाजीवादी भी। बदलते दौर में वादियों के कई क्लोन तैयार हो गए हैं। सारे फसाद की जड़ यही क्लोनवादी हैं। कहने को तो सब विचारवादी हैं लेकिन अपनी राष्ट्रवाद की परिभाषा में सब अलगाववादी हैं। जरा सोचिए । राष्ट्रवादी, भगवावादी और संघीवादियों के हालात अछूतवादियों जैसे हो गए हैं। संघीवादियों की विचारधाराओं का केमिकल इतना तगड़ा है कि गंजेवादी कंघी लिए फिर रहे हैं। जबकि नकाबवादी दंगावादी संयुक्तमंच साझा कर रहे हैं।

देखिए साहब! क्या जमाना आ गया है। विचारधाराओं के क्लोन बेहद घातक बन गए हैं। दक्षिण और वाम के मध्य से निकला सेक्युलरवाद आजकल हासिए पर है। जिसकी वजह से सेक्युलरवादी आजकल जनेऊ और पकौडेवादी बन गए हैं। राष्ट्रवादियों का आरोप है कि गिरगिट की तरह रंग बदलने वाले सेक्युलरवादी अवसरवादी रथयात्रा के समर्थक हैं। विचारवादियों की इतनी उपशाखाएं आ गई हैं कि पता हीं नहीं चलता कि असली राष्ट्रवादी कौन हैं। टुकड़े और आजादी वादियों के हाथ में भी हम तिरंगे दिखते हैं तो स्वयंभू राष्टवादियों के हाथ भी। फिर इतना घालमेल काहे का? यह अपचवादी नीति अच्छी नहीं है। हमें मुफत का माल छकने की आदत पड़ गई है। जिसकी वजह से बजारवाद का फंडा मुलुक पर भी लागू करना चाहते है। अभी नव वर्ष की खुमारी है। बाजार पर इसका असर कायम है। आनलाइन कंपनियां भी आफर दे रही हैं। बाय वन, गेट टू फ्री। यह फ्री का फार्मूला अपन के मुलुक पर भी चल निकला है। आजादी वाली गैंग फ्री में कश्मीर चाहती है। अरे भाई! अब तो कश्मीर फ्री है। कितना मुफत में लोगे।

हम वादियों को धन्यवाद ज्ञापित करते हैं। क्योंकि इन्होंने वादियों की नई-नई भाषा और परिभाएं गढ़ी हैं। जिसकी सूची बेहद लंबी है। अपन की कश्मीर वैली में देखिए। वहाँ वादियों की लड़ाई ने अतिवादी, आतंकवादी, जेहादवादी, पत्थरवादी जैसी कई जमातें पैदा की हैं। शोधार्थियों के लिए अच्छी खबरें हैं। उन्हें वाद पर रिसर्च करने के लिए पर्याप्त विषय और सामग्री भी उपलब्ध है, जिस पर अच्छा शोध किया जा सकता है। मुलुक में हर रोज वादियों की नई नस्ल उपज रही है। कैंपसों में नकाबवादी, हाकीवादी, डंडावादी, लाठीवादी, कबंलवादी, बमवादी, गोलीवादी और गुंडावादियों का अभ्युदय हो रहा है। हाल ही में सिनेवादियों ने एक नए वाद को जन्मदिया है। उसका नाम है मौनवादी। सोशलमीडिया पर वह हैशटैग कर रहा है। आजादी वादियों की गैंग में वह मौनवादी पहुंचता है और फिर चलता बनता है। उसके बाद सोशलमीडिया पर विचारवाद के अतिवादी ट्यूट-ट्यूट की छपाक करने लगते हैं। वादियों की नई-नई नस्लों ने कई आशंकाएं बढ़ा दी है। ऐसा लग रहा है कि जैसे कि वादियों की नस्ल इजाद करने के लिए मुलुक में स्पर्धाएं चल रही हैं। नीत नए प्रयोग हो रहे हैं। लेकिन अहिंसावादियों पर हिंसावादी भारी पड़ते दिखते हैं। हमारी सेहत के लिए यह ठीक नहीं है। अब बेचारे गांधीवादी, नेहरुवादी, पटेलवादी, सावरकरवादी, अंबेडकरवादी, सुभाषवादी क्लोनवादियों से यह पूछते फिर रहे हैं कि आखिर राष्ट्रवादी है कौन ?

प्रभुनाथ शुक्ला (पत्रकार)

ग्राम हरिपुर, पोस्ट अभिया, जनपद भदोई—221404

दूरध्वनी ; 8924005444, व्हाट्सएप: 9450254645

अणुमेल: pnshukla6@gmail.com

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

दर्शन का बंटाधार

-जितेन्द्र " कबीर"

कोरोना के कारण जैसे ही देश में लोकडाउन हुआ, भारत की संस्कार प्रिय जनता की पुरजोर माँग पर 30-35 साल बाद दूरदर्शन पर रामायण का पुनः प्रसारण किया गया। बहुत सारे लोगों ने परिवार सहित इस धारावाहिक को देखकर अपने संस्कारों की नींव पक्की की। राणा जी ने भी कोरोना योग से मिले इस अवसर का इस्तेमाल अपने बारह वर्षीय बेटे को भारतीय संस्कारों से परिचित करवाने के लिए किया। धारावाहिक की अंतिम कड़ियों में से एक में सीता मैया धरती माता की गोद में समा गईं। यह सब देखकर बालक ने अपने पिता से निम्न प्रश्न पूछे-- बालक - पिता जी, सीता मैया ने आत्महत्या क्यों की? क्या रामराज्य में ऐसा करना अपराध नहीं था? उनको आत्महत्या के लिए मजबूर करने वालों के खिलाफ कोई कार्रवाई की गई थी या नहीं? आजकल की तरह कहीं कुछ ले- देकर मामला रफा-दफा तो नहीं कर दिया था? राणा जी-- देखो बेटा, भगवान के बारे में ऐसा नहीं कहते। सीता मैया तो साक्षात लक्ष्मी की अवतार थीं, वो तो सशरीर ही अपनी धरती माता की गोद में चली गईं थीं।

बालक- अच्छा!! पड़ोस के सैम अंकल भी कुछ दिन पहले सशरीर धरती की गोद में चले गए थे, वो भी धरती पुत्र ही होंगे फिर तो? (सैम की कुछ दिन पहले मौत हुई थी) राणा जी -- अरे कहाँ सैम और कहाँ सीता मैया!! सैम ईसाई था, वो लोग मरने के बाद जीसस के पास जाते हैं, जैसे मुसलमान अल्लाह के पास जाते हैं, सिर्फ हिन्दू ही स्वर्ग जाते हैं। फिर सीता माता तो देवी थी, कोई साधारण मनुष्य नहीं। उन्होंने सीधा वैकुंठ धाम के लिए प्रस्थान किया था।

बालक- पिता जी, अगर सीता मैया देवी थीं तो इतना दुःख क्यों सहना पड़ा उनको? भगवान राम के साथ वन-वन भटकीं, रावण की कैद में रही, अपनी पवित्रता को साबित करने के लिए अग्निपरीक्षा भी उनको देनी पड़ी और इतना सब कुछ सहने के बाद भी कुछ प्रजा जनों की कानाफूसी के कारण उनको गर्भवती अवस्था में ही फिर से वनों में प्रस्थान करना पड़ा।माफ़ कीजिए पिता जी, लेकिन सीता मैया के मामले में राम जी ने एक साधारण मनुष्य जितनी भी मर्यादा नहीं निभाई। अगर उन्हें अपनी पत्नी पर इतना भी विश्वास नहीं था तो उसको लंका में ही रहने देते, कम से कम उनकी इतनी दुर्गति नहीं होती कि आत्महत्या मेरा मतलब धरती में ना समाना पड़ता।

राणा जी -बेटा, भगवान राम ने तो जन्म ही इसलिए लिया था ताकि वो अत्याचारी रावण को मारकर दुनिया को मुक्ति दिला सकें। बालक - मतलब सीता मैया राम जी के लिए लक्ष्य की पूर्ति का एक मोहरा मात्र थीं। दरअसल उन्होंने अपनी पत्नी के अपहरण का बहाना बनाकर ठीक उसी तरह रावण को मारा, जैसे शिकारी एक बकरी को चारे के रूप में प्रयोग करके शेर का शिकार करता है। क्या वो किसी और बहाने से रावण को नहीं मार सकते थे? राणा जी -- वो तो विधि का विधान ही ऐसा था। भगवान राम भी उस समय मनुष्य रूप में थे, इसलिए विधान के अनुसार उनको भी चलना पड़ा।

बालक - ओहो!! बेचारी भारतीय नारियों के लिए विधि माता सदियों से ऐसा ही विधान रचती आई हैं। परित्याग, अपहरण, हिंसा और बलात्कार बहुत सारी महिलाओं की किस्मत में लिखा होता है। इन अत्याचारों से सीता मैया जैसी देवी नहीं बच पाई तो आम औरतों की क्या औकात है? इस लिहाज से तो आज औरतों , लड़कियों, बच्चियों पर जो अत्याचार हो रहे हैं, वो उनके भाग्य में लिखे हैं। सारी मानव जाति पर भी जो अत्याचार हो रहे हैं, सब उनके भाग्य में लिखे हैं, फिर तो इन सबका कोई विरोध नहीं होना चाहिए। राणा जी -- बेटा, इस जन्म में हमें जो भी मिलता है, वो तो हमारे पूर्व जन्मों के कर्मफल के हिसाब से मिलता है।

बालक—समझ गया। इस समय जिस किसी के साथ जो भी ग़लत हो रहाहै, वो उसके पिछले जन्म में किए गए कर्मों के कारण हो रहा है। यदि किसी की हत्या हो रही है तो पिछले जन्म में उसने भी किसी की जान ली होगी, यदि किसी के साथ और कोई ग़लत काम हो रहा हो तो उसने भी पिछले जन्म में वैसा ही किया होगा। हमें किसी को रोकने-टोकने और जेल में डालने की जरूरत नहीं। जो लोग दूसरों पर ऐसा अत्याचार कर रहे हैं, वो वास्तव में विधि के विधान के तहत ही ऐसा कर रहे हैं। हमें उनको भगवान का ही फरिश्ता समझना चाहिए जो विधि के विधान के अनुसार सबको

दण्ड दे रहे हैं। वाह पिता जी, आज आपने मेरे ज्ञान-चक्षु खोल दिए। अब मेरी किसी भी विषय में कोई शंका शेष नहीं रही। हमारी महान संस्कृति को शत शत नमन, जिसने ऐसी राह मनुष्य को दिखाई है । गीता में बिल्कुल सत्य बात लिखी है- "जो होता है अच्छे के लिए होता है, जो होगा वो भी अच्छे के लिए होगा। तुम क्यों

व्यर्थ में चिंता करते हो" अभी इस ज्ञान प्राप्ति को कुछ दिन ही बीते थे कि घर के पास ही राणा जी की मोटरसाइकिल को किसी तेज रफ्तार कार ने टक्कर मार दी। अपनी टूटी टांग के साथ आग बबूला होकर राणा उस कार वाले के साथ उलझ गये। शोर सुनकर उनका बेटा भी वहाँ आ गया।पिता की ऐसी हालत देखकर उसको गुस्सा तो बहुत आया पर साथ ही उसको पिताजी द्वारा दिया गया ज्ञान भी याद आया कि जो भी होता है अच्छे के लिए होता है। वो अपने पिता जी से बोला-" पिता जी, आप बेकार में गुस्सा मत करिए, हो सकता है आपने पिछले जन्म में इसको टक्कर मारी हो जिसके फलस्वरूप आपके साथ ऐसा हुआ।यह इन्सान तो भगवान का फरिश्ता है जिसके कारण आप पूर्व जन्मों के बुरे फल से मुक्ति पा रहे हैं। " बेचारे राणा जी को ऐसा लगा जैसे उन्हीं का छोड़ा हुआ तीर , उनके ही पिछवाड़े में आ लगा हो।

जितेन्द्र 'कबीर'
जितेन्द्र कुमार गांव नगोड़ी डाक घर साच तहसील व जिला चम्बा हिमाचल प्रदेश
संपर्क - 7018558314

बाल कविताएँ

बिल्ली मौसी

बिल्ली मौसी ताक में
चूहे जी की घात में
टॉमी सोच रहा था.
आती बिल्ली हाथ में।

चूहे के मोबाइल पर
संदेष एक है आया
बिल्लियाँ है हड़ताल पर
चले आओ गोदाम पर।
चूहे ने बिल्ली को
होली पर कहा आने को
बिल्ली ने कहला भेजा-
भांग नहीं पिलाने को।

जंगल में साक्षरता

जंगल में कंप्यूटर राजा
गाड़ रहा है झंडे.....।
मुर्गी बोली गुटरू गूं
सेने दो मुझे अण्डे।
साक्षरता का अभियान चला
शेर का आया फरमान
जानवर सब पढ़-लिख,
सब का करें कल्याण।
आज से भूलें झगड़े
पढ़ लें सण्डे या मण्डे।
झुमरू बंदर षोर मचाता -
पढ़ो, मत मारो मुझे डंण्डे।
गुरिल्ले को अचरज होता
बक्षे में क्या झांक रहें...,
भोले-भाले सारे पंड़े।
अजगर बैठे सो जाता
कहता, पढूंगा मैं बाद,
खालूं कुछ गर्म और ठण्डे।
भालू को नहीं सुहाता
पढ़ाने के ये फण्डे।
जंगल में कंप्यूटर राजा
गाड़ रहा है झण्डे...।
साक्षरता का अभियान
चला
पढ़ लें सण्डे या मण्डे।

दुकान गोलगप्पे की...!

बंदर जी ने गोलगप्पे की
दुकान है एक लगाई....
चूहे जी ने बोहनी की
फिर भालू की बारी आई
सियार ने आ कर पूछा
एक बताओ कितने की
उसने ऊँगली से हिसाब लगाई
और कहा अट्ठन्ने की...
ट्रेफिक पुलिस बन बिल्ली आई
कहा. किसने यह गुस्ताखी की
बीच सड़क पर दुकान लगाई .....
कानून तोड़ने की गलती की......
बंदर ने भी आँखें दिखलाई
कहा शेर ने आज्ञा की
सड़क हो गई बंदर की ....
अभी वह आते होंगे भाई .....
उसकी घुड़की हवा हो गई
गोलगप्पे की दुकान चल
निकली.....!
बोली क्यों नाराज होते भाई
अच्छा किया जो दूकान

रन्दी सत्यनारायण राव
बी-32/बी इंदिरा रोड, बागुन नगर, बारीडीह कॉलोनी, जमशेदपुर- 831017.

व्यवसाय- टाटा-स्टील से अवकाश प्राप्त

उपलब्धि- 'आशीर्वाद' (साहित्य एवं फिल्म प्रतियोगिता), मुंबई से सन् 6 अक्टूबर 1979 में, मातुश्री सभागार में, अहिन्दी भाषी के रूप में विषेश पुरस्कार प्राप्त, यह पुरस्कृत कविता- 'सूर्योदय की प्रतीक्षा' के लिए था जो तत्कालीन भारत की फिल्मी दुनिया के प्रसिद्ध शायर और गीतकार जनाब कैफी आजमी के कर-कमलों द्वारा प्राप्त हुआ।

लेखन- सत्यनारायण जी कविता, कहानी (बाल कहानियाँ) फिल्मी, व्यंग्य के अतिरिक्त साहित्य की सारी विधाओं को स्पर्श करने की कोशिश अनवरत करते रहें हैं। अब तक हजार से ऊपर विविध विधाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

शोध –आलेख

राष्ट्र निर्माण में भाषा का महत्व और राजभाषा हिंदी

-संगीता रॉय

प्रस्तावना - राष्ट्र निर्माण में भाषा का महत्त्व, राष्ट्र भक्ति और देश के प्रति प्रेम बढ़ाने का एक महत्वपूर्ण साधन है, अच्छे एंव बेहतर राष्ट्र निर्माण के लियें अपनी राष्ट्र भाषा के विकास में निरंतर लगे रहना चाहिये।

व्याख्या . भाषा शब्द की व्युत्पति संस्कृत की 'भाषा 'धातु से मानी जाती है, जिसका अर्थ है बोलना। अर्थात भाषा वह है जिसके द्वारा हम अपने विचारों को व्यक्त करते है और इसके हम वाचिक ध्वनियों का प्रयोग करते हैं। भाषा मुख से उच्चारित होने वाले शब्दों और वाक्यों आदि का वह समूह हैं जिनके द्वारा मन की बात बतलाई जाती है, जिससे मनुष्य अपने भावों औंर विचारों का आदान-प्रदान करता है।

पाठ्यक्रम में भाषा के प्रयोग का संबंध एक ओर 'मानव मन' से रहता है तो दूसरी ओर 'मानवीय व्यवहार' से। यहाँ सीखने और सिखाने वाली 'वस्तु' भाषा है और सीखने तथा सिखाने वाले दोंनों ही मनुष्य होते हैं। पाठ्यक्रम में भाषा का प्रयोग के संदर्भ में कहा जा सकता है कि व्यापारकर्ता मनुष्य है और लक्ष्यवस्तु 'भाषा' है।

जिस अर्थ में हम आज भाषा का प्रयोग करते हैं उस अर्थ में हम 'भाषा' और 'मनुष्य' को सहन्यस्त संकल्पनाएॅं मान सकते हैं। 'भाषा' और 'मनुष्य' दोनों में किसी एक को दूसरे से अलग कर न तो समझ सकते हैं और न ही परिभाषित कर सकते हैं। दोनों एक दूसरे का पूरक है। पाठ्यक्रम में भाषा का प्रयोग 'संप्रेषण व्यवस्था' का पर्याय है। और इसी के माध्यम से उसे लाक्षणिक अर्थों में लाया जाता है।

इस संदर्भ में कह सकती हूँ कि जिस 'भाषा' को लक्ष्य बनाया जाता है वस्तुतः 'मानव भाषा' होती है। जिसकी अपनी विशेष प्रकृति और अपने विशेष अभिलक्षण हैं।

भाषा ध्वनि प्रतीकों की व्यवस्था होती है। प्रतीक के रूप में उसमें कथ्य और अभिव्यक्ति एक साथ जुड़कर आते हैं। कथ्य के रूप में 'अर्थ' और अभिव्यक्ति के रूप में 'वाणी/वाक्' की समन्वित ईकाई को ही भाषिक प्रतीक माना जाता है।

पाठ्यक्रम में भाषा को पहले बोध के स्तर पर पढ़ना चाहिए और उसके बाद कौशल के स्तर पर, क्योंकि भाषा के संबंध भषिक क्षमता से रहता है, न कि भाषिक व्यवहार से। प्लेटो ने सोफिस्ट में विचार और भाषा के संबंध में लिखते हुए कहा है कि विचार और भाषाओं में थोड़ा ही अंतर है। आत्मा की भूक या अध्वन्यात्मक बातचीत है पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं।

पारंपारिक भाषा शिक्षण के केन्द्र में 'पाठ सामग्री' और लैडो युग की शिक्षण विधि के केन्द्र में 'शिक्षक' था। समसामयिक भाषा शिक्षण अपने केन्द्रक के रूप में शिक्षार्थी को स्वीकार करता है। इसलिए भाषा अर्जन के दौरान होने वाली त्रुटियों को स्वभाविक मानते हुए अधिगम प्रक्रिया को एक गत्यात्मक प्रक्रिया मानता है। भाषा प्रयोग विधि में आज अनेक प्रायोगिक विधियाॅं प्रचलित हैं। जो इस प्रकार है।

1.सम्प्रेषणपरक भाषा शिक्षण विधि
2.बोधात्मक विधि
3. मौन विधि
4.समुदायपरक विधि
5. सांकेतिक विधि
6.परिवीक्षण विधि

मौखिक वार्तालाप में भाषा का प्रयोग भाषिक प्रतीक के रूप किया जाता तो वही सम्प्रेषणपरक भाषा में भाषा का प्रयोग सामाजिक प्रतीक के रूप किया जाता है।

आज जब विश्व मानव की कल्पना सार्थक हो गयी है तथा किसी भी राष्ट्र का व्यक्ति शिक्षा एंव रोजगार के लिए विश्व के किसी भी कोने में जा सकता है, तब उसकी समझ का विकास अत्यंत आवश्यक है। समझ ही उसे अनेक परिस्थितियों में स्वंय को समायोजित करना सिखाती है। भाषा पाठ्यक्रमों में संवाद की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। ऐसे में देश में विभिन्न विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम में भाषा एवं इससे मिलते जुलते पाठ्यक्रम शिक्षा में लागू किये गए हैं। सर्वविदित है कि भाषा एवं समाज एक दूसरे के पूरक हैं। बिना भाषा के समाज की तथा बिना समाज के भाषा की कल्पना नहीं की जा सकती।

भारत एक बहूभाषी और बहु सांस्कृतिक राष्ट्र है। भाषाई समाज के रूप में हिन्दी भाषा समाज एक प्रकार का समाज है। वैसे तो अन्य भारतीय भाषा समाजों की तरह यह भी एक बहुभाषा-भाषी समाज है जो अपने अन्य सामाजिक संस्थानों के निर्वाह के लिए बहुभाषिक को प्रश्रय देने के पक्ष में है। यहाॅं यह कहना उचित होगा कि भाषा, मात्र व्यवहार ही नहीं बल्कि वह व्यवस्थापरक व्यवहार है यानी कहने का तात्पर्य है कि भाषा तथा भाषिक व्यवहार के पीछे एक व्यवस्था होती है। इस व्यवस्था को अपने स्वभाव में सिद्ध करना ही आदत है।

पाठ्यक्रम में भाषा का प्रयोग शिक्षा का एक महत्वपूर्ण संघटक तथा रोचक विषय है, पुराने समय में 'पाठ्यक्रम' शब्द संकुचित अर्थ में प्रयुक्त होता था परन्तु वर्तमान में विद्यालय की सम्पूर्ण गतिविधियाँ भाषा उसमें समाहित हो गयी है।

भाषा तथा साहित्य के छात्र के लिए वक्तृत्व कौशल में निपुण होना बहुत जरूरी है। भाषा कमजोर होने पर अभिव्यक्ति भी कमजोर पड़ जाती है। समाज में अपने आपको, अपने विचारों को स्पष्ट रूप से रखना एक कला है। हम कई विद्वानों को देखते हैं कि वे लिखते अच्छा हैं,लेकिन वक्ता के रूप में असफल होते हैं। सभा में निर्भर होकर अपने विचारों को संतुलित शब्दों में व्यक्त करने का कौशल उनमें नहीं होता। छात्रों को पढ़ते हुए यदि इस प्रकार का अवसर प्राप्त हो जाए तो भविष्य में वे अपने आपको अधिक सफल व्यक्ति , साहित्यिक, अध्यापक साबित कर पाएँगें।

मानव के रोजमर्रा जीवन से उपस्थित होने वाली परिस्थितियों के बीच अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक सामथ्र्य तथा कौशल की वृद्धि ही भाषा शिक्षण का लक्ष्य है। इसलिए हम कह सकते हैं कि पाठ्यक्रम में भाषा का प्रयोग संप्रेषण कौशल को विकसित करने का काम करता है तथा इससे आत्मविश्वास पैदा करने वाले व्यक्तित्व का निर्माण होता है।

किसी भी भाषा को पढ़ाने का उद्देश्य होता है- अभिव्यक्ति क्षमता का विकास करना किन्तु महाविद्यालयों के स्तर पर पाठ्यक्रम में संवाद, संभाषण था। वार्तालाप के लिए कोई स्थान नहीं होता इसलिए पाठ्यक्रम में वार्तालाप पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है। इसमें भी भाषा की अहम् भूमिका रहती है। लिखने और पढ़ने की अपेक्षा हम वाणी का ही अधिक उपयोग करते हैं। इसलिए अध्यापक को अपने अध्यापन में परिवर्तन करना जरूरी है। पाठ्यक्रम में भाषा का प्रयोग तभी सफल होगा जब अध्यापक छात्रों को बोलने के लिए प्रेरित करेंगे। भाषा, मनुष्य के विचार और दृष्टिकोण को बहुत दूर तक प्रभावित करती है। सामान्यतः मनुष्य, भाषा के नियंत्रण में रहने की स्थिति में रहता है। भाषा उपलब्धि की उच्चतम स्थिति 'भाषा को नियंत्रित' होने की स्थिति से निकालकर 'भाषा को नियंत्रित करने की होती है। जिससे अनुभव और अनुभूतियों को सर्जनात्मक स्तर पर व्यक्त किया जा सके। यह वस्तुतः भाषा की लचीली संभावना के साधने की स्थिति है।

पाठ्यक्रम मेेंं भाषा का प्रयोग, जीवन और जगत को देखने की दृष्टि हैं। हम संसार को उसी प्रकार देखते और अपने अनुभवों को उसी रूप में ढ़ालते हैं, जिस तरह भाषा हमें देखने और ढ़ालने की अनुमति देती है। अन्य भाषा शिक्षण हमें संसार को इस बंधी-बंधाई दृष्टि से भिन्न एक दूसरी दृष्टि से जीवन और जगत को देखने की शक्ति देता है। इस तरह से हम एक ही वस्तु को एक से अधिक दृष्टि कोण से देखने में समर्थ होते हैं। भाषा का प्रयोग पाठ्यक्रम में वास्तव में दृष्टि की लचीली संभावना को साधने की स्थिति है।

इस तरह से हम देखते हैं कि भाषा, ज्ञानार्जन का एक महत्वपूर्ण साधन है। नित नए शब्दों द्वारा हम एक और बाह्य जीवन की वस्तुओं की जानकारी प्राप्त करते है तो दूसरी ओर विश्लेषणात्मक प्रक्रिया के सहारे अपने विचारों को समझते हंै। इस प्रकार हम ज्ञान और बुद्धि के धरातल पर भाषा के सहारे समृद्ध से समृद्धतर होते जाते हैं।

भाषा का प्रयोग पाठ्यक्रम में संप्रेषण का साधन ही नहीं बल्कि यह व्यक्ति को सामाजिक बनाने का समर्थ माध्यम भी है। इसके सहारे व्यक्ति, समाज से जुड़ता है और उस जुड़ने की प्रक्रिया में सामाजिक बनता चला जाता है। भाषा अधिगम एक अनवरत प्रक्रिया है। जिसमें भाषा के माध्यम से समाज और संस्कृति से सामाजिक व्यक्तित्व की प्राप्ति होती है।

भारतीय शिक्षा में भाषा एक विषय ही नहीं बल्कि एक माध्यम या टूल है जो अन्य विषयों की विभिन्न अवधारणाओं को समझने में सहायता करता है।

सारांश . राष्ट्र निर्माण में भाषा का महत्त्व, राष्ट्र भक्ति और देश के प्रति प्रेम बढ़ाने का एक महत्वपूर्ण साधन है। इसलिये भाषा शिक्षकों को कक्षा में संसाधनों की कमी के चलते हतोत्साहित नहीं होना चाहिए बल्कि उन्हें अपने आसपास के वातावरण में उपलब्ध समृद्ध संसाधनों का उपयोग अच्छे एवं बेहतर राष्ट्र एवं भाषा विकास के लिए करना चाहिये।

भाषा सम्प्रेषण के अलावा, ज्ञान को अर्जित करने का भी एक माध्यम है। इसलिये भाषा शिक्षण का उद्देश्य भी यह है कि विद्यालयों जीवन के अंत तक विद्यार्थी भाषा को समझेने और उसे औपचारिक संवादों में प्रयोग करने की क्षमता प्राप्त करें। जिससे हमारी भारतीय भाषा हिन्दी एंव अन्य प्रान्तीय भाषाओं की उन्नति हो। भाषा विन्यास और भारतीय भाषाओं की सुंदरता कदापि नष्ट न हो। इसलिये हम बदलेंगे-युग

बदलेंगे-युग बदलेगा, हम सुधरेंगे-युग सुधरेगा के धरातल पर ही आज वर्तमान समय में पाठ्यक्रम में भाषा का प्रयोग हो रहा है।

संदर्भ ग्रंथ

1.भाषा शिक्षण- डॉ. रविन्दनाथ श्रीवास्तव पेज नं.21
2. वही पेज नं .22
3. वही पेज नं 104
4. शोध सारांश
5. भाषा शिक्षण -डाॅ. रविन्दनाथ श्रीवास्तव पेज नं 106
6. वही पेज नं. 107
7. वही पेज नं. 108
8. विकिपीडिया
9. हिन्दी भाषा चिन्तन- प्रो.दिलीप सिंह पेज नं.110
10. भाषा शिक्षण- डॉ.रविन्दनाथ श्रीवास्तव -पेज नं. 131
11. विकिपीडिया
12. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारतीय भाषा तथा साहित्य का अध्ययन-अध्यापन- पेज नं-15 लेखक- प्रो. डॉ. माधव सोनटक्के डॉ. हणमंतराव पाटील
13. वही-पेज नं.16
14. भाषा शिक्षण- डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव पेज नं. 36
15. वही पेज -37

संगीता रॉय
शोध छात्रा, पी.एच-डी
प्रो. रामकृष्णा मोरे महाविद्यालय, आकुर्डी पुणे
अणुमेल दूरध्वनी– 9834909305

नयी प्रकाशित पुस्तक

कोरोना काल में भले ही जिंदगी थम सी गई थी और हम सब अपने-अपने घरों में सिमट कर रह गए थे और एक अदृश्य विषाणु की भयावहता के आतंक से त्रस्त-ग्रस्त और आतंकित थे, हम अज्ञान थे इस बात से कि मौत हमें अपने भयानक पंजों में दबोचने के लिए कहाँ बैठी हैं? लेकिन कुछ ऐसे लोग भी थे जिन्होंने अपनी और अपनों की चिन्ता किए बिना इस भयावह और सर्वव्यापी महामारी के दौर में भी अपने कार्य को जारी रखा हुआ था। वह किसी देवदूत अथवा सुपर हीरो से कम नहीं थे और वह थे हमारे कोरोना योद्धा ! यह पुस्तक उन्हीं कोरोना योद्धाओं को कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए समर्पित है।

घरों में सिमटी हुई जिंदगी जैसे थम सी गई थी लेकिन हमारे मस्तिष्क में कहीं न कहीं अनेक प्रश्नों का झंझावात चल रहा था। आखिर यह भयावह स्थिति किस प्रकार बनी? किस कारण बनी? क्यों हम अपने घरों में सिमट कर रह गए? क्या प्रकृति हमसे रूठ गयी? घरों में सिमटी हुई जिंदगी के बावजूद भी मन और मस्तिष्क में विचारों के अंधड़ चलते ही रहे और इन्हीं विचारों की उहापोह से कोरोना काल की कविताओं का सृजन हुआ और उन कविताओं के सृजन से यह नवनीत रूपी कोविड: काव्य संकलन “सिमटी जिंदगी” शैशव से प्रौढ़ता को प्राप्त हुआ। विविधता से परिपूर्ण यह काव्य संकलन कालजयी रचनाओं में सम्मिलित होगा। ऐसी हम आशा करते हैं।

अब यह पुस्तक प्रकाशक की वेबसाइट, अमेज़ोन एवं फिलिप्कार्ट पर बिक्री के लिए लाइव हो गयी है। आप अपनी प्रति दी गयी लिंक Notion Press: https://notionpress.com/read/simatee-zindagee अमेज़ोन : https://www.amazon.in/dp/1638326304 एवं फिलिप्कार्ट से https://www.flipkart.com/simatee.../p/itme83114c7f74db... उक्त लिंक द्वारा खरीद सकते हैं।

साहित्य और हिन्दी सिनेमा

डॉ. सीमा शर्मा

"सहितस्य भाव साहित्यम्" की भावना के साथ साहित्य समाज का दर्पण है। साहित्य मानव की हृदय गत अनुभूति है। हृदय से नि:सृत उद्गार हृदय पर ही अमिट प्रभाव छोड़ते हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने साहित्य में लोकमंगल और लोकरंजन की स्थापना की है।

"लोक की पीड़ा, बाधा, अन्याय, अत्याचार के बीच दबी हुई आनंद-ज्योति भीषण शक्ति में परिणत होकर अपना मार्ग निकालती है और फिर लोकमंगल और लोकरंजन के रूप में अपना प्रकाश करती है। "

साहित्य के महत् उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए प्रेमचंद लिखते हैं - "हम साहित्य को केवल मनोरंजन और विलासिता की वस्तु नहीं समझते। हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा जिसमें उच्च चिंतन हो, स्वाधीनता का भाव हो। सौन्दर्य का सार हो, सृजन की आत्मा हो, जीवन की सच्चाईयों का प्रकाश हो, जो हममें गति, संघर्ष और बेचैनी पैदा करे सुलाए नहीं क्योंकि अब और ज्यादा सोना मृत्यु का लक्षण है।"

साहित्य में भाव पक्ष और कला पक्ष का महत्व, मानवीय मूल्यों की अभिव्यक्ति, जीवन-दर्शन का समावेश और लोक कल्याण की भावना स्पष्ट परिलक्षित होती है। साहित्यकारों का एक ऐसा वर्ग भी था जो भाषिक व्यंग्य, वक्रता और भाषा-सौन्दर्य पर विशेष बल देता था। रीतिकालीन कवि केशवदास की मान्यता है कि कविता में यदि अलंकारों का समावेश नहीं है तो भाव कितने भी सुन्दर क्यों न हों, कविता सुन्दर प्रतीत नहीं होती।

"जदपि सुजाति सुलक्षणी, सुबरन सरस सुवृत्त।
भूषण बिनु न विराजई, कविता बनिता मित्त।।

इस प्रकार साहित्य में कला और भाव पक्ष दोनों को महत्व दिया गया। सिनेमा भी साहित्य की भाँति समाज का दर्पण है, जिसमें प्रस्तुति और प्रक्रिया दोनों का ही समावेश है।

"फिल्म और साहित्य के बीच संवाद बहुत पहले मूक फिल्मों के युग में शुरू हो गया था सिनेमा का वह शैशवकाल था जब फीचर फिल्म के रूप में डी.ड्बल्यू ग्रिफिथ ने 1915 में टॉमस डिक्शन के उपन्यास 'द कलैंसमैन ' पर आधारित अपनी फिल्म 'द बर्थ ऑफ नेशन' बनाई थी। इस फिल्म में एक ऐसे परिवार के उन त्रासद अनुभवों को व्यक्त किया गया था जिन्हें गृहयुद्ध के दौरान उन्हें सहना पड़ा था। यह उपन्यास उत्कृष्ट कोटि का नहीं था, लेकिन ग्रिफिथ ने इसको अपनी फिल्म कला के जादू से एक अद्वितीय फिल्म में रूपांतरित कर दिया।"

तब से लेकर आज तक किसी न किसी रूप में फिल्म और साहित्य का संबंध बना हुआ है। साहित्यिक कृतियों पर फिल्म बनाने की सुदीर्घ परम्परा है। भारत में बनने वाली पहली फिल्म सत्य हरिश्चन्द्र जो दादा साहेब फाल्के ने बनायी थी भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के नाटक 'हरिश्चन्द्र' पर आधारित थी।

हिन्दी उपन्यासों पर बनी फिल्मे निम्नलिखित हैं-

1. कोहबर की शर्त- केशव प्रसाद मिश्र-नदिया के पार- गोविन्द मूनिस।
2. तमस -भीष्म साहनी- 1947 का अर्थ (1998) -दीपा मेहता।
3.झूठा सच-यशपाल-खामोश पानी-(2004) -सबीहा सुमेर।
4.जिंदगीनामा-कृष्णा सोबती-ट्रेन टू पाकिस्तान।
5.पिंजर'-अमृता प्रीतम-गदर एक प्रेम कथा (2001) -अनिल शर्मा
6.पेशावर एक्सप्रेस-कृष्ण चंदर-वीर जारा-(2004) -यश चोपड़ा।
7.गोदान-प्रेमचन्द-गोदान-1963
8.सेवासदन-प्रेमचंद-सेवासदन- (1938) -के.सुब्रमण्यम
9.गबन-प्रेमचंद-गबन-1966-ऋषिकेश मुखर्जी।
10. गुनाहों का देवता- धर्मवीर- भारती-गुनाहों का देवता(1990) -कवल शर्मा।
11. सूरज का सातवाँ घोड़ा- (1992)-श्याम बेनेगल।
12. सारा आकाश-मन्नू भंडारी और राजेन्द्र यादव-सारा आकाश-(1969) -बासु चटर्जी।
13.पति पत्नी और वो-कमलेश्वर-पति पत्नी और वो-बी. आर. चोपड़ा
14.एक सड़क सत्तावन गलियाँ- कमलेश्वर -बदनाम बस्ती- प्रेम कपूर
15.डाक बांग्ला - कमलेश्वर - डाक बांग्ला (1974) - गिरीश रंजन।
16.अठारह सूरज के पौधे-रमेश बक्षी-27 डाउन (1974) -अवतार कृष्ण कौल।
17. काशी का अस्सी- काशीनाथ सिंह-मोहल्ला अस्सी (2018) -चंद्रप्रकाश द्विवेदी।

18. आँधी (1975)- कमलेश्वर- गुलजार

इसी प्रकार हिन्दी की प्रसिद्ध कहानियों पर आधारित फिल्में बनायी गयीं:

1.त्रिया चरित्र-प्रेमचन्द- स्वामी (1941) -ए. आर. किरदार।

2.शतरंज के खिलाड़ी-प्रेमचन्द-शतरंज के खिलाड़ी (1997)-सत्यजीत रे।

3.सद्गति-प्रेमचन्द- सद्गति-(1981) -सत्यजीत रे।

4. मारे गये गुलफाम उर्फ तीसरी कसम-फणीश्वर नाथ रेणु-तीसरी कसम-(1966)-बासु भट्टाचार्य।

5.उसने कहा था-चंद्रधर शर्मा गुलेरी-गुलेरी-उसने कहा था-(1960) -मोनी भट्टाचार्य।

6. यही सच है- मन्नू भंडारी-रजनी गंधा-(1974) -बासु चटर्जी।

7.एखाने आकाश नाई-मन्नू भंडारी-रजनीगंधा -जीना यहाँ- (1979)-बासु चटर्जी।

8.टोबा टेक सिंह-मंटो-टोबा टेक सिंह (2017) -केतन मेहता

9.उसकी रोटी-मोहन राकेश-उसकी रोटी (1969) -मणि कौल,

10.आषाढ का एक दिन (नाटक) - मोहन राकेश-राकेश-आषाढ का एक दिन-(1971) -मणि

11. मलबे का मालिक-मोहन राकेश-हिना-(1991) मणि कौल-राजकपूर, रणधीर कपूर

13.मौसम-कमलेश्वर-मौसम-(1975) गुलज़ार।

14.सतह से उठता आदमी- मुक्तिबोध-सतह से उठता आदमी-मणि कौल ।

15.माया दर्पण- निर्मल वर्मा-माया दर्पण-कुमार साहनी

16.दुविधा-विजय दान देथा-पहेली-2005-अमोल पालेकर

17.चरणदास चोर-विजय तेंदुलकर-चरणदास चोर (1975) -श्याम बेनेगल।

18. फाल्गुन- प्रियवंद- अनवर-(2007)-मनीष झा (फिल्म से संबंधित डाटा hin-disarang.com से साभार) साहित्य पर आधारित हिन्दी फिल्मों की सूची बहुत लंबी है। साहित्य ने सिनेमा पर दीर्घकालिक प्रभाव छोड़ा है। साहित्य और सिनेमा दोनों ही समाज को आंदोलित-प्रभावित करते हैं। साहित्य पर आधारित कुछ हिन्दी फ़िल्में इस प्रकार हैं-

गोदान: 1936 में आये प्रेमचंद के इस महान उपन्यास पर1963 में त्रिलोक जेटली के निर्देशन में 'गोदान' फिल्म बनायी। 'गोदान ' भारतीय कृषक जीवन की महागाथा है। इस फिल्म में भारतीय ग्रामीण जीवन और शहर के संघर्षों का सूक्ष्म और यथार्थ अंकन हुआ है। होरी के माध्यम से यह भारतीय कृषक जीवन की आत्मकथा है। गोबर युवा कृषक के विचारों में आये बदलावों का प्रतिनिधित्व करता है। होरी आजीवन गाय का स्वप्न हृदय में संजोये रहता है कि कभी उसकी आर्थिक स्थिति भी ऐसी होगी और वह गाय खरीद पायेगा पर वह दिन उसके जीवन में कभी नहीं आता और इसी स्वप्न को हृदय में दबाये उसकी मृत्यु हो जाती है। होरी के मरने के बाद पंडित द्वारा उसकी पत्नी धनिया से गोदान के रूप में उसकी एक दिन की मजदूरी सवा रूपया भी वसूल ली जाती है।

इस फिल्म का रविशंकर के संगीत निर्देशन में मोहम्मद रफी के द्वारा गाया यह गीत बहुत लोकप्रिय हुआ:

"पिपरा के पतवा सरीखा डोले मनवा
कि जियरा माँ उठत हिलोर
अरे पुरवा के झोंकवा से आयो रे संदेसवा
कि चल आज देसवा की ओर"

सद्गति: प्रेमचंद की प्रसिद्ध कहानी 'सद्गति ' पर आधारित फिल्म ' सद्गति ' नाम से ही सन् 1981 में बनायी गयी। इसके निर्देशक थे- सत्यजित राय। फिल्म जाति-व्यवस्था पर आधारित है। दलित दुखिया जो बहुत गरीब है, चाहता है कि उसकी बेटी के विवाह की तिथि तय करने के लिए पंडित जी उसके घर आयें।

इसके लिए वह अपनी सामर्थ्य से अधिक जाकर पंडित को दान-दक्षिणा देने की व्यवस्था करता है। दूसरी ओर पंडित उसका भरपूर शोषण करता है। दुखिया के घर आकर विवाह की तिथि तय करने का झूठा प्रलोभन देकर वह दुखिया से दिन-भर बहुत काम करवाता है। भूखा-प्यासा, कई दिनों से ज्वर से पीड़ित दुखिया इस आशा में कि पंडित जी उसके घर आकर उसकी बिटिया का विवाह तय करेंगे, तब तक काम करता है जब तक उसका दम नहीं निकल जाता।

तीसरी कसम-फणीश्वर नाथ रेणु की प्रसिद्ध कहानी 'तीसरी कसम उर्फ़ मारे गए गुलफाम 'पर आधारित है। फिल्म के निर्देशक बासु भट्टाचार्य और संगीतकार शंकर जयकिशन हैं। यह फिल्म 1966 में रिलीज़ हुई। फिल्म की कहानी गांव के गाड़ीवान हीरामन और नौटंकी में काम करने वाली नृत्यांगना हीराबाई पर केंद्रित है। दोनों में प्रेम और आकर्षण पनपता है पर दोनों के प्रेम के मध्य अर्थ आ जाता है। अन्य कंपनी में नौकरी लग जाने के बाद हीराबाई चली जाती है। इस प्रकार पूंजी प्रेम और भावनाओं पर हावी हो जाती है।

'तीसरी कसम' फिल्म के गीत बहुत लोकप्रिय हुए। गीतकार शैलेन्द्र और हसरत जयपुरी थे। "चलते मुसाफ़िर मोह लियो रे पिंजड़े वाली मुनिया", दुनिया बनाने वाले क्या तेरे मन में समाई, तूने काहे को दुनिया बनाई, हाय गज़ब कहीं तारा टूटा, सजनवा बैरी हो गये हमार, चिठिया हो तो हर कोई बाँचे, भाग न बाँचे कोई, सजन रे झूठ मत बोलो। इस फिल्म का यह गीत आज भी बड़े चाव से गुनगुनाया जाता है:

सजन रे झूठ मत बोलो खुदा के पास जाना है, न हाथी है न घोड़ा है, वहाँ पैदल ही जाना है, लड़कपन खेल में खोया, जवानी नींद भर सोया बुढापा देख कर रोया, वही किस्सा पुराना है।

आँधी (1975) : कमलेश्वर के उपन्यास 'काली आँधी' पर यह फिल्म आधारित है। गुलज़ार ने इस फिल्म का निर्देशन किया। इस फिल्म में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी और उनके पति के साथ उनके संबंधों की छाया थी। फिल्म के रिलीज़ होने के कुछ महीनों बाद 1975 के राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान फिल्म को प्रतिबंधित कर दिया गया था। फिल्म की कथा यह दर्शाती है कि राजनीति सब संबंधों पर हावी हो जाती है। गुलज़ार द्वारा रचित इस फिल्म के गीत बहुत प्रसिद्ध हुए। इस मोड़ से जाते हैं, तेरे बिना जिंदगी से कोई शिकवा तो नहीं, तुम आ गये हो तो नूर आ गया है।

उसने कहा था: 'उसने कहा था' कहानी चन्द्रधर शर्मा गुलेरी ने प्रथम विश्व युद्ध के तुरंत बाद लिखी गई थी। इस कहानी में प्रेम की गरिमा, युद्ध का यथार्थ वर्णन और शाश्वत मानवीय मूल्यों की स्थापना है। 'उसने कहा था' कहानी हिन्दी कथा साहित्य जगत् का मील का पत्थर है। हिन्दी की इस अमर कथा पर मौनी भट्टाचार्य ने सन् 1960 में 'उसने कहा था' के नाम से ही फिल्म बनायी। अमृतसर के बाजार से 12 वर्ष के बच्चों की मन:स्थिति और इस संवाद के' तेरी कुड़माई हो गई? ' दूसरी बार लड़की का यह प्रत्युत्तर 'हाँ हो गई, देखते नहीं यह रंगीन शालू' और नायिका का 'धत्' कहने का अंदाज़, नायक की खीज सभी दर्शक के मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव छोड़ता है। कहानी फिर 25 वर्ष के अंतराल के पश्चात प्रथम विश्व युद्ध के मैदान पर मिलती है, जहाँ लहना सिंह उस बारह वर्षीय बालिका, जो अब सूबेदारनी बन चुकी है, को याद कर रहा है कि युद्ध में आने से पूर्व सूबेदारनी ने लहना सिंह से कहा था कि मेरे पति और मेरे बेटे की रक्षा करना, जो उसने अपने प्राणों की बाजी लगाकर भी की। लहना सिंह का एक छोटा सा सपना है, नदी के किनारे अपने गाँव में, आम के पेड़ से तले भाई की गोद में मरने का, पर वह अपनी प्रेमिका के वचन की रक्षा के लिए एक अनजान देश में प्राण त्याग देता है। यह शाश्वत प्रेम का अमर आदर्श प्रस्तुत करती है। शैलेन्द्र के द्वारा लिखे और सलिल चौधरी के गीत बहुत प्रसिद्ध हुए,- अहा रिमझिम के प्यारे-प्यारे गीत लिए आयी रात सुहानी देखो प्रीत लिए, ओहो मचलती आरज़ू और—

जाने वाले सिपाही से पूछो, वो कहाँ जा रहा है

इश्क है कातिल-ए-जिंदगानी
खून से तर है उसकी जवानी
हाय मासूम बचपन की यादें
हाय दो रोज़ की नौजवानी।

सूरज का सातवाँ घोड़ा (1993): यह फिल्म धर्मवीर भारती के प्रसिद्ध उपन्यास 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' पर आधारित है। इस फिल्म के निर्देशक श्याम बेनेगल हैं। सूरज का सातवाँ घोड़ा के किस्से माणिक मुल्ला सुनाते हैं। वे इन कथाओं के भोक्ता भी हैं। सात दोपहर की सात कथाएं हैं। सूरज के सात घोड़ों की भाँति छह कथाएं जमुना, लिलि और सत्ती के जीवन पर प्रकाश डालती हैं और उन पर माणिक मुल्ला अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। सातवीं कथा भविष्य का आशावादी संकेत देती है। जिस प्रकार सामाजिक मान्यता है कि सूरज का सातवाँ घोड़ा अधिक ऊर्जावान है।

'बेनेगल की मूवी में हीरो नहीं, इंसान दिखते हैं, वो भी मानव मन की कमजोरियों के साथ... रजत कपूर एक ऐसे पुरुष किरदार के रूप में है, जिसके लिए नारी, नदिया पार करने को नाव भर है... वे बेहद संतुलित, शांत और क्रिएटिव हैं... कुछ हद तक कोमल हृदय भी... और शायद इसलिए जमुना, लिलि और सत्ती के झट करीब हो जाने में उन्हें समय नहीं लगता।' (scribbles of soul.com)

'सूरज का सातवाँ घोड़ा' फिल्म का यह गीत चर्चित हुआ- 'ये शामें सब की सब शामें क्या इसका कोई अर्थ नहीं।'

शतरंज के खिलाड़ी (1977) : शतरंज के खिलाड़ी फिल्म प्रेमचन्द की प्रसिद्ध कहानी 'शतरंज के खिलाड़ी' पर आधारित थी। 1977 में बनी इस फिल्म के निर्देशक सत्यजित राय थे। फिल्म की कहानी 1856 के अवध नवाब वाजिद अली शाह और लखनऊ के दो अमीर मिर्जा सज्जाद अली

(संजीव कुमार), मीर रोशन अली (सईद जाफरी) के इर्द- गिर्द घूमती है। यह वह समय था, जब लखनऊ विलासिता में डूबा हुआ था। ऐसी परिस्थितियों का लाभ उठाकर अंग्रेजी सत्ता धीरे-धीरे अपने पैर पसार रही थी। लखनऊ का तत्कालीन समाज तीतर-बटेर लड़ाने, अफीम, गांजे, सुगंधी का व्यापार करने तथा शतरंज खेलने में व्यस्त था। अंग्रेज नवाब वाजिद अली शाह को बन्दी बनाये लिये जाते थे और लखनऊ की समस्त प्रजा की ओर से विरोध का एक स्वर भी नहीं उठा। फिल्म में दोनों अमीर मिर्जा सज्जाद अली और मीर रोशन अली शतरंज के खेल में इतने मशगूल हैं कि उसके आगे उन्हें अपना परिवार और समाज कुछ भी दिखाई नहीं देता।

देशहित से अधिक उन्हें शतरंज प्रिय है। अपने शहर के नबाव के चुपचाप गिरफ्तार होने, सत्ता हस्तांतरण जैसी बड़ी घटना पर उनके मुख से विरोध का एक स्वर भी नहीं फूटता, जबकि शतरंज के राजा के लिए वह खेलते-खेलते प्राण न्यौछावर करने को तैयार हैं। फिल्म में अमिताभ बच्चन की कमेंट्री बहुत ही प्रभावशाली है:

“तुम ठीक कह रहे हो 7 फरवरी 1856 को अवध पर, लखनऊ पर कब्जा हो जायेगा और लॉर्ड डलहौजी आखिरी चैरी हड़प कर चुका होगा।" (अमिताभ बच्चन की कमेंट्री से)।

फिल्म का अंतिम संवाद सामाजिक मानसिकता की विडम्बना को दर्शाता है। अंग्रेज बड़ी सरलता से अवध पर कब्जा कर रहे हैं और अवध की ओर से विद्रोह का एक स्वर भी नहीं है बल्कि शहर के अमीरों की ओर से ऐसी प्रतिक्रिया आ रही है, जैसे कुछ हुआ ही न हो।

“मुँह छुपाने के लिए अँधेरा जरूरी है। चलिए लगे हाथों एक झटपट बाजी हो जाए रेलगाड़ी की तरह तेज रफ्तार.. मल्का विक्टोरिया तशरीफ़ ला रहीं हैं।"

प्रेमचन्द ने अपनी कहानी के अंत में दोनों अमीरों को छपाछप तलवार निकालकर एक - दूसरे को मारते दिखाया है जबकि सत्यजित राय ने दोनों अमीरों को इतना कायर दिखाया है कि वे शतरंज के लिए भी एक -दूसरे की हत्या नहीं करते और देश-काल की चिंताओं से मुक्त होकर निर्लज्जों की भाँति खेलते रहते हैं।
'शतरंज के खिलाड़ी' फिल्म के ये गीत चर्चित हुए:
'कान्हा मैं तोसे हारी', 'तड़प-तड़प सगरी रैन गुजरी ' आदि।

पिंजर(2003): अमृता प्रीतम के प्रसिद्ध उपन्यास पर यह फिल्म आधारित है। इस फिल्म का निर्देशन चन्द्रप्रकाश द्विवेदी ने किया है। 'पिंजर' विभाजन की त्रासदी पर बनी फिल्म है। पूरो समृद्ध जमींदार परिवार की बेटी है ,उसका विवाह रामचंद्र से होना है लेकिन विवाह से पूर्व पुश्तैनी दुश्मनी के कारण रशीद पूरो का अपहरण कर लेता है। एक रात पूरो रशीद की कैद से भाग जाती है पर उसके माता-पिता उसे स्वीकार नहीं करते। उन्हें डर है कि ऐसा करने पर रशीद का परिवार पूरे परिवार की हत्या कर देगा।। पूरो उदास मन से रशीद के पास लौटती है। इसके पश्चात् अपहृत की गयी लड़कियों को मुक्त कराना पूरो का मुख्य उद्देश्य बन जाता है। ' पिंजर' फिल्म अपने दोनों उद्देश्यों मनोरंजन और सामाजिक सरोकार दोनों की दृष्टि से सफल फिल्म है। अपने पीरियड लुक की वजह से भी यह फिल्म बहुत सराही गई।
फिल्म के गीत भी मार्मिक हैं और दर्शकों के हृदय को छूते हैं:

"सीता को देखे सारा गाँव
आग पे कैसे धरेगी पाँव
बच जाये तो देवी मान
है जल जाये तो पावन
जिसका रुप जगत् की ठंडक
अग्नि उसका दर्पण।

"चरखा चलाती माँ/ धागा बनाती माँ/ बुनती है सपनों की केसरी।"

"वारिस शाह नूं/ कित्तो कबरूं विचो बोल/ के आज किताबें इश्क दा कोई अगला वुर्क खोल।"
तथा

"मार उडारी.. हाय उड्ड जाना चिडियाँ ने उड़ जाना।"
सभी बहुत मार्मिक गीत हैं।

पहेली(2005): विजयदान देथा की कहानी ' दुविधा' पर आधारित 'पहेली' अमोल पालेकर द्वारा निर्देशित फिल्म है। इसी कहानी पर मणि कौल 'दुविधा' नाम से 1973 में भी फिल्म बना चुके हैं।

'पहेली' फिल्म में दो कठपुतली कहानी सुनाती हैं। लाछी नाम की नवविवाहिता युवती का पति विवाह के अगले दिन कारोबार करने के उद्देश्य से बाहर चला जाता है। नवविवाहिता लाछी की सारी आकांक्षाएं वहीं समाप्त हो जाती हैं कि

अचानक उसके पति के हमशक्ल का उसके घर प्रवेश होता है, जिसके साथ वह अपने जीवन के अनेक रंग भरती है लेकिन बाद में उसे पता चलता है कि वह उसका पति नहीं बल्कि भूत है। फिर उसका पति लौटता है और असली-नकली की परीक्षा शुरू होती है। यह फिल्म अपनी लोकेशन और राजस्थानी लोक संगीत के कारण चर्चित हुई। फिल्म के गीत भी लोकप्रिय रहे:

"कंगना के कंगना के, किरणों से जब रंगना के,
जब चलूं तो छन छन छनके अंगना के।"

"फिर रात काटी और दिन निकला,
जब दिन निकला तो रात चढ़ी
फिर प्रीत की ऐसी पींग बढी।"
तथा
"लागा रे जल लागा, बरसा रे जल बरसा,
ज़मीं की गोद भरी रे लागी हरी।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि साहित्य और सिनेमा दोनों का समाज का दर्पण है। समाज के यथार्थ और स्वप्नों का दोनों में स्वाभाविक अंकन मिलता है।

साहित्य सिनेमा को प्रभावित और प्रेरित करता है । हिन्दी में ऐसी बहुत सी फिल्में बनायीं गयीं जो साहित्य पर आधारित थीं। जो व्यवसाय की दृष्टि से सफल भी रहीं। लेखकों का ऐसा वर्ग भी है जो अपनी रचनाओं के फिल्माँकन पर संतुष्ट नहीं हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. समकालीन हिन्दी सिनेमा-डॉ. सी भास्कर राव
2. भारतीय सिनेमा का अन्त:करण- विनोद दास
3.भारतीय साहित्य- दिल्ली विश्वविद्यालय
4.समकालीन साहित्य और सिनेमा- सीमा शर्मा
5. हिन्दी सिनेमा का समाज शास्त्र-जवरीमल्ल पारख
6. भारतीय सिनेमा: एक अनंत यात्रा- प्रसून सिन्हा
7. सिनेमा और साहित्य का अन्त: सम्बन्ध- प्रो. रतन कुमार पांडेय
8. lyricsindia.net
9. sceibblesofsoul.com
10. hindisarang.com

डॉ. सीमा शर्मा

डॉ. सीमा शर्मा, जी ने दिल्ली विश्वविद्यालय से एम. फिल, पी-एच.डी, मेरठ विश्वविद्यालय से बी.एड, पोस्ट एम. ए . डिप्लोमा अनुप्रयुक्त भाषा विज्ञान, पत्रकारिता एवं जनसंचार (केन्द्रीय हिन्दी संस्थान) ,पी.जी. डिप्लोमा अनुवाद (भारतीय विद्या भवन) की उपाधि प्राप्त के है। उन्होंने साठोत्तर हिन्दी नाटकों में विडम्बना की रचनात्मक भूमिका, मैत्रेयी पुष्पा कृत 'इदन्नमम' में नारी चेतना, भाषा शिक्षण में कोड मिश्रण और कोड परिवर्तन से उत्पन्न व्यवधान, हिन्दी सिनेमा में अभिव्यक्त आपदा का स्वरूप आदि विषय पर अपने शोध कार्यों को पूर्ण किया है। उन्होंने अपने इस सेवा काल के दौरान, पी-एच.डी, एम फिल और पीजी स्तर पर (हिन्दी नाटक, हिन्दी सिनेमा, विज्ञापन जगत, रीतिकालीन काव्य में प्रकृति के स्वरूप पर शोध निर्देशन किया है। अनेक पत्र पत्रिकाओं में आपके अनेक शोध आलेख प्रकाशित हो चुके हैं, जिनमें समकालीन हिन्दी कहानी में स्त्री अस्मिता, विज्ञापन की भाषा, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में राजनीतिक विमर्श, भक्ति काव्य में स्त्रीवादी चिंतन, संवेदना के धरातल पर मॉरिशस का बाल नाट्य साहित्य आदि विषय प्रमुख हैं। **संपर्क- दूरध्वनि:** +91-9818541565, अणुमेल: drseema.sharma@gmail.com

महर्षि गर्ग ऋषि ज्योतिष शास्त्र के प्रधान प्रवर्तक एवं श्री कृष्ण के कुलगुरु

हमारे देश भारत को ऋषियों मुनियों का देश कहा जाता है। इन्ही महान ऋषियों की देन व उनकी शिक्षा के कारण महान भारत देश विश्व गुरू रहा है। भारत की दिव्य भूमि कई महान ऋषियों, मुनियों व गुरूओं की तपोभूमि व कर्म भूमि रही है। ऐसे ही महान महान ऋषि थे महामुनि गर्ग या गर्गाचार्य जी जो ज्योतिष शास्त्र के महान आचार्य व गणितज्ञ रहे थे। अखिल ब्रह्माँड से लेकर सूक्ष्म पिण्ड पर्यन्त ज्योतिष महाविज्ञान का क्षेत्र हैं। अनादि काल से शाश्वत चली आ रही इस महा विज्ञान गणित भी शाश्वत सत्य है। संसार की समस्त विद्याऐं इसमे समाई हुई है। जिन भारतीय दिव्य ऋषियों ने वेद ज्ञान अपने तपोबल से प्राप्त किया जिसमें महर्षि गर्ग ऋषि का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। ज्योतिष शास्त्र के प्रधान प्रवर्तक भगवान गर्गाचार्य जी रहे है जो अठारह ज्योतिष शास्त्र वैदिक प्रवर्तकों जैसे ब्रह्मा, गर्ग, पराशर, कश्यप, सूर्य, मरीचि, मनु, वशिष्ठ, अत्रि, नारद, अंगिरा, लोमश, पोलिश, च्व्यवन, भृगु, शौनक,व्यास, एवं यवन आदि गुरू परम्परा में प्रमुख रहें हैं। ऐसा महर्षि ने अपने शास्त्र होरा में लिखा हैं-

"वेदेभ्य समुद्धृत्य ब्रह्मा प्रोवाच विस्तृतम्।
गर्गस्तमा मिदं प्राह:मया तस्माद्यथा: तथा।। "

अर्थात् भगवान ब्रह्मा जी ने वेद से निकाल कर नैत्र रूप वैदांग ज्योतिष शास्त्र को सर्व प्रथम महर्षि गर्गाचार्य ऋषि को प्रदान किया।

ज्योतिष शास्त्र में महर्षि गर्ग ने महाग्रन्थ श्री गर्ग होरा की रचना की थी जो ज्योतिष का महान शास्त्र है। इस प्रकार महर्षि गर्गाचार्य अठारह वेदांग ज्योतिष शास्त्र के प्रवर्तकों में गुरू सिध्द हुए। भगवान गर्गाचार्य जी न केवल ज्योतिष शास्त्र के आचार्य थे, वरन् चार वेद अठारह पुराण, एक सौ आठ उपनिषद सहित षट् दर्शन के पारगड्त महान आचार्य रहे है। महर्षि महामुनि गर्ग ऋषि षट् वेदांग के भी पूर्णत: आचार्य थे। यह 88 हजार ऋषियों मे एकदम से सभी सद्गुण एक साथ केवल " महर्षि गर्गाचार्य जी" में होने के से वे सर्व ब्रह्मर्षियों में वे भगवान "गुरू" कहलाये। वे ही महर्षि गर्गाचार्य ऋषि द्वारिकाधाम के राजा भगवान वासुदेव श्री कृष्ण के राजगुरु पद से सुशोभित हुए। इसी वजह से महर्षि महामुनि गर्गाचार्य ऋषि के वंशज "गुरू ब्राह्मण" कहलाते है। गर्ग ब्राह्मण का आज भी ज्योतिष शास्त्र का ज्ञान रखते जो इनकी पारम्परिक विद्या देन है। महर्षि महामुनि गर्ग ऋषि के वंश जन्म लेने वाले प्रखर ज्योतिर्विद ज्योतिषाचार्य व महायज्ञाचार्य पण्डित मोहनलाल गर्ग, जोधपुर राजस्थान से जगद्‌गुरु भगवान गर्गाचार्य पंचाग पीठम् से " श्री गर्ग पंच्चांगम् " का संपादन करते आ रहे हैं जो महर्षि गर्ग को समर्पित है। महर्षि महामुनि गर्ग ऋषि भगवान श्री कृष्ण के कुल यदुवंशी के राजगुरु थे। इन्होंने ने भगवान श्री कृष्ण का नामकरण संस्कार व भविष्य वर्णन कर विभिन्न लीलाओं का आगम भविष्यवाणी की थी। इन्होंने नंद परिवार वासुदेव पर कंस का संकट आने पर स्वयं नंदबाबा के महल जाकर भविष्य वर्णन बताया था। इन्होंने श्री कृष्ण के जीवन पर आधारित संस्कृत में "गर्ग संहिता" नामक ग्रन्थ लिखा था जो सर्व लोकप्रिय है। महर्षि गर्ग मुनि ने ही श्री शंकर का विवाह पार्वती के साथ सम्पन्न करवाया था। यह महाराजा हिमाचल के और पृथ्वी के प्रथम राजा माने जाने वाले पृथु के कुलगुरू व राजगुरु पद से सुशोभित रहे है। ऐसा माना जाता है कि महर्षि महामुनि गर्ग ऋषि आज भी हिमालय की गुफाओं में ध्यानस्थ हैं क्योंकि किसी भी शास्त्र मे इनके देहाँत का प्रसंग नही आता है। प्रतिवर्ष अनवरत महर्षि महामुनि गर्ग ऋषि की भादवा सुदी पंचमी को देशभर में जन्मोत्सव के रूप में मनाया जाता है। श्री कृष्ण भगवान पर इनके द्वारा रचित "गर्ग संहिता" न केवल ज्योतिष पर आधारित शास्त्र है, बल्कि इसमें भगवान श्रीकृष्ण की लीलाओं का भी वर्णन किया गया है। गर्ग संहिता में श्रीकृष्ण चरित्र का विस्तार से निरुपण किया गया है। इस ग्रन्थ में तो यहाँ तक कहा गया है, कि भगवान श्रीकृष्ण और राधा का विवाह हुआ था। गर्ग संहिता में शरीर के अंग लक्षण के आधार पर ज्योतिष फल विवेचन किया गया है।

गर्ग संहिता यदुवंशियों के आचार्य गर्ग मुनि की रचना है। यह संहिता मधुर श्रीकृष्णलीला से परिपूर्ण है। इसमें राधाजी की माधुर्य-भाव वाली लीलाओं का वर्णन है। श्रीमद्भगवद्गीता में जो कुछ सूत्ररूप से कहा गया है, गर्ग-संहिता में उसी का बखान किया गया है। अतः यह भागवतोक्त श्रीकृष्णलीला का महाभाष्य है। भगवान श्रीकृष्ण की पूर्णाता के संबंध में गर्ग ऋषि ने कहा है -

यस्मिन सर्वाणि तेजांसि विलीयन्ते स्वतेजसि।
त वेदान्त परे साक्षात् परिपूर्णं स्वयम्।।

जबकि श्रीमद्भागवत में इस संबंध में महर्षि व्यास ने मात्र कृष्णस्तु भगवान स्वयम् — इतना ही कहा है।

श्रीकृष्ण की मधुरलीला की रचना हुई दिव्य रस के द्वारा उस रस का रास में प्रकाश हुआ है। श्रीमद्भागवत् में उस रास के केवल एक बार का वर्णन पाँच अध्यायों में किया गया है; जबकि इस गर्ग-संहिता में वृन्दावन में, अश्व खण्ड के प्रभाव सम्मिलन के समय और उसी अश्वमेध खण्डके दिग्विजय के अनन्तर लौटते समय तीन बार कई अध्यायों में बड़ा सुन्दर वर्णन है।

इसके माधुर्य खण्ड में विभिन्न गोपियों के पूर्वजन्मों का बड़ा ही सुन्दर वर्णन है और भी बहुत-सी नयी कथाएँ हैं।

यह संहिता भक्तों के लिये परम आदरणीय है; क्योंकि इसमें श्रीमद्भागवत के गूढ़ तत्त्वों का स्पष्ट रूप में उल्लेख है। महर्षि गर्गाचार्य प्रसिद्ध मन्त्रद्रष्टा ऋषि हैं। ऋग्वेद ६।४७ सूक्तके द्रष्टा भगवान् गर्ग ही हैं। इनका प्रसिद्ध आश्रम कुरुक्षेत्रमें देवनदी सरस्वतीके तटपर निर्दिष्ट है। ऐसी प्रसिद्धि है कि इन्होंने यहीं ज्ञान प्राप्त किया और ज्योतिषशास्त्र के ग्रन्थों की रचना की।

गर्गसंहिता-जैसा परम पवित्र ऐतिहासिक ग्रन्थ महर्षि गर्गाचार्यकी ही कृति है। महर्षि गर्ग परम शिवभक्त थे। ये महाराज पृथु व महादेवी पार्वती के पिताश्री राजा हिमाजल के और यदुवंशियोंके गुरु तथा कुलपुरोहित रहे हैं। गोत्रकार ऋषियों में आपकी गणना विशिष्ट रूपमें होती है। हिमालय के नैनीताल नैनी देवी के उद्गम स्थल से प्रचलित कथा के अनुसार महर्षि गर्ग ने अपने आश्रम गर्गाचंल का उल्लेख है जहाँ नैनीताल घाटी पर तीन ऋषि अत्रि, अगस्त्य, व पुलह ऋषि आए थे पूजा पाठ करने पर उन्हे जल नहीं मिला तो महर्षि गर्ग ऋषि ने अपने तपोबल से मानसरोवर से निकाल वहाँ झील मनाई आज भी त्री-रिख यानि तीन ऋषि नाम से प्रसिद्ध है। इसी तरह वर्तमान झारखंड राज्य के बोकारो जिला में कसनार नामक जगह पर उनका आश्रम था जो द्वापर युग में महामुनि महर्षि गर्ग ऋषि की यपोस्थली रहा है जहाँ उन्होंने एक सत्रह एकड़ में सरोवर तालाब कलौंदीबांध बनाया था आज भी मौजूद है। जिसका पौराणिक महत्व बताते हैं कि कलौंदीबांध तालाब का निर्माण द्वापर युग में महर्षि गर्ग के मार्गदर्शन में हुआ था। श्रीकृष्ण जब कंस को मारने निकले तो इसी स्थल पर यज्ञ किया था। जल की कमी को देखते हुए उन्होंने यहाँ तालाब बनवाने का निर्णय लिया। इसका जिम्मा तेलमुंगा के धनी व्यक्ति कलौंदी साव को दिया गया। इन्होंने ग्रामीणों के सहयोग से बड़े तालाब का निर्माण कराया था। उसका नाम कलौंदी बांध तालाब हुआ। कालांतर में कंसमार शब्द का अपभ्रंश कसमार बना तथा गर्ग से गरगा नदी हुआ। बताया यह भी जाता है कि बांध में सोने की कलश में चांदी के सिक्के भरकर एक मुर्गे को तालाब में छोड़ा गया था जो बांध के चारों ओर पानी में तैरता था। उस सोने के कलश को छूने की मनाही थी, अगर कोई छूए तो उसे देवता का कोपभाजन होना पड़ता था। निर्माण के सात दिन तक भारी आंधी-पानी से तालाब का मेढ़ टूट गया। यहीं से गरगा नदी का उद्गम स्थल है जो कसमार व जरीडीह प्रखंड के कई गांवों से गुजरती हुई चास व बोकारो होते हुए लगभग 35 किमी की दूरी तय कर पुपुनकी के पास दामोदर नदी में मिल जाती है।

इसी प्रकार महर्षि गर्ग ऋषि ज्योतिष शास्त्र के साथ ही कई कुलों के कुल गुरू रहे है अपनी प्रखर तपोबल से सबको मार्गदर्शन दिया जिन्हे श्री कृष्ण गृहण करके संपूर्ण प्रजा का पालन किया। आज महामुनि महर्षि गर्ग ऋषि के जन्मोत्सव पर उनकी शिक्षा की बहुत प्रासंगिकता है सभी को हार्दिक शुभकामनाओ सहित।

सुबेदार रावत गर्ग उण्डू
(सहायक उपानिरीक्षक - रक्षा सेवाएँ व
स्वतंत्र लेखक, रचनाकार, साहित्य प्रेमी)
निवास - " श्री हरि विष्णु कृपा भवन "
ग्राम - श्री गर्गवास राजबेरा, तहसील - शिव, जिला - बाड़मेर, पिन-344701 राजस्थान संपर्क सूत्र व्हाट्सएप - 9414942344
ई-में rawatgargundoo@gmail.com

महर्षि गर्ग ऋषि

डिवाइन फैथ फेलोशिप सोसाइटी द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य की पत्रिका

जिन्दगी की जंग और सरकारी महकमा

-इरफान खान

हिंदुस्तान के नक्शे मे उत्तर प्रदेश राज्य के अंतर्गत बहुत प्रसिद्ध एक जिला है जिसका नाम है इलाहाबाद। वहाँ की एक घटना जो आपके मन, मस्तिष्क और हृदय में हलचल उत्पन्न कर देगी।

ये वही जगह है जहाँ से पंडित जवाहर लाल नेहरू और हरिवंशराय बच्चन जैसे व्यक्तियों का संबंध रहा है। जी हाँ वही इलाहाबाद जिसका संशोधित नवीन नाम प्रयागराज हुआ है। जहाँ से पंडित जवाहर लाल नेहरू प्रधानमंत्री बने। इसी सरज़मीं पर अब्दुल बिस्मिल्लाह जैसे उपन्यासकार का जन्म हुआ। यहीं से आधुनिक युग की मीरा महादेवी वर्मा का सम्बंध रहा है। प्रवासी लेखिका उषा प्रियंवदा ने यहीं पर स्थित इलाहाबाद विश्वविद्यालय (अब केंद्रीय विश्वविद्यालय) मे अपनी पढाई पूर्ण की और यहीं अध्यापन कार्य भी किया। इन महान व्यक्तियों के अतिरिक्त भी कई ऐसी जानी-मानी हस्तियां हैं जिनका घरेलू लगाव इलाहाबाद की माटी (मिट्टी) से जुड़ा रहा है। फिर भी मेरी समझ से परे है कि इलाहाबाद की एक तहसील 'बारा' है। जिसके अंतर्गत छोटा सा गाँव 'ललई बारा' है। उस गाँव में विभिन्न धर्मो-समुदायों के लोगों का निवास होने के बावजूद उनकी समस्या को दरकिनार करते हुए सरकारी महकमे और अपने आपको समाजसेवी-वरिष्ठ समाजसेवी कहने वाले कुछ नेता अपनी मस्ती में मदमस्त होकर चूर हैं। वर्ष 2016 की बात है मै एक वित्तीय संस्था (सोनाटा फाइनेंस प्राइवेट लिमिटेड) मे फील्ड ऑफिसर के पद पर कार्यरत था।

यह सौभाग्य था कि मेरा स्थानांतरण कौशाम्बी जिले से मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश की सीमा (बॉर्डर) पर कर दिया गया,और ललई बारा गाँव मेरे ही कार्य क्षेत्र मे आया। सर्वप्रथम गाँव वालों को समझने के लिए अपने नए सहयोगी मित्र मुन्नीलाल यादव के साथ औचक निरीक्षण करने के लिए दो पहिया वाहन से निकल पड़ा। जो उस शाखा मे लगभग तीन या चार माह पहले से ही कार्यरत थे। इसलिए उनको साथ मे ले जाना उचित समझा और वैसे भी वह गाँव मेरे लिए अनभिज्ञ था। मानो हमारे मित्र घोड़े की लगाम को हाथ मे लिए वाहन को हुर्र-हुर्र टक-टक करते हुए आगे बढ़ रहे थे और मैं पीछे बैठकर उस वीरानी जगह का आनन्द लेते हुए चारो तरफ के दृश्य को मोबाईल मे कैद करता रहा,जहाँ मीलों-मील तक पत्थर ही पत्थर की चट्टान दिखाई देती थी। उस गाँव में पहुँचने के बाद हमारे मित्र ने अपने घोड़े (वाहन) को लगाम देकर एक व्यवस्थित स्थान पर रोका। फिर अपने थरमस से पानी निकाल कर दोनों लोग पिये। क्योंकि हमारी संस्था का एक नियम था कि हम लोग फील्ड में किसी के यहाँ कुछ खा-पी नही सकते थे। फिर उन गाँव वालों से मिला और उनकी समस्या से संबंधित वार्तालाप किया। वार्तालाप पूर्ण होने के बाद मित्र ने पुनः अपने घोड़े के लगाम को हाथ में लिया और हुर्र-हुर्र,टक-टक की ध्वनि करते हुए हम शाखा की ओर बढ़े जो लगभग उस गाँव से 30 या 35 किलोमीटर की दूरी रहा होगा। वाहन पर बैठने के उपरांत गाँव वालों के द्वारा बताई गई बातों ने मेरे आंतरिक मन मे एक हलचल की तरंग उत्पन्न करदी। लेकिन पूर्ण रूप से मुझे विश्वास नही हो रहा था,की वे सच बोल रहे हैं। उसके पीछे का कारण मेरा वित्तीय संस्था मे कार्य करना था। जो मुझे विश्वास न करने पर बाध्य कर रहा था और मेरा कार्य लोन वितरण करना था। ऐसे में बगैर जाने बूझे एक मूठ धनराशि कैसे दे सकता था। हो सकता है वो धनराशि पाने के लिए झूठ बोल रहें हों या फिर नया फील्ड ऑफिसर समझ कर मनगढंत कहानी सुना रहें हों। लेकिन वास्तविकता कुछ और निकली। सच-मुच् वे समस्या की चार दीवारी से घिरे हुए थे। झुग्गी बनाकर रहते थे। रूखा- सूखा भोजन करते थे। पथरीली जमीन की चिलचिलाती धूप मे नंगे पांव मीलों-मील जाकर पीने का पानी लाते थे। न तो रोजगार के अवसर न कोई स्वरोजगार का साधन। था भी तो सिर्फ पत्थर काटना। उसके अतिरिक्त कोई अन्य साधन नही था जीवन यापन करने का। जिसमें वे अपने साथ छोटे-छोटे बच्चों को भी लेकर जाते थे। जो मेरे दृष्टिकोण से बाल मजदूरी को बढ़ावा देना था। जहाँ बच्चे भी भूखे-प्यासे रहकर अपने माता-पिता का सहयोग किया करते थे। जिस बच्चे की उम्र खेलने-कूदने की थी लेकिन वो बच्चा बाल मजदूरी की ओर प्रेरित होता दिख रहा था। जो एक घोर अन्याय था। उस अन्याय मे बच्चे का शैक्षिक, शारीरिक, बौद्धिक दमन आदि को बढ़ावा दिया जा रहा था। उनके जीवन यापन करने का माध्यम सिर्फ पत्थर ही काटना था और आज भी पत्थर ही काटना है। सब कुछ जानने के बाद भी सरकारी महकमे के आला अधिकारी पत्थर की कटाई को रुकवा देते हैं। फिर भी वहाँ के लोगों द्वारा चोरी-छिप्पे पत्थर की कटाई की जाती है। जिससे उनके जीवन यापन की अग्रिम प्रक्रिया आगे बढ़ती है।

सब कुछ जानने के बाद भी आला अधिकारी अंजान क्यों बने हैं, आख़िर क्यों? ये बात मेरी समझ से ऊपर है, वहाँ के लोगों का शिक्षा का स्तर गिरा हुआ है, उनके बच्चों के लिए विद्यालय खुलवाना चाहिए। शिक्षा संबंधित कार्यक्रम का आयोजन किया जाना चाहिए।

जिससे वे साक्षर बन सके। स्वास्थ्य संबंधित उपचार के लिए उचित व्यवस्था नही है।अगर है भी तो झोला-छाप डॉक्टरों का समूह जिसे हम अन्धों मे काना राजा कह सकते हैं। जो मनमानी ढंग से वहाँ के गरीब बेचारों को मूर्ख बनाकर अपनी झोली भरते हैं।आवागमन के लिए ऊबड़-खाबड़ गड्ढे युक्त सड़क मार्ग है। जिसे देखने पर पता ही नही चल पाता कि सड़क मे गड्ढे हैं या फिर गड्ढे मे सड़क है। रोजगार का कोई स्थाई साधन नही है जिनसे उनका जीवन दूभर है। सबसे बड़ी समस्या मुझे जो दिखी वो है पानी की समस्या जो मीलों-मील दूर जाकर पानी लाते थे। यहाँ तक कि मुझे देखने को यह भी मिला जिससे मेरा हृदय द्रवित और आंख में पानी (आँसू) भर आया।जब वे कपड़े धुलते थे तो कपड़ा धुला हुआ साबुन युक्त दूषित पानी को किसी बर्तन में एकत्रित किया करते थे। पूछने पर यह पता चला कि साहब ये पानी हम अपने जानवरों (पशुओं) को पिलाने के लिए रख रहे हैं। घर परिवार वालों को तो स्वच्छ पानी मिलना दूभर है तो उनको स्वच्छ पानी कहाँ से पिलाएंगे?

गाँव वालों के शब्दों मे साहेब ई पानी तो हम अपने जनावर के पियावय बरे रखत हई, हियाँ हमहिन के पानी नाही मिलत बा पियै बरे तौ उनके बरे कहाँ से मिली। इतनी बड़ी गंभीर समस्या से जूझते हुए वहाँ के लोग रहने को मजबूर हैं। वैसे भी हर एक को अपनी मिट्टी से लगाव होता है। फिर भी हमारी सरकारी महकमे उनकी समस्या का समाधान करने के बजाय, उनसे दूरी बनाना ही उचित समझती है।दो सप्ताह बाद पुनः मैं उस गाँव में फील्ड ऑफिसर के रुप में गया। उनकी समस्या और उनसे भली-भांति अवगत होने के बाद उनकी क्षमता के हिसाब से स्वरोजगार उत्पन्न करने के लिए अपनी संस्था से स्वीकृति प्राप्त करने के उपरांत धनराशि संस्था के शब्दों में (माइक्रो लोन) उपलब्ध करवाया। जो- लगभग नौ हजार नब्बे से लेकर अट्ठाईस हजार रुपए तक था। लेकिन थोड़ी बहुत धनराशि से उनका बेड़ा कहाँ पार होने वाला? जब तक सरकारी महकमे के द्वारा उचित लाभ उन बेचारो तक न पहुँचाया जाएगा न जाने कब से वो बेबस और लाचार होकर इतनी दुरूह की जिंदगी जीने को मजबूर हैं। कहने को तो बहुत सी सरकारें आयी, एन.जी.ओ की भरमार रही सभी झूठ-मूठ की ताली बजवाकर अपने मुँह मियां मिट्ठू बनकर आगे निकल गए। जिस तरह से वर्तमान सरकार जिला इलाहाबाद का नाम बदलकर प्रयागराज रखकर ख़ुशी का इज़हार कर रही है। उसी तरह से अगर सरकार ललई बारा गाँव की तरफ अपना ध्यान केंद्रित करके दृढ़ संकल्प होकर उन बेचारों की समस्या का समाधान करे तो जिले का नाम बदलने की अपेक्षा ज्यादा ख़ुशी का अर्जन किया जा सकता है। लेकिन दुर्भाग्य है उन बेचारों का कि आज भी सरकार और उनकी सरकारी महकमे के आला अधिकारी उनकी तरफ ध्यान केंद्रित नही कर रहे हैं। और आज भी संकट भरी जिंदगी से निज़ात (छुटकारा) पाने के लिए उनकी जंग जारी है।..................

इरफान खान
(हिंदी विभाग)
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
गच्चीबौल, हैदराबाद,तेलंगाना-500032
जवाहर नवोदय विद्यालय सांगेली
सिंधुदुर्ग,महाराष्ट्र-416531
संपर्क सूत्र-8739078134/8447344689
ईमेल-kirfan94ik019@gmail.com

www.epradeep.com ई - प्रदीप अंक : 01 वर्ष : 01 जनवरी-मार्च 2021

साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऑनलाइन त्रैमासिक - पत्रिका

गद्य साहित्य की सशक्त विधा-निबन्ध

-डॉ. रामस्वरूप

गद्य लेखन में निबन्ध को एक सशक्त, स्वतन्त्र एवं सर्वश्रेष्ठ विधा के रूप में अपनाया गया है। किसी विषय पर अपने मानसिक भावों या पूर्ण विचारों को संक्षिप्त रूप से तथा नियंत्रित ढंग से लिखना निबन्ध कहलाता है। इसमें लेखक अपने विचारों का प्रतिपदान युक्तिपूर्वक एवं तर्क संगत ढंग से करता है। 'निबन्ध व्यक्ति की मानसिक चेतना और भावात्मक अनुभूति का लिखित रूप है और जन-विकास का यथार्थ पत्रक भी। निबन्ध किसी देश की जनसत्तात्मकता, विचार स्वातन्त्र्य और उदार सामाजिकता का लेखा है।'[1] निबन्ध गद्य साहित्य की एक चिंतन प्रधान विधा है, इसमें लेखक किसी विषय पर अपने निजी विचारों का प्रतिपादन साहित्यिक शैली में करता है। निबन्ध व्यक्ति और समाज की मानसिक चेतना और भावानुभूति की निर्बाद्ध अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है। आचार्य वामन की उक्ति है - गद्यं कवीनां निकषं वदन्दि2 (काव्यालंकार सूत्र वृति-वामन प्रथम अधिकरण) इस आधार पर आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने निबन्ध के विषय में कहा है - 'यदि गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है तो निबन्ध गद्य की कसौटी है। भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास निबन्धों में ही सबसे अधिक संभव होता है।'[2] भावों और विचारों को एक सूत्र में बांधकर सुसम्बद्ध रूप में प्रस्तुत करना निबन्ध कला का वैशिष्ट्य माना जाता है। निबन्ध में लेखक अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व, निजीपन, अपने दृष्टिकोण का प्रतिपादन निजी ढंग से करते हुए अपने व्यक्तित्व का प्रभाव पाठकों पर अंकित कर सकता है। 'लेखक और पाठक के बीच निबन्ध सबसे छोटा, सरल और सीधा राजपथ है। निबन्ध लेखक एक साथी के समान पाठक के सामने हृदय खोलकर रखता है और पाठक सीधे और सही रूप में लेखक से परिचय पाता है।'[3]

निबन्धगद्य को अधिक से अधिक प्राणवान बनाता है तथा गद्य साहित्य के विकास का द्योतक है। पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों के अनुसार निबन्ध की परिभाषा इस प्रकार है-

ऑक्सफोर्ड शब्दकोश के अनुसार - निबंध की आवृति सीमित और परिष्कृत होती है। (Eassy A Herary composition casually prose and short on any subject) मोनतैड्. के शब्दों में - निबन्ध विचारों, उद्धरणों और कथाओं का मिश्रण है। (Essay is a modley of reflection, quotation and anecdotes-montagne) जॉनसन ने निबन्ध को मन का आकस्मिक और उच्छशृंखल आवेग असम्बद्ध और चिन्तनहीन बुद्धि-विलास बताया है। (A loose sally of mind and irregular undigested piece not a regular and orderly performance - Johnson)

बाबू गुलाबराय के अनुसार - 'निबन्ध उस गद्य रचना को कहते हैं जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छन्दता, सौष्ठव और सजीवता तथा आवश्यक संगति और सम्बद्धता के साथ किया गया है।'[4] डॉ. भगीरथ मिश्र के शब्दों में 'निबन्ध वह गद्य रचना है जिसमें लेखक किसी भी विषय पर स्वच्छन्दापूवर्क परन्तु एक विशेष सौष्ठव, संहिति, सजीवता और वैयक्तिकता के साथ अपने भावों, विचारों और अनुभवों को व्यक्त करता है।'[5] डॉ. जयनाथ 'नलिन' के अनुसार - 'किसी विषय पर स्वाधीन चिंतन और निश्चल अनुभूतियों को सरस, सजीव और मर्यादित गद्यात्मक प्रकाशन ही निबन्ध है। **निबन्ध गद्य काव्य** की वह मर्यादित विधा है जिसमें लेखक के स्वाधीन चिंतन और निश्चल अनुभूतियों की सरस, सजीव अभिव्यक्ति हो।'[6] 'निबन्ध वह छोटी, ललित गद्य-रचना है, जिसमें विषय-प्रतिपन्नता के साथ हृदय का विचरण हो।'[7] डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा के अनुसार 'तर्क और पूर्णता का अधिक विचार न रखने वाला गद्य रचना का वह प्रकार निबन्ध कहलाता है, जिसमें किसी विषय अथवा विषयांश का लघु विस्तार में स्वछंदता एवं आत्मीयतापूर्ण ढंग से ऐसा कथन हो, उसमें लेखक का व्यक्तित्व झलक उठे।'[8] उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि निबन्ध में मुख्यतः निबन्धकार का व्यक्तित्व प्रमुख होता है तथा उसमें हृदय और बुद्धि का उचित समन्वय आवश्यक है। निबन्ध में व्यक्ति के स्वतंत्र मानसिक चिंतन और निश्छल अनुभूतियों का गद्यात्मक चित्रण होता है। इसमें निबन्धकार किसी विषय पर अपने निजी विचार और भावनाओं को खुलकर बिना किसी प्रतिबन्ध के प्रस्तुत करता है।

'निबन्ध गद्य साहित्य की एक सशक्त विधा हैं, मिशेल द मोनतैड्. इस विधा के जनक माने जाते हैं।'[9] मोनतैड्. ने अपनी रचनाओं में 'ऐसे'(Assais) की संज्ञा प्रदान की तथा अंग्रेजी में निबन्ध के लिए 'ऐसे'(Essay) नाम स्वीकृत हुआ। 'अंग्रेजी भाषा में निबन्ध का जन्म ईसा की सोलहवीं शताब्दी के उतरार्द्ध में हुआ माना जाता है। मोनतैड्. के पश्चात् अंग्रेजी में बेकन के निबन्ध प्रकाशित हुए, जिन्हें अंग्रेजी निबन्ध के प्रवर्तक भी माने

जाते हैं।'[10] इनके पश्चात् जॉन अर्ल, जौसेफ एडीसन, ऑलिवर, गोल्ड स्मिथ, चार्ल्स लैम्ब, विलियम हैजलेट, मैथ्यु अर्नाल्ड, टॉमस हैनरी, हक्सले, बर्ट्रैण्ड रसल आदि प्रमुख पाश्चात्य निबंधकार हुए है।

'भारतेन्दुजी के समय से ही निबन्धों की परम्परा हमारी भाषा में चल पड़ी थी।.... इस उत्थान काल के आरम्भ में ही निबन्ध का रास्ता दिखाने वाले दो अनुवाद ग्रंथ प्रकाशित हुए- 'बेकन विचार - रत्नावली (अंग्रेजी के बहुत पुराने तथा पहले निबन्ध लेखक लार्ड बेकन के कुछ निबन्धों का अनुवाद) और 'निबन्धमालादर्श' (चिपलूणकर के मराठी निबन्धों का अनुवाद)।'[11]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अलावा बाबू गुलाबराय, जगन्नाथ प्रसाद शर्मा, विजयशंकर मल्ल आदि विद्वानों ने भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को ही हिन्दी निबन्ध का जनक, प्रवर्तक या सूत्रकर्ता माना है। डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने बालकृष्ण भट्ट को हिन्दी का प्रथम निबन्ध लेखक माना है। गणपतिचन्द्र गुप्त के अनुसार राजा शिव प्रसाद सितारे 'हिन्द' के राजा भोज का सपना-1839 ई0 से निबन्ध का सूत्रपात हो गया था।

हिन्दी के अधिकांश विद्वानों के अनुसार - हिन्दी गद्य निबन्ध के जनक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र माने जाते हैं वहीं यूरोप में मोनतैड्. को व अंग्रेजी साहित्य में बेकन को प्रथम निबंध लेखक माना गया है।

डॉ. जयनाथ 'नलिन' की परिभाषा एवं विचारों के आधार पर हिन्दी निबन्ध की विशेषताएँ इस प्रकार निर्धारित की जा सकती है-[12]

1. स्वाधीन चिंतन
2. निश्चल अनुभूति
3. सरसता
4. सजीवता और
5. मर्यादा।

विवेचन पद्धति, भाषा शैली, वस्तु विषय, आदि की दृष्टि से निबन्ध के कई प्रकार निश्चित किये गये हैं। मुख्यतः लेखक को प्रमुख मानकर निबन्ध को व्यक्ति प्रधान तथा विषय को प्रधान मानकर विषय प्रधान निबन्ध को दो भागों में बांटा गया है। आचार्य शुक्ल के अनुसार 'निबन्ध या गद्यविधान कई प्रकार के हो सकते हैं- विचारात्मक, भावात्मक, वर्णानात्मक।'[13]

व्यक्ति प्रधान निबन्ध के अन्तर्गत डॉ. जयनाथ 'नलिन' ने दो भाग बताये हैं- चिंतन और अनुभूति: मस्तिष्क और हृदय। मस्तिष्क की प्रधानता वाले विचारात्मक और हृदय की प्रधानता वाले भावात्मक।[14] आचार्य शुक्ल के अनुसार - विचारात्मक निबन्धों में व्यास और समास की रीति, भावात्मक निबन्धों में धारा, तरंग और विक्षेप की रीति।[15] प्रो. विजेन्द्र स्नातक के अनुसार भी विचारात्मक निबन्ध (आत्मनिष्ठ), वर्णनात्मक निबन्ध (वस्तुनिष्ठ) एवं भावात्मक निबन्ध (आत्मनिष्ठ ललित निबंध)[16] डॉ. सत्येन्द्र का मत है कि - 'निबन्ध का जब से आरम्भ हुआ है तभी से निबन्धों के दो स्वरूप मिलते हैं- एक तो मॉनटेन की शैली वाले, दूसरे बेकन की शैली वाले। यह भी देख चुके हैं कि मॉनटेन की शैली वाले निबन्धों में विनोदात्मकता अथवा मन को बहक या मौज खूब मिलती है। खुलकर बिना किसी प्रतिबन्द्ध के एक गहन (Deep) योजनापूर्वक किसी विषय पर जो सूझ पड़ता है, उसको ही अभिव्यक्त करने की प्रेरणा मॉनटेन ने दी।...... बेकन ने जो निबन्ध लिखे उनमें गंभीर तात्विक अनुभूति और विचारों का समावेश किया। उनके वाक्य सधे हुए थे और सूत्र रूप में होते थे। सूत्रों की जैसी समासशैली ने उनके निबन्धों को और गंभीर बना दिया।'[17] हिन्दी निबन्धकार डॉ. जयनाथ 'नलिन' ने निबन्ध को दो वर्गों में बांटा है- निजात्मक (Subjective) और परात्मक (Objective)। उन्होंने निजात्मक निबन्ध के तीन प्रकार बताये है- 1. विचारात्मक 2. भावात्मक और 3 आत्मपरक या वैयक्तिक तथा परात्मक निबन्ध के दो प्रकार 1. वर्णनात्मक और 2. विवरणात्मक मानें हैं।'[18] बाबू गुलाबराय ने निबन्धों को चार विभागों में बांटा है- वर्णनात्मक, विवरणात्मक, विचारात्मक और भावात्मक। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में 'व्यक्तिगत निबन्ध का लेखक किसी एक विषय को छेड़ता है, किन्तु जिस प्रकार वीणा को एक तार छेड़ने से बाकी सभी तार स्वयं झंकृत हो उठते हैं, उसी प्रकार उस विषय को छूते ही लेखक की चित्त-भूमि पर बँधे हुए सैकड़ों विचार बज उठते हैं।'[19] वहीं डॉ. कृष्ण बिहारी मिश्र ने व्यक्तिव्यंजक (व्यक्ति प्रधान) निबन्ध को 'गद्य की निहायत आत्मीय और रम्य विधा' माना है।'[20] यह व्यक्ति के स्वाधीन चिंतन की उपज है।

विषयव्यंजक (विषय प्रधान) निबन्धों में निबन्धकार के स्वाधीन चिंतन और भावुकता का समावेश होता है।

यद्यपि निबन्ध के अनेक प्रकार है तथा इन्हें अनेक भागों में विभक्त किया जा सकता है। निबन्धों की विवेचना, भाषा-

शैली, विषय-वस्तु, विचार, भाव, अनुभूति, संवेदना आदि के आधार पर सामान्य मौटे तौर पर निबन्धों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है-

विचारात्मक निबन्ध '

जिन निबन्धों में बुद्धि की प्रधानता हो, विचारों का अधिकार अन्य तत्वों पर हो,वे विचारात्मक निबन्ध कहलाते हैं।'[21] इस प्रकार के निबन्धों में भावना और कल्पना का संयोग नहीं होता है।

इसलिए इस प्रकार के निबन्ध निरस व रुखे होते हैं। आचार्य शुक्ल के अनुसार 'शुद्ध विचारात्मक निबन्धों का चरम उत्कर्ष वही कहा जा सकता है जहाँ एक-एक पैराग्राफ में विचार दबाकर कसे गये हों और एक-एक वाक्य किसी सम्बद्ध विचार-खण्ड को लिए हों।'[22] राजनीति, समाज, संस्कृति, परम्परा, नैतिक आदर्श, रस, भाव आदि को आधार बनाकर विचारात्मक निबन्ध अधिक लिखे गये हैं- हिन्दी निबन्ध के विद्वान आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और जैनेन्द्र के सर्वाधिक निबन्ध इस श्रेणी के है। चिंतामणि में संगृहीत - श्रद्धा और भक्ति, लोभ और प्रीति, घृणा, ईर्ष्या, जैनेन्द्र के जड़ की बात, पूर्वोदय, सोच-विचार, वासुदेव शरण अग्रवाल के पृथ्वीपुत्र, कला और संस्कृति, डॉ. भगीरथ मिश्र का अध्ययन, साहित्य

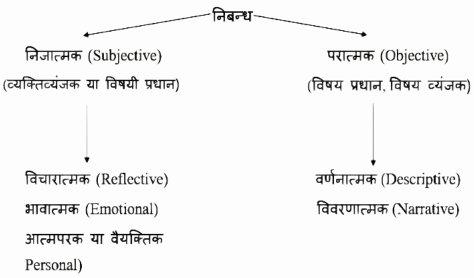

साधना और समाज, अज्ञेय जी का त्रिशंकु, आत्मनेपद, अद्यतन, सर्जना और सन्दर्भ, डॉ. रामविलास शर्मा के साहित्य और संस्कृति, भाषा-साहित्य और संस्कृति, विरामचिह्न, लोक जीवन और साहित्य, डॉ. नगेन्द्र का विचार और अनुभूति, आस्था के चरण, नामवर सिंह का बकलम खुद, विष्णुकांत शास्त्री का चिन्तन मुद्रा और अनुचिंतन, निर्मल वर्मा का शब्द और स्मृति आदि हिन्दी गद्य के उच्च-कोटि के विचारात्मक निबंध है।

भावात्मक निबन्ध-

इस श्रेणी के निबन्धों के हृदय की प्रधानता होती है। हृदय की उदात्त अनुभूति, तीव्र भावनाएँ और भावुकता का चरम इस प्रकार के निबन्धों में देखने को मिलता है। भावात्मक निबन्ध एक प्रकार से एक भावुक स्वस्थ हृदय का आत्म निवेदन है। 'भावात्मक निबन्धों में लेखक की शैली में भावुकता अधिक होती है। वैसे विचारात्मक एवं भावात्मक दोनों में ही विचार और भावना का अंश किसी न किसी रूप में अवश्य होता है, किंतु एक में बौद्धिकता अधिक होती है, जबकि दूसरे में इसकी हार्दिकता को प्रमुखता दी जाती है।'[23] 'बुद्धि व तर्क का स्थान ऐसी रचनाओं में कम ही रहता है, किन्तु भावात्मक शैली केवल भाषा का स्वच्छंद रूप ही नहीं है बल्कि एक भावुक हृदय का आत्मनिवेदन है।'[24] जयशंकरप्रसाद का आकाशदीप, स्वर्ग के खण्डहर, आचार्य चतुरसैन शास्त्री का अन्तस्तल, राधाकृष्णदास का साधना, प्रवाल वियोगी हरि का अन्तर्नाद, भावना, प्रेमयोग, सरदार पूर्णसिंह का पवित्रता, आचरण की सभ्यता, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी का कछुआ धर्म, माधवप्रसाद मिश्र का रामलीला, परीक्षा आदि भावात्मक निबन्धों के अच्छे नमूने माने जा सकते हैं।

आत्मपरक-

आत्मपरक या वैयक्तिक वे निबन्ध माने जाते हैं, जिन्हें भावात्मक या विचारात्मक की परिधि में नहीं बाँधा जा सके। ऐसे निबन्ध बहुत कम लिखे गये हैं। इसके सन्दर्भ में हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का कथन उचित ही प्रतीत होता है कि 'निबन्ध मात्र अन्य सभी रचना प्रकारों की अपेक्षा व्यक्ति व्यंजक होता ही है, निबन्ध में भी विषय-प्रधान निबन्ध विषयी-प्रधान की अपेक्षा अल्प वैयक्तिक होते हैं।'[25]

मानवीय संवेदनात्मकता, जीवन की वैयक्तिक अभिव्यक्ति एवं सहृदयता इन निबन्धों की विशेषता होती है। ग्लानि-संताप, आलोक-अहंकार, सफलता-असफलता, भाव-अभाव, विवशता-बैचेनी आदि भौतिक परिस्थितियों को विषय बनाकर इस श्रेणी के निबन्ध लिखे गये हैं। इस प्रकार के निबन्धों में कला और कृत्रिमता का आभास अधिक और यथार्थ का समावेश बहुत म होता है। शांतिप्रिय द्विवेदी का 'पंथ चिह्न' निबन्ध संग्रह, महादेवी वर्मा के स्मृति की रेखाएं और अतीत के चलचित्र, आत्मपरक शैली की निबन्ध रचना है।

वर्णनात्मक निबन्ध

इस श्रेणी के निबन्धों में विचार, अनुभूति और कल्पना के द्वारा वर्णन (निबन्ध की विषय वस्तु) को जीवन्त, मोहक, आकर्षक और रसपूर्ण बनाया जाता है। वर्णनात्मक निबन्धों में कल्पना तत्व की प्रधानता होती है। किसी वस्तु, दृश्य या स्थान आदि का वर्णन कल्पना शक्ति के माध्यम से सजीव और आकर्षक ढंग से किया

जा सकता है। प्राकृतिक सौन्दर्य, भूगोल, मौसम-ऋतु, मेले-त्योहार आदि विषयों पर वर्णनात्मक निबन्ध लिखे जाते हैं। जयशंकर प्रसाद के 'इन्दु' में सम्पादित निबन्ध, बालकृष्ण भट्ट का मेला ठेला, दरिद्र की गृहस्थी आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का महाकवि माघ का प्रभात वर्णन, माधव प्रसाद मिश्र का रामलीला रवीन्द्रनाथ त्यागी का ऋतु वर्णन, शोक सभा आदि वर्णनात्मक निबन्ध की श्रेणी के श्रेष्ठ निबन्ध माने जाते हैं।

विवरणात्मक निबन्ध

विवरणात्मक निबन्धों में किसी घटना या वृतान्त का वर्णन किया जाता है। इस प्रकार के निबन्धों में भी व्यक्तित्व की

अपेक्षा कल्पना और अनुभूति का संयोग अधिक रहता है। प्रसाद शैली की प्रधानता होने के साथ-साथ 'घटनाओं का तारतम्य रखने और पाठक, की पुतलियों में उनका स्थायी प्रभाव स्थापित करने के लिए चुनाव की समझ-बुद्धि भी चाहिए। इसमें लेखक का कौशल खिलने और निखरने के लिए पर्याप्त स्थान रहता है। इसमें रचयिता को अपना व्यक्तित्व भी अधिक सशक्त और प्रभावशाली रूप में लाना पड़ेगा, तभी पाठक को अधिक रस प्राप्त होगा।'[26] यात्राएं, युद्ध, जीवनी, नये राष्ट्र की खोज, पर्वतारोहण, इतिहास एवं कल्पना की कथाएँ आदि विषयों पर विवरणात्मक निबन्ध लिखे गये हैं। इनमें भारतेन्दू हरिश्चन्द्र का अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न, शिवप्रसाद सिताऐ 'हिन्द' का राजा भोज का सपना, बालकृष्ण भट्ट का अनोखा स्वप्न, एक अशरफी की आत्मकहानी, राधाचरण गोस्वामी का 'यमपुर की यात्रा' महावीर प्रसाद द्विवेदी का हंस संदेश, वासुदेव शरण अग्रवाल के चित्राचार्य अवनीन्द्रनाथ, नन्दलाल और यामिनीराय, साहित्य-सदन की यात्रा आदि इस श्रेणी के उल्लेखनीय निबन्ध है। इनके अलावा राहुल सांकृत्यायन, श्रीराम शर्मा, के निबन्धों में भी विवरणात्मक संस्पर्श दिखाई देता है।

निबन्ध की एक अन्य शैली या प्रकार के रूप में ललित निबन्धों की भी गद्य साहित्य में महत्ती भूमिका है। इस श्रेणी के निबन्धों में भावात्मक और विचारात्मक अभिव्यक्ति होती है। कहानी सी रोचकता एवं निबन्ध की गंभीरता का एक प्रकार से मिला जुला रूप होता है। इस प्रकार के निबन्धों की शैली का रचनातंत्र सरल, सरस और सजीव होता है। स्वच्छदंता से भाषा सजी-संवरी होती है जो पाठकों को अपनी ओर आकृष्ट करती है। एक प्रकार से रागात्मकता, भावुकता, चित्रात्मकता, फ़ैंटेसी, कल्पना और व्यंग्य-विनोद का मिश्रित रूप ललित निबन्ध कहलाते हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, विद्यानिवास मिश्र, रामवृक्ष बेनीपुरी, कुबेरनाथ राय, रामदरश मिश्र, शिवप्रसाद सिंह आदि उच्चकोटि के ललित निबन्धकार हैं।आधुनिक साहित्य में निबन्धों का अपना स्वतन्त्र महत्त्व एवं स्थान है। निबन्ध विधा में उत्तरोत्तर निखार आ रहा है तथा नये-नये रूपों एवं शैलियों का आविष्कार हो रहा है। जगदीश नारायण चौबे के शब्दों में 'निबन्ध विचारों की सुनियोजित अभिव्यक्ति है, इसलिए उसमें कसाव होगा, ढीलापन नहीं। आकस्मिक, लेकिन निरन्तर प्रवाह निबन्ध के लिए अनिवार्य है। फ्रैंसिस बेकन अथवा आचार्य शुक्ल के निबन्ध इसके प्रमाण है।'[27] इस प्रकार निबन्ध एक गद्य साहित्य की सशक्त एवं महत्त्वपूर्ण साहित्यिक विधा है, जिसका उपयोग आधुनिक युग में विषय-प्रतिपादन,वस्तु—वर्णन, स्वच्छंद -कथन अथवा आत्माभिव्यंजना के लिए होता है। गद्य-साहित्य की निबंध ही एकमात्र ऐसी विधा है जिसमें मानव के स्वाधीन मानसिक चिंतन और निश्छल अनुभूतियों को प्रोत्साहन मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. हिन्दी निबन्धकार - प्रो. जयनाथ 'नलिन' पृ. सं. 1
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास-आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ. सं. 391
3. हिन्दी निबन्धकार - प्रो. जयनाथ 'नलिन' , पृ. सं. 1
4. काव्य के रूप - बाबू गुलाबराय, पृ. सं. 236
5. काव्यशास्त्र - डॉ. भगीरथ मिश्र, पृ. सं. 75
6. हिन्दी निबन्धकार - प्रो. जयनाथ 'नलिन', पृ. सं. 10
7. प्रतिनिधि हिन्दी निबन्धकार - विभुराम मिश्र, ज्योतीश्वर मिश्र, पृ. सं. 11
8. आदर्श निबन्ध - डॉ. जगन्नाथ शर्मा, पृ. सं. 9
9. हिन्दी निबन्धकार - प्रो. जयनाथ 'नलिन', पृ. सं. 44
10. उपरिवत् - पृ. सं. 48

11. हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ. सं. 393
12. हिन्दी निबन्धकार - प्रो. जयनाथ 'नलिन'
13. हिन्दी साहित्य का इतिहास-आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ. सं. 392
14. हिन्दी निबन्धकार - प्रो. जयनाथ 'नलिन', पृ. सं. 16
15. हिन्दी साहित्य का इतिहास-आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ. सं. 392
16. हिन्दी निबन्धकार एक अध्ययन - डॉ. पूनम कुमारी, पृ. सं: 18
17. निबंध- निलय - डॉ. सत्येन्द्र, पृ. सं. 36-37
18. हिन्दी निबन्धकार - प्रो. जयनाथ 'नलिन', पृ. सं. 18
19. अराजक उल्लास - डॉ. कृष्ण बिहारी मिश्र, पृ. सं. 09
20. उपरिवत् - पृ. सं. 07
21. हिन्दी निबन्धकार - प्रो. जयनाथ 'नलिन', पृष्ठ संख्या: 21
22. उपरिवत् - पृष्ठ संख्या: 22
23. साहित्यिक निबन्ध - गणपतिचन्द्र गुप्त, पृ. सं. 442
24. ललित निबन्ध - डॉ. संगीता सारस्वत, पृ. सं. 11
25. साहित्य का साथी - हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ. सं. 126
26. हिन्दी निबन्धकार - प्रो. जयनाथ 'नलिन', पृ. सं. 20-21
27. गोधूलि - जगदीश नारायण चौबे, पृ. सं. 84

डॉ. रामस्वरूप
विष्णु विहार, पहाड़गंज द्वितीय
मण्डोर रोड़, जोधपुर
दूरभाष - 9782005752
ई मेल—
ramswaroopjhnwar@gmail.com

शिक्षा का उच्चतम परिणाम सहनशीलता है। -हेलेन केलर

पुस्तक: नरेन्द्र कोहली के कृष्णपरक उपन्यासों में जीवन-मूल्य

यह पुस्तक अमेज़ोन एवं फिलिप्कार्ट पर उपलब्ध है। आप अपनी प्रति

अमेज़ोन:

https://www.amazon.in/Narendra-Krishanparak-Upanyaso-Jeevan-Mulya/dp/9386336006

एवं फिलिप्कार्ट से

https://www.flipkart.com/dr-narendra-kohali-ke-krishnaparak-upanyason-mein-jeevan-moolya/p/itmfb5furyxe8cmx?pid=9789386336002 से उक्त लिंक द्वारा प्राप्त कर सकते हैं।

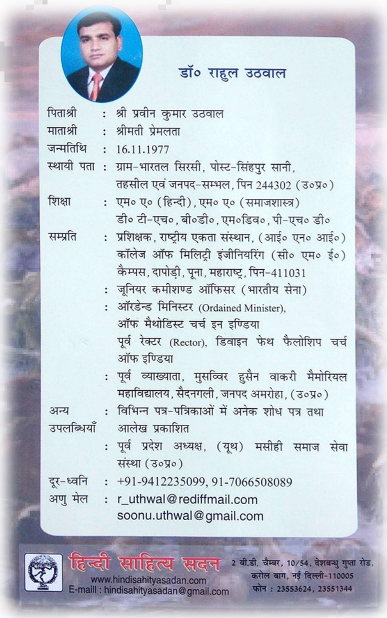

सभी पाठकों को सूचित किया जाता है कि यू जी सी केयर लिस्टेड समीचीन पत्रिका का शोध - मीमाँसा विशेषांक जनवरी - मार्च 2021 प्रकाशित हो चुका

ISSN-2250-2335

समीचीन

(साहित्य-समाज-संस्कृति और राजनीति के खुले मंच की अर्द्ध वार्षिक-अव्यावसायिक पत्रिका)

पीयर रिव्यूड व यू. जी. सी. केयर लिस्ट में सम्मिलित जर्नल

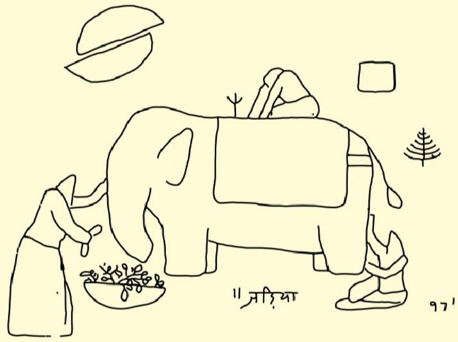

शोध-मीमांसा विशेषांक

26

वर्ष - 14 ■ अंक - 26 ■ जनवरी-मार्च - 2021 ■ पूर्णांक 64 ■ मूल्य ५० रुपए
■ प्रधान संपादक - देवेश ठाकुर ■ संपादक - डॉ. सतीश पांडेय

आप समीचीन के वैब पेज sameecheen.com पर जाकर इसे पढ़ सकते हैं अथवा डाउनलोड कर सकते हैं। आशा है कि यह अंक भी हमेशा की तरह सभी पाठकों का ज्ञान वर्धन करेगा।

देवेश ठाकुर रचनावली

(16 खंडों में)

(द्वितीय संस्करण)

मूल्य : 16,500/-

नमन प्रकाशन
4231/1, अंसारी रोड,
दरियागंज, नई दिल्ली - 110002